पं. सन्तलालजी कृत

श्री सिद्धचक्र विधान

प्रकाशक
धर्मोदय साहित्य प्रकाशन
बाहुबली कॉलोनी, सागर

- **कृति** : श्री सिद्धचक्र विधान
- **रचयिता** : पं. सन्तलाल
- **संस्करण** : द्वितीय, सितम्बर, 2013
- **आवृत्ति** : 1100 प्रतियाँ
- **मूल्य** : 75/-
- **प्राप्ति स्थान** : धर्मोदय साहित्य प्रकाशन
  बाहुबली कॉलोनी, सागर
  94249-51771

अनुक्रम

मंगलाष्टक	4	विधान के अर्घ्य	38
विनय पाठ	6	प्रथम पूजा	40
पूजा पीठिका	8	द्वितीय पूजा	46
समुच्चय पूजा	12	तृतीय पूजा	52
विनायक सिद्धयन्त्र पूजा (हिन्दी)	16	चतुर्थ पूजा	60
नन्दीश्वरद्वीप पूजा	21	पंचम पूजा	72
सरस्वतीपूजा	25	षष्ठ पूजा	94
श्री विद्यासागर पूजा	27	सप्तम पूजा	134
अर्घावली	31	अष्टम पूजा	203
सिद्धचक्र विधान	36		

दो शब्द

जो संसार से छूट गये हैं, जिन्होंने कर्मों को नाशकर सिद्धत्व को प्राप्त कर लिया है, ऐसे आराध्य सिद्ध भगवान् की जो गृहस्थ निष्ठा पूर्वक पूजा करता है, वह लोकपाल बनता है, लोकपाल का एक भेद कुबेर है। प्रथम स्वर्ग का कुबेर एकभवातारी होता है। अर्थात् सिद्ध पूजा भव का अंत कराने वाली है।

आठ दिवसीय विधानों का अगर कोई राजा है तो वह है सिद्धचक्र विधान।18-19 वीं शताब्दी में भट्टारक शुभचन्द्र द्वारा संस्कृत भाषामय सिद्धचक्र विधान की रचना हुई। 1934 ई. में सहारनपुर निवासी पं. संतलाल कवि ने परम उपकार कर संस्कृत के सिद्धचक्र विधान को हिन्दी में रूपान्तरित कर दिया। विद्वानों ने इस विधान को लघु समयसार कहा है। द्विगुणित क्रम में अर्घावली द्विगुणित विशुद्धि को बढ़ाने में सहायक है। प्रथम पूजा में 8 अर्घ के क्रम से अंतिम पूजा में 1024 अर्घ लेकर सिद्ध प्रभु का अर्घावतरण करने का सर्वश्रेष्ठ माध्यम है सिद्धचक्र विधान। तीसरी पूजा में लघु शान्तिविधान, चतुर्थ पूजा में चौंसठ ऋद्धि विधान, षष्ठ पूजा में कर्म दहन विधान, सप्तम पूजा में पंचपरमेष्ठी विधान, अष्टम पूजन में सहस्रनाम विधान एवं सम्पूर्ण विधान तो सिद्धचक्र विधान है। एक विधान में अनेक विधान के समावेश से इसकी महत्ता कई गुणित हो गई है। चतुर्थ पूजा में ऋद्धिधारी मुनिराजों का गुणानुवाद जहाँ भक्तिपरक है तो वहीं दूसरी ओर ज्ञानपरक भी। चौंसठ ऋद्धि विधान को महापूजा कह दिया जाये तो अतिशयोक्ति न होगी।

जन सामान्य की यह धारणा है कि यह विधान केवल अष्टाह्निक पर्व में किया जाता है यह धारणा अधूरी है सिद्धों की आराधना किसी भी समय की जा सकती है। कुछ विद्वान् लोग अंतिम पूजा को दो तीन दिनों में पूर्ण करते हैं, जो ठीक नहीं है प्रत्येक पूजा के अर्घ एक ही दिन में करना उचित है।

सिद्धचक्र विधान की पुस्तकें सभी मंदिरों में विराजमान होना चाहिए ताकि समय-समय पर श्रावक गण सिद्ध प्रभु का आराधन कर अपने परिणामों को निर्मल बना सकें। यह पुस्तक सभी को सिद्धों की आराधना में सहायक होगी। इसी मंगल भावना के साथ........।

ब्र.संजीव

मंगलाष्टक

शार्दूलविक्रीडितं

अर्हन्तो भगवन्त इन्द्र–महिताः सिद्धाश्च सिद्धीश्वराः,
आचार्या जिनशासनोन्नतिकराः पूज्या उपाध्यायकाः।
श्रीसिद्धान्त–सुपाठकाः मुनिवरा रत्नत्रयाराधकाः,
पञ्चैते परमेष्ठिनः प्रतिदिनं, कुर्वन्तु ते मङ्गलम्॥

श्रीमन्नम्र – सुरासुरेन्द्र – मुकुट–प्रद्योत–रत्नप्रभा–,
भास्वत्पादनखेन्दवः प्रवचनाऽम्भोधीन्दवः स्थायिनः।
ये सर्वे जिन सिद्ध–सूर्यनुगतास्ते पाठकाः साधवः,
स्तुत्या योगिजनैश्च पञ्चगुरवः कुर्वन्तु ते मङ्गलम्॥

सम्यग्दर्शन – बोध – वृत्तममलं रत्नत्रयं पावनं,
मुक्ति–श्री–नगराऽधिनाथ–जिनपत्युक्तोऽपवर्गप्रदः।
धर्मः सूक्तिसुधा च चैत्यमखिलं चैत्यालयं श्र्यालयं,
प्रोक्तं च त्रिविधं चतुर्विधममी कुर्वन्तु ते मङ्गलम्॥

नाभेयादि–जिनाधिपास्त्रिभुवनख्याताश्चतुर्विंशतिः,
श्रीमन्तो भरतेश्वरप्रभृतयो, ये चक्रिणो द्वादश।
ये विष्णु–प्रतिविष्णु–लाङ्गलधराः सप्तोतरा विंशतिस्–
त्रैकाल्ये प्रथितास्त्रिषष्टिपुरुषाः कुर्वन्तु ते मङ्गलम्॥

ये सर्वौषधिऋद्धयः सुतपसो वृद्धिङ्गताः पञ्च ये,
ये चाष्टाङ्गमहानिमित्तकुशला येऽष्टौ वियच्चारिणः।
पञ्चज्ञानधरास्त्रयोऽपि बलिनो ये बुद्धिऋद्धीश्वराः,
सप्तैते सकलार्चिता गणभृतः कुर्वन्तु ते मङ्गलम्॥

ज्योतिर्व्यन्तर-भावनाऽमरगृहे मेरौ कुलाद्रौ स्थिताः,
जम्बू-शाल्मलिचैत्यशाखिषु तथा वक्षार-रूप्याद्रिषु।
इक्ष्वाकारगिरौ च कुण्डलनगे द्वीपे च नन्दीश्वरे,
शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहाः कुर्वन्तु ते मङ्गलम्॥

कैलासे वृषभस्य निर्वृतिमही, वीरस्य पावापुरे,
चम्पायां वसुपूज्यसज्जिनपतेः, सम्मेदशैलेऽर्हताम्।
शेषाणामपि चोर्जयन्तशिखरे, नेमीश्वरस्यार्हतो,
निर्वाणावनयः प्रसिद्धविभवाः कुर्वन्तु ते मङ्गलम्॥

सर्पो हारलता भवत्यसिलता सत्पुष्पदामायते,
सम्पद्येत रसायनं विषमपि प्रीतिं विधत्ते रिपुः।
देवा यान्ति वशं प्रसन्नमनसः किं वा बहु ब्रूमहे,
धर्मादेव नभोऽपि वर्षति नगैः कुर्वन्तु ते मङ्गलम्॥

यो गर्भाऽवतरोत्सवो भगवतां जन्माऽभिषेकोत्सवो,
यो जातः परिनिष्क्रमेण विभवो यः केवलज्ञानभाक्।
यः कैवल्यपुरप्रवेशमहिमा संभावितः स्वर्गिभिः,
कल्याणानि च तानि पञ्च सततं कुर्वन्तु ते मङ्गलम्॥

इत्थं श्री जिनमंगलाष्टकमिदं सौभाग्य-संपत्प्रदं,
कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थंकराणामुषः।
ये श्रृण्वन्ति पठन्ति तैश्चसुजनैर्धर्मार्थकामान्विता,
लक्ष्मीराश्रयते व्यपायरहिता निर्वाणलक्ष्मीरपि॥

विनय पाठ

इह विधि ठाड़ो होय के, प्रथम पढ़ै जो पाठ ।
धन्य जिनेश्वर देव तुम, नाशे कर्म जु आठ ॥
अनन्त चतुष्टय के धनी, तुम ही हो सिरताज ।
मुक्ति–वधू के कन्त तुम, तीन भुवन के राज ॥
तिहुँ जग की पीड़ा हरन, भवदधि शोषणहार ।
ज्ञायक हो तुम विश्व के, शिवसुख के करतार ॥
हरता अघ अँधियार के, करता धर्म –प्रकाश ।
थिरता–पद दातार हो, धरता निज गुण रास ॥
धर्मामृत उर जलधि सों, ज्ञानभानु तुम रूप ।
तुमरे चरण–सरोज को, नावत तिहुँ जग भूप ॥
मैं वन्दौं जिनदेव को, करि अति निरमल भाव ।
कर्म–बन्ध के छेदने, और न कछू उपाव ॥
भविजन को भव – कूपतैं, तुम ही काढ़नहार ।
दीन–दयाल अनाथ–पति, आतम गुण भण्डार ॥
चिदानन्द निर्मल कियो, धोय कर्म – रज मैल ।
सरल करी या जगत में,भविजन को शिवगैल ॥
तुम पद – पङ्कज पूजतैं, विघ्न – रोग टर जाय ।
शत्रु मित्रता को धरैं, विष निरविषता थाय ॥
चक्री खगधर इन्द्र पद, मिलैं आपतैं आप।
अनुक्रम करि शिवपद लहैं, नेम सकल हनि पाप ॥
तुम बिन मैं व्याकुल भयो, जैसे जल बिन मीन।
जन्म–जरा मेरी हरो, करो मोहि स्वाधीन ॥
पतित बहुत पावन किये, गिनती कौन करेव ।
अञ्जन से तारे कुधी, जय जय जय जिनदेव॥
थकी नाव भवदधि विषैं, तुम प्रभु पार करेव ।
खेवटिया तुम हो प्रभु, जय जय जय जिनदेव ॥
राग सहित जग में रुल्यो, मिले सरागी देव।

वीतराग भेट्यो अबै, मेटो राग कुटेव ॥
कित निगोद कित नारकी, कित तिर्यञ्च अज्ञान ।
आज धन्य मानुष भयो, पायो जिनवर थान ॥
तुमको पूजैं सुरपति, अहिपति नरपति देव ।
धन्य भाग्य मेरो भयो, करन लग्यो तुम सेव ॥
अशरण के तुम शरण हो, निराधार आधार ।
मैं डूबत भव सिन्धु में, खेव लगाओ पार ॥
इन्द्रादिक गणपति थके, कर विनती भगवान ।
अपनो विरद निहारिकैं, कीजे आप समान ॥
तुमरी नेक सुदृष्टि तैं, जग उतरत है पार ।
हा हा डूब्यो जात हों, नेक निहार निकार ॥
जो मैं कहहूँ और सौं, तो न मिटैं उरझार।
मेरी तो तोसों बनी, यातैं करौं पुकार ॥
वन्दौं पाँचों परमगुरु, सुरगुरु वन्दत जास।
विघनहरन मङ्गलकरन, पूरन परम प्रकाश ॥
चौबीसों जिनपद नमों, नमों शारदा माय।
शिवमग साधक साधु नमि, रच्यो पाठ सुखदाय॥
मङ्गल मूर्ति परम पद, पञ्च धरो नित ध्यान ।
हरो अमङ्गल विश्व का, मङ्गलमय भगवान॥
मङ्गल जिनवर पद नमों, मङ्गल अर्हन्त देव।
मङ्गलकारी सिद्ध पद, सो वन्दौं स्वयमेव॥
मङ्गल आचारज मुनि, मङ्गल गुरु उवझाय।
सर्व साधु मङ्गल करो, वन्दौं मन-वच-काय॥
मङ्गल सरस्वती मात का, मङ्गल जिनवर धर्म।
मङ्गलमय मङ्गल करो, हरो असाता कर्म॥
या विधि मङ्गल से सदा, जग में मङ्गल होत।
मङ्गल 'नाथूराम' यह भव सागर दृढ़ पोत॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि

पूजा पीठिका

ॐ जय जय जय! नमोऽस्तु, नमोऽस्तु, नमोऽस्तु!!

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं।

णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं॥

ॐ ह्रीं अनादिमूलमन्त्रेभ्यो नमः पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि

चत्तारि मंगलं अरिहंता मंगलं सिद्धा मंगलं साहू मंगलं केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा अरिहंता लोगुत्तमा सिद्धा लोगुत्तमा साहू लोगुत्तमा केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो। चत्तारि सरणं पव्वज्जामि अरिहंते सरणं पव्वज्जामि सिद्धे सरणं पव्वज्जामि साहू सरणं पव्वज्जामि केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि।

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि

अपवित्रः पवित्रो वा, सुस्थितो दुःस्थितोऽपि वा।
ध्यायेत्पञ्च-नमस्कारं, सर्वपापैःप्रमुच्यते ॥1 ॥
अपवित्रः पवित्रो वा, सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत्परमात्मानं, स बाह्याभ्यन्तरे शुचिः ॥2 ॥
अपराजितमंत्रोऽयं, सर्व-विघ्नविनाशनः।
मङ्गलेषु च सर्वेषु, प्रथमं मङ्गलं मतः॥ 3 ॥
एसो पंच-णमोयारो, सव्वपावप्पणासणो।
मङ्गलाणं च सव्वेसिं, पढमं होई मङ्गलं ॥4 ॥
अर्हमित्यक्षरं ब्रह्म, - वाचकं परमेष्ठिनः।
सिद्धचक्रस्य सद्बीजं, सर्वतः प्रणमाम्यहम्॥ 5 ॥
कर्माष्टक -विनिर्मुक्तं, मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम्।
सम्यक्त्वादिगुणोपेतं, सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ॥6 ॥
विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति, शाकिनीभूतपन्नगाः।
विषं निर्विषतां याति, स्तूयमाने जिनेश्वरे॥ 7 ॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि

पंचकल्याणक अर्घ

उदक चंदन तण्डुल पुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमङ्गलगान-रवाकुले, जिनगृहे कल्याणमहं यजे॥

ॐ ह्रीं भगवतो गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाण कल्याणकेभ्योऽर्घं निर्व. स्वाहा।

पंच परमेष्ठी अर्घ

उदक चन्दन तण्डुल पुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमङ्गलगान - रवाकुले, जिनगृहे जिन इष्ट महंयजे॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्सिद्धाचार्यापाध्यायसाधुभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनसहस्त्रनाम अर्घ

उदक चन्दन तण्डुल पुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमङ्गलगान-रवाकुले, जिनगृहे जिननाममहं यजे॥

ॐ ह्रीं श्रीभगवज्जिनाष्टोत्तरसहस्त्रनामभ्यो ऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवाणी का अर्घ

उदक-चन्दन तण्डुल पुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमङ्गलगान-रवाकुले, जिनगृहे जिनसूत्रमहं यजे॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि तत्त्वार्थसूत्रदशाध्याय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्द्य जगत्त्रयेशं,
स्याद्वादनायकमनन्तचतुष्टयार्हम्।
श्रीमूलसंघसुदृशां सुकृतैकहेतुर्,
जैनेन्द्रयज्ञविधिरेष मयाऽभ्यधायि॥
स्वस्ति त्रिलोकगुरवे जिनपुङ्गवाय,
स्वस्ति स्वभावमहिमोदयसुस्थिताय।
स्वस्ति प्रकाश-सहजोर्ज्जितदृङ् मयाय,
स्वस्ति प्रसन्नललिताद्भुत-वैभवाय॥
स्वस्त्युच्छलद्विमलबोधसुधाप्लवाय,

स्वस्ति स्वभाव-परभाव-विभासकाय।
स्वस्ति त्रिलोकविततैकचिदुद्गमाय,
स्वस्ति त्रिकाल-सकलायत-विस्तृताय॥
द्रव्यस्य शुद्धिमधिगम्य यथानुरूपं,
भावस्य शुद्धिमधिकामधिगन्तुकामः।
आलम्बनानि विविधान्यवलम्ब्यवल्गन्,
भूतार्थयज्ञपुरुषस्य करोमि यज्ञम्॥
अर्हन् पुराणपुरुषोत्तमपावनानि,
वस्तून्यनूनमखिलान्ययमेक एव।
अस्मिञ्ज्वलद्विमल -केवलबोधवह्नौ,
पुण्यं समग्रमहमेकमना जुहोमि॥

ॐ विधियज्ञप्रतिज्ञानाय जिनप्रतिमाग्रे पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ।

स्वस्ति-मंगल

श्रीवृषभो नः स्वस्ति स्वस्ति श्रीअजितः।
श्रीसंभवः स्वस्ति स्वस्ति श्रीअभिनन्दनः।
श्रीसुमतिः स्वस्ति स्वस्ति श्रीपद्मप्रभः।
श्रीसुपार्श्वः स्वस्ति स्वस्ति श्रीचन्द्रप्रभः।
श्रीपुष्पदन्तः स्वस्ति स्वस्ति श्रीशीतलः।
श्रीश्रेयान् स्वस्ति स्वस्ति श्रीवासुपूज्यः।
श्रीविमलः स्वस्ति स्वस्ति श्रीअनन्तः।
श्रीधर्मः स्वस्ति स्वस्ति श्रीशान्तिः।
श्रीकुन्थुः स्वस्ति स्वस्ति श्रीअरनाथः।
श्रीमल्लिः स्वस्ति स्वस्ति श्रीमुनिसुव्रतः।
श्रीनमिः स्वस्ति स्वस्ति श्रीनेमिनाथः।
श्रीपार्श्वः स्वस्ति स्वस्ति श्रीवर्द्धमानः।

पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि

परमर्षि स्वस्ति मङ्गल पाठ

नित्याप्रकम्पाद्भुतकेवलौघाः, स्फुरन्मनःपर्ययशुद्धबोधाः।
दिव्यावधि-ज्ञानबलप्रबोधाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥

कोष्ठस्थ-धान्योपममेक-बीजं, सम्भिन्न-संश्रोतृपदानुसारि।
चतुर्विधं बुद्धिबलं दधानाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥

संस्पर्शनं संश्रवणं च दूरादास्वादन-घ्राण-विलोकनानि।
दिव्यान्मतिज्ञानबलाद्वहन्तः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥

प्रज्ञा- प्रधानाः श्रमणाः समृद्धाः, प्रत्येक-बुद्धाः दशसर्वपूर्वैः।
प्रवादिनोऽष्टाङ्गनिमित्तविज्ञाः,स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥

जंघानलश्रेणि-फलाम्बु-तन्तु-प्रसून-बीजाङ्कुर-चारणाह्वाः।
नभोऽङ्गणस्वैरविहारिणश्च, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥

अणिम्नि दक्षाः कुशला महिम्नि,लघिम्नि शक्ताः कृतिनो गरिम्णि।
मनो-वपु-र्वाग्बलिनश्च नित्यं, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥

सकामरूपित्ववशित्वमैश्यं, प्राकाम्यमन्तर्द्धिमथाप्तिमाप्ताः।
तथाऽप्रतीघातगुणप्रधानाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥

दीप्तं च तप्तं च तथा महोग्रं, घोरं तपो घोर-पराक्रमस्थाः।
ब्रह्मापरं घोरगुणाश्चरन्तः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥

आमर्ष-सर्वौषधयस्तथाशीर्विषाविषा दृष्टिविषाविषाश्च।
सखिल्लविड्जल्लमलौषधीशाः,स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥

क्षीरं स्रवंतोऽत्र घृतं स्रवंतो, मधुस्रवंतोऽप्यमृतं स्रवंतः।
अक्षीणसम्वासमहानसाश्च, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥

(इति परमर्षिस्वस्तिमङ्गलविधानं परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि)

समुच्चय पूजा

देवशास्त्र गुरु नमन करि, बीस तीर्थङ्करध्याय।
सिद्ध शुद्ध राजत सदा, नमूँ चित्त हुलसाय॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरवः!श्रीविद्यमानविंशतितीर्थङ्कराः! श्रीअनन्तानन्तसिद्ध परमेष्ठिनः! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट्। अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट्।

अनादिकाल से जग में स्वामिन्, जल से शुचिता को माना।
शुद्ध निजातम सम्यक् रत्नत्रय-निधि को नहिं पहचाना।
अब निर्मल रत्नत्रय जल ले,श्री देवशास्त्रगुरुको ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थङ्कर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यः-श्रीविद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यः श्रीअनन्तानन्त सिद्ध-परमेष्ठिभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भव आताप मिटावन की, निज में ही क्षमता समता है।
अनजाने अब तक मैंने, पर में की झूठी ममता है॥
चन्दन सम शीतलता पाने,श्री देवशास्त्रगुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यः-श्रीविद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यः श्रीअनन्तानन्त सिद्ध-परमेष्ठिभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय पद बिन फिरा, जगत की-लख चौरासी योनी में।
अष्ट कर्म के नाश करन को, अक्षत तुम ढिंग लाया मैं॥
अक्षय निधि निज की पाने को, श्री देवशास्त्रगुरुको ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थङ्कर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यः-श्रीविद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यः श्रीअनन्तानन्त सिद्ध-परमेष्ठिभ्यो अक्षयपदप्राप्तयेऽक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प सुगन्धी से आतम ने, शील स्वभाव नशाया है।
मन्मथ बाणों से बिंध करके, चहुँगति दुख उपजाया है॥
स्थिरता निज में पाने को, श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊँ।

विद्यमान श्री बीस तीर्थङ्कर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यः श्रीविद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यः श्रीअनन्तानन्त सिद्ध-परमेष्ठिभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

षट्रस मिश्रित भोजन से, ये भूख न मेरी शान्त हुयी।
आतमरस अनुपम चखने से, इन्द्रिय मन इच्छा शमन हुयी॥
सर्वथा भूख के मेटन को, श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थङ्कर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यः श्रीविद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यः श्रीअनन्तानन्त सिद्ध-परमेष्ठिभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जड़दीप विनश्वर को अब तक, समझा था मैंने उजियारा।
निज गुण दरशायक ज्ञान दीप से, मिटा मोह का अँधियारा॥
ये दीप समर्पण करके मैं, श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थङ्कर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यः श्रीविद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यः श्रीअनन्तानन्त सिद्ध-परमेष्ठिभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ये धूप अनल में खेने से, कर्मों को नहीं जलायेगी।
निज में निज की शक्ति ज्वाला, जो राग द्वेष नशायेगी॥
उस शक्ति दहन प्रकटाने को, श्री देवशास्त्रगुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थङ्कर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यः श्रीविद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यः श्री अनन्तानन्त सिद्ध-परमेष्ठिभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पिस्ता बादाम श्रीफल लवंग, चरणन तुम ढिंग मैं ले आया।
आतमरस भीने निज गुण फल, मम मन अब उनमें ललचाया॥
अब मोक्ष महाफल पाने को, श्री देवशास्त्रगुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थङ्कर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यः श्रीविद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यः श्रीअनन्तानन्त सिद्ध-परमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम वसुधा पाने को, कर में ये आठों द्रव्य लिये।
सहज शुद्ध स्वाभाविकता से, निज में निज गुण प्रकट किये ॥
ये अर्घ्य समर्पण करके मैं,श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थङ्कर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यः श्रीविद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यः श्रीअनन्तानन्त सिद्ध-परमेष्ठिभ्योऽनर्घपद प्राप्तयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

देव शास्त्र गुरु बीस तीर्थङ्कर, सिद्ध प्रभु भगवान।
अब वरणूँ जयमालिका, करूँ स्तवन गुणगान॥

नसे घातिया कर्म अर्हन्त देवा,
करें सुर-असुर नर-मुनि नित्य सेवा।
दरश ज्ञान सुख बल अनन्त के स्वामी,
छियालीस गुण युक्त महाईश नामी॥

तेरी दिव्य वाणी सदा भव्य मानी,
महा मोह विध्वंसिनी मोक्ष-दानी।
अनेकान्तमय द्वादशांगी बखानी,
नमो लोक माता श्री जैन वाणी॥

विरागी अचारज उवज्झाय साधू,
दरश - ज्ञान भण्डार समता अराधू।
नगन वेशधारी सु एका विहारी,
निजानन्द मण्डित मुकति पथ प्रचारी॥

विदेह क्षेत्र में तीर्थङ्कर बीस राजे,
विहरमान वन्दूँ सभी पाप भाजे।

नमूँ सिद्ध निर्भय निरामय सुधामी,
अनाकुल समाधान सहजाभिरामी॥
देव शास्त्र गुरु बीस तीर्थङ्कर, सिद्ध हृदय बिच धर ले रे।
पूजन ध्यान गान गुण करके, भव सागर जिय तर ले रे॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यः-श्रीविद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यः-श्रीअनन्तानन्त-सिद्ध-परमेष्ठिभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

भूत भविष्यत वर्तमान की तीस चौबीसी मैं ध्याऊँ।
चैत्य-चैत्यालय कृत्रिमाकृत्रिम तीन लोक के मन लाऊँ॥

ॐ ह्रीं त्रिकालसम्बन्धि तीसचौबीसी कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयेभ्योऽर्घं निर्व. स्वाहा

चैत्य भक्ति आलोचन चाहूँ, कायोत्सर्ग अघ नाशन हेत।
कृत्रिमा-कृत्रिम तीन लोक के राजत हैं जिन बिम्ब अनेक॥
चतुर निकाय के देव जजें ले अष्ट द्रव्य निज भक्ति समेत।
निज शक्ति अनुसार जजूँ मैं, कर समाधि पाऊँ शिवखेत॥

ॐ ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयसम्बन्धि जिनबिम्बेभ्योऽर्घं निर्व.स्वाहा।

पूर्व मध्य अपराह्ण की बेला, पूर्वाचार्यों के अनुसार।
देव वन्दना करूँ भाव से सकल कर्म की नाशन हार॥
पञ्च महागुरु सुमरन करके, कायोत्सर्ग करूँ सुखकार।
सहज स्वभाव शुद्ध लख अपना जाऊँगा अब मैं भव पार॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

विनायक सिद्धयन्त्र पूजा (हिन्दी)

अरिघात शुद्धातम प्रगट किया, अरहंत परम पद पाया है।
अविनाशी शाश्वत सुखसागर, निजधाम चिदानन्द पाया है॥
आचार्य उपाध्याय साधु महा, मंगल लोकोत्तम शरण कहे।
प्रभु आप विराजो मन मंदिर, आतम दर्शन अवबोध लहे॥

ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूत जिनाः अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

भव भव की प्यास बुझाने, लाया जल चरण चढ़ाने।
मंगलोत्तम शरण सहाई, नमूँ पञ्च परम सुखदाई॥

ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूतजिनेन्द्रेभ्यो जलं निर्व. स्वाहा।

भव की आताप मिटाने, आया शीतलता पाने।
मंगलोत्तम शरण सहाई, नमूँ पञ्च परम सुखदाई॥

ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूतजिनेन्द्रेभ्यः चन्दनं निर्व. स्वाहा।

अक्षय पद शाश्वत पाने, चरणों में लाया चढ़ाने।
मंगलोत्तम शरण सहाई, नमूँ पञ्च परम सुखदाई॥

ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूतजिनेन्द्रेभ्यो अक्षतान् निर्व. स्वाहा।

मन्मथ की पीड़ा हरने, शुद्धातम अनुभव करने।
मंगलोत्तम शरण सहाई, नमूँ पञ्च परम सुखदाई॥

ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूतजिनेन्द्रेभ्यो पुष्पं निर्व. स्वाहा।

भव भव दुठ क्षुधा मिटाऊँ, तब आतम अमृत पाऊँ।
मंगलोत्तम शरण सहाई, नमूँ पञ्च परम सुखदाई॥

ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूतजिनेन्द्रेभ्यो नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

मिथ्यातम सकल हटाऊँ, निज आतम ज्योति जलाऊँ।
मंगलोत्तम शरण सहाई, नमूँ पञ्च परम सुखदाई ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूतजिनेन्द्रेभ्यो दीपं निर्व. स्वाहा।

कर्मों की धूप जलाऊँ, शुद्धात्म दशा प्रगटाऊँ।
मंगलोत्तम शरण सहाई, नमूँ पञ्च परम सुखदाई ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूतजिनेन्द्रेभ्यो धूपं निर्व. स्वाहा।

फल लाया चरण चढ़ाने, आतम अनुभव फल पाने।
मंगलोत्तम शरण सहाई, नमूँ पञ्च परम सुखदाई ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूतजिनेन्द्रेभ्यो फलं निर्व. स्वाहा।

जल फल शुचि द्रव्य मिलाये, पूजत आतम सुख पाये।
मंगलोत्तम शरण सहाई, नमूँ पञ्च परम सुखदाई ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूतजिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अर्घ्यावली

जिन घाती कर्म नशाया, अरिहंत परम पद पाया।
मैं पूजों मन वच काया,जिन पद पा आतम ध्याया ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन अष्ट कर्म विनशाये, समकित स्वातम गुण पाये।
ऐसे प्रभु सिद्ध कहाये, हम चरणन शीश नमाये ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ पञ्चाचार सम्हाला, छत्तीस मूल गुण पाला।
दीक्षा शिक्षा हितकारी, आचारज हैं सुखकारी ॥

ॐ ह्रीं अर्हं आचार्यपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एकादश अंग सुहाये, चौदह पूरव श्रुत पाये।
शिष्यों को बोध दिलाये, पाठक पूजों शिरनाये ॥

ॐ ह्रीं अर्हं उपाध्याय-परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टाविंशति गुणधारी, गुरु साधत आतम न्यारी।
अरि मित्र समान विचारें, समता सागर सुख धारें॥

ॐ ह्रीं अर्हं साधुपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

मंगलीक अरिहंत हैं, नमत पाप गल जाय।
आतम मंगलरूप है, पूजत सब सुख पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अर्हत्मंगलाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिद्ध चक्र मंगल महा, सर्वविघ्न नशि जाय।
पूजत पद निज पाइये, मंगलमय सुखदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धमंगलाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समता धर संयम धरें, साधत आतम काज।
रागद्वेष मदलेश नहिं, मंगलमय मुनिराज॥

ॐ ह्रीं अर्हं साधुमंगलाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंगलमय जिनधर्म है, भवदुख नाशन हार।
धारत भविजन भाव सों, स्वर्ग मोक्ष सुख द्वार॥

ॐ ह्रीं अर्हं केवलिप्रज्ञप्तधर्ममंगलाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रोटक

लोकोत्तम श्री अरहंत महा, जिनका सर्वोदय तीर्थ कहा।
दर्शन पूजन से पाप कटें, संसार विषम भव बन्ध कटें॥

ॐ ह्रीं अर्हं अर्हत्लोकोत्तमाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मोदय जब जिय का आता, तब भवसागर में भटकाता।
आतम संबल पा कर्म नशा,शुद्धातम वन शिव लोक बसा॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धलोकोत्तमाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संयम धर चलते शिवमग में, तीरथ चलते फिरते जग में।
जग में हैं उत्तम साधु महा, पूजन करते धन भाग्य यहां॥

ॐ ह्रीं अर्हं साधुलोकोत्तमाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय उत्तम धर्म कहा, भव दुःख मिटें शिवपाय महा।
भव सागर से भवितारत हैं, निज श्रद्धा से जब धारत हैं॥

ॐ ह्रीं अर्हं केवलिप्रज्ञप्तधर्मलोकोत्तमाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चाल

अरिहंत शरण जिन लीना, तिन जनम मरण भय छीना।
इन्द्रादिक नित गुण गाते, हम चरणन शीश नवाते॥

ॐ ह्रीं अर्हं अर्हत्शरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हैं करम जगत दुखदाई, भव भव में भ्रमण कराई।
तिन नाश सिद्ध पद पाया, पूजन हित शरण में आया॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धशरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन मुद्रा आतमधारी, मद राग द्वेष परिहारी।
निज आतम अनुभव पाया, नमूँ साधु शरण में आया॥

ॐ ह्रीं अर्हं साधुशरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनधर्मशरण सुखकारी, पाते निज अनुभव धारी।
मिथ्यामद मोह मिटाते, अक्षय अनन्त सुख पाते॥

ॐ ह्रीं अर्हं केवलिप्रज्ञप्तधर्मशरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कृत कृत्य विमल वैरागी, निज आतम सत्ताधारी।
मंगलोत्तम शरण महाना, पूजों पद श्री भगवाना॥

ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा मंगलोत्तम-शरण-भूत जिनेन्द्रेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जयमाला

जय मंगल उत्तम शरण, पञ्च परम गुरु जान।
गाऊँ नित गुणमालिका, होय करम की हान॥1॥

जय वीतराग सर्वज्ञदेव, तुम घाते घातिक कर्मभेव।
सदनन्त चतुष्टय राजमान, नवकेवललब्धि विराजमान॥2॥
भये अजर अमर हे मुक्तिवन्त, चारों अघातिया कर्म हन्त।

हो नित्य निरञ्जन निर्विकार, चैतन्य सुधारस भोगसार॥ 3॥
रत्नत्रय मंडित गुण अनन्त, छत्तीस मूलगुण शोभवन्त।
जय पञ्चाचार आचरण धीर, दीक्षाशिक्षाहित गुण गम्भीर॥ 4॥
एकादशांग चौदह सुपूर्व, धारें जिन पच्चिसगुण अपूर्व।
जय पाठक मुनि करुणा निधान, देते शिक्षा शिवपथ महान॥ 5॥
जय बीस आठ गुण धरत आप, शमदम विराग सह मुक्ति धाय।
बाह्याभ्यन्तर परिग्रह नशाय, निज आतम साधत मुक्ति पाय॥ 6॥
जय मंगल उत्तम शरण रूप, त्रैकालिक सुख पावत अनूप।
हम शरण गही मन वचन काय, परमेष्ठी पद लहि मुक्ति पाय॥ 7॥
विघ्न विनाशक मन्त्र शुभ, महिमामयी अनूप।
पूजत मंगल होत नित, मिले पुष्प निज रूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा मंगलोत्तम-शरण-भूत जिनेन्द्रेभ्यः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

आतम का अनुभव मिले, बाढ़े धरम प्रभाव।
रत्नत्रय निधि मिलत है, भक्ति भावना भाय॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

नन्दीश्वरद्वीप पूजा

(पं. द्यानतराय)

सरब परब में बड़ो अठाई परब है,
नन्दीश्वर सुर जाँहिं लेय वसु दरब है।
हमैं सकति सो नाहिं इहाँ करि थापना,
पूजें जिनगृह-प्रतिमा है हित आपना॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

कंचन-मणि-मय भृंगार, तीरथ-नीर भरा।
तिहुँ धार दयी निरवार, जामन मरन जरा॥
नन्दीश्वर-श्रीजिन-धाम, बावन पूज करों।
वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनन्द-भाव धरों॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीप पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणदिक्षु द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ-जिनप्रतिमाभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भव-तप-हर शीतल वाच, सो चन्दन नाहीं।
प्रभु यह गुन कीजै साँच, आयो तुम ठाहीं॥
नन्दीश्वर-श्रीजिन-धाम, बावन पूज करों।
वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनन्द-भाव धरों॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ जिनप्रतिमाभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम अक्षत जिनराज, पुंज धरे सोहै।
सब जीते अक्ष-समाज,तुम सम अरुको है॥
नन्दीश्वर-श्रीजिन-धाम, बावन पूज करों।
वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनन्द-भाव धरों॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ जिनप्रतिमाभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

तुम काम विनाशक देव, ध्याऊँ फूलन सौं।
लहुँ शील-लच्छमी एव, छूटों सूलन सौं॥
नन्दीश्वर-श्रीजिन-धाम, बावन पूज करों।
वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनन्द-भाव धरों॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ जिनप्रतिमाभ्य: कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

नेवज इन्द्रिय बलकार, सो तुमने चूरा।
चरु तुम ढिग सोहै सार, अचरज है पूरा॥
नन्दीश्वर-श्रीजिन-धाम, बावन पूज करों।
वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनन्द-भाव धरों॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ जिनप्रतिमाभ्य: क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक की ज्योतिप्रकाश, तुम तन माँहिं लसै।
टूटै करमन की राश, ज्ञान-कणी दरसै॥
नन्दीश्वर-श्रीजिन-धाम, बावन पूज करों।
वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनन्द-भाव धरों॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ जिनप्रतिमाभ्यो मोहान्धकारविनाशाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागरु-धूप-सुवास, दश-दिशि नारि वरै।
अति हरष-भाव परकाश, मानो नृत्य करै॥
नन्दीश्वर-श्रीजिन-धाम, बावन पूज करों।
वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनन्द-भाव धरों॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ जिनप्रतिमाभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

बहुविधि फल ले तिहुँ काल, आनन्द राचत हैं।
तुम शिव-फल देहु दयाल, तुहिं हम जाचत हैं॥
नन्दीश्वर-श्रीजिन-धाम, बावन पूज करों।

वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनन्द-भाव धरों॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ जिनप्रतिमाभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

यह अरघ कियो निज-हेत, तुमको अरपतु हों।
द्यानत कीज्यो शिव-खेत, भूमि समरपतु हों॥
नन्दीश्वर-श्रीजिन-धाम, बावन पूज करों।
वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनन्द-भाव धरों॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ जिनप्रतिमाभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

कार्तिक फाल्गुन साढ के अन्त आठ दिन माँहिं।
नन्दीश्वर सुर जात हैं, हम पूजैं इह ठाहिं॥
एक सौ त्रेसठ कोड़ि जोजन महा।
लाख चौरासिया एक दिशि में लहा॥
आठमों दीप नन्दीश्वरं भास्वरं।
भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं॥1॥
चार दिशि चार अंजनगिरी राजहीं।
सहस चौरासिया एक दिशि छाजहीं॥
ढोल सम गोल ऊपर तले सुन्दरं।
भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं॥2॥
एक इक चार दिशि चार शुभ बावरी।
एक इक लाख जोजन अमल जल भरी॥
चहुँ दिशा चार वन लाख जोजन वरं।
भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं॥3॥
सोल वापीन मधि सोल गिरि दधिमुखं।
सहस दश महाजोजन लखत ही सुखं॥

बावरी कोन दो माँहिं दो रतिकरं।
भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं॥4॥
शैल बत्तीस इक सहस जोजन कहे।
चार सोलै मिलैं सर्व बावन लहे॥
एक इक सीस पर एक जिनमन्दिरं।
भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं॥5॥
बिम्ब अठ एक सौ रतनमयी सोहही।
देव देवी सरब नयन मन मोहही॥
पांच सै धनुष तन पद्म-आसन परं।
भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं॥6॥
लाल नख-मुख नयन स्याम अरु स्वेत हैं।
स्याम-रंग भोंह सिर-केश छवि देत हैं॥
वचन बोलत मनों हँसत कालुष हरं।
भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं॥7॥
कोटिशशिभान-दुति-तेज छिप जात है।
महा - वैराग - परिणाम ठहरात है॥
वयन नहिं कहैं लखि होत सम्यकधरं।
भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं॥8॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ जिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घं निर्व.स्वाहा।

नन्दीश्वर-जिन-धाम, प्रतिमा-महिमा को कहै।
'द्यानत' लीनो नाम, यही भगति शिव-सुख करै॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

सरस्वतीपूजा

(पं. द्यानतराय)

जनम जरा मृतु छय करै, हरै कुनय जड़ रीति।
भव सागर सौं ले तिरै, पूजैं जिन वच प्रीति ॥ 1 ॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतिदेवि! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतिदेवि! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतिदेवि! अत्र मम सन्निहिता भव भव वषट्।

छीरोदधि गंगा, विमल तरंगा, सलिल अभंगा, सुखसंगा।
भरि कंचन झारी, धार निकारी, तृषा निवारी, हित चंगा॥
तीर्थंकर की धुनि, गनधर ने सुनि,अंग रचे चुनि, ज्ञानमई।
सो जिनवर वानी,शिवसुखदानी, त्रिभुवन मानी पूज्य भई॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतिदेव्यै जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्व. स्वाहा।

करपूर मँगाया, चन्दन आया, केशर लाया, रंग भरी।
शारदपद वंदौं, मन अभिनंदौं, पापनिकंदौं, दाह हरी॥ तीर्थंकर...॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतिदेव्यै भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

सुखदास कमोदं, धारकमोदं, अति अनुमोदं, चंदसमं।
बहुभक्ति बढ़ाई, कीरति गाई, होहु सहाई, मात ममं॥ तीर्थंकर...॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतिदेव्यै अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

बहुफूल सुवासं, विमलप्रकाशं, आनन्दरासं, लाय धरैं।
मम काम मिटायो, शील बढ़ायो, सुख उपजायो, दोष हरैं॥ तीर्थंकर...॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतिदेव्यै कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पकवान बनाया, बहुघृत लाया, सब विधि भाया, मिष्ट महा।
पूजूँ थुति गाऊँ, प्रीति बढ़ाऊँ, क्षुधा नशाऊँ, हर्ष लहा॥ तीर्थंकर...॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतिदेव्यै क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

करि दीपक ज्योतं, तम छय होतं, जोति उद्योतं, तुमहिं चढ़ै।
तुम हो परकाशक,भरमविनाशक, हम घटभासक, ज्ञान बढ़ै॥
तीर्थंकर की धुनि, गनधर ने सुनि,अंग रचे चुनि, ज्ञानमई।
सो जिनवर वानी,शिवसुखदानी, त्रिभुवन मानी पूज्य भई॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतिदेव्यै मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभगंध दशों कर, पावक में धर, धूप मनोहर, खेवत हैं।
सब पाप जलावैं, पुण्य कमावैं, दास कहावैं, सेवत हैं॥ तीर्थंकर...॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतिदेव्यै अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

बादाम छुहारी, लोंग सुपारी, श्रीफल भारी, ल्यावत हैं।
मन वांछित दाता, मेंट असाता, तुम गुन माता, ध्यावत हैं॥ तीर्थंकर...॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतिदेव्यै मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नयनन सुखकारी, मृदु गुनधारी, उज्ज्वल भारी, मोलधरै।
शुभ गंध सम्हारा, वसन निहारा, तुम तन धारा ज्ञान करै॥ तीर्थंकर...॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतिदेव्यै वस्त्रं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन अच्छत, फूल चरू चत, दीप धूप अति, फल लावै।
पूजा को ठानत, जो तुम जानत, सो नर 'द्यानत', सुख पावै॥ तीर्थंकर...॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतिदेव्यै अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

ओंकार धुनि सार, द्वादशांग वाणी विमल।
नमौं भक्ति उरधार, ज्ञान करै जड़ता हरै॥1॥

पहला आचारांग बखानो, पद अष्टादश सहस प्रमानो।
दूजो सूत्रकृतं अभिलाषं, पद छत्तीस सहस गुरु भाषं॥ 2॥
तीजो ठाना अंग सुजानं, सहस बियालिस पद सरधानं।
चौथो समवायांग निहारं, चौसठ सहस लाख इकधारं॥ 3॥
पंचम व्याख्या प्रगपति दरशं, दोय लाख अट्ठाइस सहसं।

छट्ठो ज्ञातृकथा विस्तारं, पांच लाख छप्पन हज्जारं॥ 4॥
सप्तम उपासकाध्ययनंगं, सत्तर सहस ग्यारलख भंगं।
अष्टम अंतकृतं दस ईसं, सहस अठाइस लाख तेईसं॥ 5॥
नवम अनुत्तर दश सुविशालं, लाख बानवै सहस चवालं।
दशम प्रश्नव्याकरण विचारं, लाख तिरानव सोल हजारं॥ 6॥
ग्यारम सूत्रविपाक सु भाखं, एक कोड़ि चौरासी लाखं।
चार कोड़ि अरु पन्द्रह लाखं, दो हजार सब पद गुरुभाखं॥ 7॥
द्वादश दृष्टिवाद पन भेदं, इकसौ आठ कोड़ि पद वेदं।
अड़सठ लाख सहस छप्पन हैं, सहित पंचपद मिथ्या हन हैं॥ 8॥
इक सौ बारह कोड़ि बखानो, लाख तिरासी ऊपर जानो।
ठावन सहस पंच अधिकाने, द्वादश अंग सर्व पद माने॥ 9॥
कोड़ि इकावन आठ ही लाखं, सहस चौरासी छह सौ भाखं।
साढ़े इक्कीस श्लोक बताये, एक एक पद के ये गाये॥ 10॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतिदेव्यै पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जा वानी के ज्ञान में, सूझै लोक अलोक।
'द्यानत' जग जयवंत हो, सदा देत हूँ धोक॥

आचार्य श्री विद्यासागर पूजा

रमेश चन्द्र 'अरुण'

श्री विद्यासागर के चरणों में झुका रहा अपना माथा।
जिनके जीवन की हर चर्या बन पड़ी स्वयं ही नवगाथा॥
जैनागम का वह सुधा कलश जो बिखराते हैं गली-गली।
जिनके दर्शन को पाकर के खिलती मुरझाई हृदय कली॥

ॐ ह्रूं श्री आचार्यविद्यासागरमुनीन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रूं श्री आचार्यविद्यासागरमुनीन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रूं श्री आचार्यविद्यासागरमुनीन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

सांसारिक विषयों में पड़कर, मैंने अपने को भरमाया।
इस रागद्वेष की वैतरणी से, अब तक पार नहीं पाया॥
तब विद्यासिन्धु के जल कण से,भवकालुष धोने आया हूँ।
आना जाना मिट जाय मेरा, यह बन्ध काटने आया हूँ॥

ॐ ह्रूं श्री आचार्यविद्यासागरमुनीन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्व. स्वाहा।

क्रोध अनल में जल-जल कर, अपना सर्वस्व लुटाया है।
निजशान्त स्वरूप न जान सका,जीवनभर इसे भुलाया है॥
चन्दन सम शीतलता पाने अब, शरण तुम्हारी आया हूँ।
संसार ताप मिट जाय मेरा, चन्दन वन्दन को लाया हूँ॥

ॐ ह्रूं श्री आचार्यविद्यासागरमुनीन्द्राय संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्व. स्वाहा।

जड़ को न मैंने जड़ समझा, नहिं अक्षय निधि को पहचाना।
अपने तो केवल सपने थे, भ्रम और जगत का भटकाना॥
चरणों में अर्पित अक्षत हैं, अक्षय पद मुझको मिल जावे।
तव ज्ञान अरुण की किरणों से, यह हृदयकमल भी खिल जावे॥

ॐ ह्रूं श्री आचार्यविद्यासागरमुनीन्द्राय अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

इन विषय भोग की मदिरा पी, मैं बना सदा से मतवाला।
तृष्णा को तृप्त करें जितनी, उतनी बढ़ती इच्छा ज्वाला॥
मैं काम भाव विध्वंस हेत, मन सुमन चढ़ाने आया हूँ।
यह मदन विजेता बन न सके, यह भाव हृदय में लाया हूँ॥

ॐ ह्रूं श्री आचार्यविद्यासागरमुनीन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

इस क्षुधा रोग की व्यथा कथा, भव-भव में कहता आया हूँ।
अति भक्ष अभक्ष्य भखे फिर भी,मनतृप्त नहीं कर पाया हूँ॥
नैवेद्य समर्पित करके मैं, तृष्णा की भूख मिटाऊँगा।
अब और अधिक न भटक सकूँ, यह अन्तर बोध जगाऊँगा॥

ॐ ह्रूं श्री आचार्यविद्यासागरमुनीन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोहान्धकार से व्याकुल हो निज को नहीं मैंने पहचाना।
मैं रागद्वेष में लिप्त रहा, इस हाथ रहा बस पछताना॥
यह दीप समर्पित है मुनिवर, मेरा तम दूर भगा देना।
तुम ज्ञान दीप की बाती से, मम अन्तर दीप जला देना॥

ॐ ह्रूं श्री आचार्यविद्यासागरमुनीन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

इन अशुभ कर्म ने घेरा है,मैंने अब तक यह माना था।
बस पाप कर्म तज पुण्य कर्म को,चाह रहा अपनाना था॥
शुभअशुभ कर्म सब रिपुदल हैं, मैं इन्हें जलाने आया हूँ।
इसलिये गुरु के चरणों में अब, धूप चढ़ाने आया हूँ॥

ॐ ह्रूं श्री आचार्यविद्यासागरमुनीन्द्राय अष्टकर्म-दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

भोगों को इतना भोगा कि, खुद को ही भोग बना डाला।
साध्य और साधक का अन्तर, मैंने आज मिटा डाला ॥
मैं चिदानन्द में लीन रहूँ, पूजा का यह फल पाना है।
पाना था जिसके द्वारा वह मिल बैठा मुझे ठिकाना है॥

ॐ ह्रूं श्री आचार्यविद्यासागरमुनीन्द्राय मोक्षफल-प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जग के वैभव को पाकर मैं, निशदिन कैसा अलमस्त रहा।
चारों गतियों की ठोकर को, खाने में ही अभ्यस्त रहा॥
मैं हूँ स्वतन्त्र ज्ञाता दृष्टा, मेरा पर से क्या नाता है।
कैसे अनर्घ पद पा जाऊँ , यह 'अरुण' भावना भाता है॥

ॐ ह्रूं श्री आचार्यविद्यासागरमुनीन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

हे गुरुवर तेरे गुण गाने, अर्पित हैं जीवन के क्षण क्षण।
अर्चन के सुमन समर्पित हैं, हरषाये जगती के कण कण॥
कर्नाटक के सदलगा ग्राम में, मुनिवर तुमने जन्म लिया।
मल्लप्पा पूज्यपिताश्री को, अरुश्रीमति को कृतकृत्य किया॥

बचपन के इस विद्याधर में, विद्या के सागर उमड़ पड़े।
मुनिराज देशभूषण से तुम, व्रत ब्रह्मचर्य ले निकल पड़े॥
आचार्य ज्ञानसागर ने सन्, अड़सठ में मुनि पद दे डाला।
अजमेर नगर में हुआ उदित, मानों रवि तम हरने वाला॥
परिवार तुम्हारा सबका सब, जिन पथ पर चलने वाला है।
वह भेद ज्ञान की छैनी से, गिरि कर्म काटने वाला है॥
तुम स्वयं तीर्थ से पावन हो, तुम हो अपने में समयसार।
तुम स्याद्वाद के प्रस्तोता, वाणी-वीणा के मधुर तार॥
तुम कुन्दकुन्द के कुन्दन से, कुन्दन-सा जग को कर देने।
तुम निकल पड़े बस इसीलिए,भटके अटकों को पथ देने॥
वह मन्द मधुर मुस्कान सदा, चेहरे पर बिखरी रहती है।
वाणी कल्याणी है अनुपम, करुणा के झरने झरती हैं॥
तुममें कैसा सम्मोहन है, या है कोई जादू टोना।
जो दर्श तुम्हारे कर जाता,नहिं चाहे कभी विलग होना॥
इस अल्प उम्र में भी तुमने, साहित्य सृजन अति कर डाला।
जैन गीत गागर में तुमने, मानो सागर भर डाला॥
है शब्द नहीं गुण गाने को, गाना भी मेरा अनजाना।
स्वर ताल छन्द मैं क्या जानूँ, केवल भक्ति में रम जाना॥
भावों की निर्मल सरिता में, अवगाहन करने आया हूँ।
मेरा सारा दुख दर्द हरो, यह अर्घ भेंटने लाया हूँ॥
हे तपो मूर्ति! हे आराधक! हे योगीश्वर! हे महासन्त!।
है 'अरुण' कामना देख सके, युग-युग तक आगामी बसन्त॥

ॐ ह्रूं श्री आचार्यविद्यासागरमुनीन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घं निर्व. स्वाहा।

अर्घावली

तीस चौबीसी

द्रव्य आठों, जु लीना है, अर्घ कर में नवीना है,
पूजतां पाप छीना है, 'भानुमल' जोड़ कीना है।
दीप अढ़ाई सरस राजैं, क्षेत्र दस ताँ विषैं छाजैं,
सातशत बीस जिनराजैं, पूजतां पाप सब भाजै॥

ॐ ह्रीं पंच भरत, पंच ऐरावत दस क्षेत्र सम्बन्धि भूत-भविष्यत्- वर्तमान सम्बन्धी तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

बीस तीर्थङ्कर

जल फल आठों दरव अरघ कर प्रीति धरी है,
गणधर इन्द्रनिहू-तैं थुति पूरी न करी है।
द्यानत सेवक जानके जगतें लेहु निकार,
सीमन्धर जिन आदि दे बीस विदेह मँझार।
श्री जिनराज हो भव तारण तरण जहाज ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्योऽनर्घपदप्राप्तयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

कृत्रिमाकृत्रिम जिनबिम्ब

कृत्याकृत्रिमचारुचैत्यनिलयान् नित्यं त्रिलोकीगतान्,
वन्दे भावन-व्यन्तरान् द्युतिवरान् कल्पामरावासगान्॥
सद्-गन्धाक्षत-पुष्पदामचरुकैः सद्दीपधूपैः फलैर्,
नीराद्यैश्च यजे प्रणम्य शिरसा, दुष्कर्मणां शान्तये॥

ॐ ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमजिनबिम्बेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सिद्ध भगवान्

गन्धाढ्यं सुपयो मधुव्रत-गणैः, सङ्गं वरं चन्दनं,
पुष्पौघं विमलं सदक्षत-चयं, रम्यं चरुं दीपकम्।
धूपं गन्धयुतं ददामि विविधं, श्रेष्ठं फलं लब्धये,
सिद्धानां युगपत्क्रमाय विमलं, सेनोत्तरं वाञ्छितम्॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

चौबीसी भगवान

जल फल आठों शुचिसार, ताको अर्घ करों,
तुमको अरपों भवतार, भवतरि मोक्ष वरों।
चौबीसों श्रीजिनचन्द, आनन्दकन्द सही,
पद जजत हरत भव फन्द, पावत मोक्ष मही॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशति तीर्थङ्करेभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्व. स्वाहा।

श्री आदिनाथ भगवान

शुचि निर्मल नीरं गन्ध सुअक्षत, पुष्प चरुले मन हरषाय,
दीप धूप फल अर्घ सुलेकर, नाचत ताल मृदङ्ग बजाय।
श्रीआदिनाथ के चरण कमल पर बलि बलि जाऊँ मन वच काय,
हे करुणानिधि भव दुख मेटो,यातैं मैं पूजों प्रभु पाय॥

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री चन्द्रप्रभ भगवान

सजि आठों दरब पुनीत, आठों अङ्ग नमों।
पूजों अष्टम जिन मीत, अष्टम अवनि गमों॥
श्री चन्द्रनाथ दुति चन्द, चरनन चन्द लगै।
मन-वच-तन जजत अमन्द, आतमजोति जगै॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री वासुपूज्य भगवान

जलफल दरब मिलाय गाय गुन, आठों अङ्ग नमाई,
शिवपदराज हेत हे श्रीपति! निकट धरों यह लाई।
वासुपूज्य वसुपूज-तनुज पद, वासव सेवत आई,
बालब्रह्मचारी लखि जिन को, शिवतिय सनमुख धाई॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री शान्तिनाथ भगवान

वसु द्रव्य सँवारी,तुम ढिंग धारी,आनन्दकारी दृग प्यारी।
तुम हो भवतारी, करुणाधारी, यातै थारी शरनारी॥
श्री शान्ति-जिनेशं, नुतशक्रेशं, वृषचक्रेशं, चक्रेशं।
हनि अरि-चक्रेशं हे गुनधेशं दयामृतेशं मक्रेशं॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री नेमिनाथ भगवान

जल फल आदि साज शुचि लीने, आठों दरब मिलाय।
अष्टम छिति के राज करन को, जजों अंग वसु नाय॥
दाता मोक्ष के, श्री नेमिनाथ जिनराय, दाता.॥

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीपार्श्वनाथ भगवान

नीर गन्ध अक्षतान् पुष्प चरु लीजिये।
दीप - धूप - श्रीफलादि अर्घ तें जजीजिये॥
पार्श्वनाथ देव सेव आपकी करूँसदा।
दीजिये निवास मोक्ष, भूलिये नहीं कदा॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री महावीर भगवान

जल फल वसु सजि हिम थार, तन मन मोद धरों।
गुण गाऊँ भवदधि तार, पूजत पाप हरों॥
श्री वीर महा अतिवीर सन्मति नायक हो।
जय वर्द्धमान गुणधीर सन्मतिदायक हो॥

ॐ ह्रीं श्री वर्द्धमानजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री बाहुबली स्वामी

हूँ शुद्ध निराकुल सिद्धों सम, भवलोक हमारा वासा ना।
रिपु राग रु द्वेष लगे पीछे, यातें शिवपद को पाया ना॥
निज के गुण निज में पाने को, प्रभु अर्घ सँजोकर लाया हूँ।
हे बाहुबली ! तुम चरणों में,सुख सन्मति पाने आया हूँ॥

ॐ ह्रीं श्री बाहुबलिजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सोलहकारण

जलफल आठों दरब चढ़ाय 'द्यानत' वरत करों मन लाय।
परमगुरु हो, जय-जय नाथ परम गुरु हो॥
दरशविशुद्धि भावना भाय सोलह तीर्थंकर पद पाय।
परमगुरु हो, जय - जय नाथ परमगुरु हो॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचमेरु

आठ दरबमय अरघ बनाय, द्यानत पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय॥
पाँचों मेरु असी जिनधाम, सब प्रतिमा को करो प्रणाम।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धि-अशीतिजिनचैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

नन्दीश्वरद्वीप

यह अरघ कियो निजहेत, तुमको अरपतु हों।
'द्यानत' कीज्यो शिवखेत, भूमि समरपतु हों॥
नन्दीश्वर श्रीजिनधाम, बावन पूज करों।
वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनन्द भाव धरों॥

ॐ ह्रींश्रीनन्दीश्वरद्वीपे-द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ-जिनप्रतिमाभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दशलक्षण

आठों दरब संवार, 'द्यानत' अधिक उछाह सों।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजों सदा॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मांगाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय

आठ दरब निरधार, उत्तम सो उत्तम लिये।
जनम रोग निरवार सम्यक् रत्नत्रय भजूँ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

सरस्वती

जलचन्दनअक्षतफूल चरु, अरु दीपधूप अति फल लावै।
पूजा को ठानत जो तुम जानत, सो नर 'द्यानत' सुख पावै॥
तीर्थङ्कर की ध्वनि गणधर ने सुनी अङ्ग रचे चुनि ज्ञानमई।
सो जिनवर वानी शिवसुखदानी, त्रिभुवनमानी पूज्य भई॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भव सरस्वतीदेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

आचार्य श्री विद्यासागर जी

भावों की निर्मल सरिता में, अवगाहन करने आया हूँ।
मेरा सारा दुख दर्द हरो, यह अर्घ भेटने लाया हूँ॥
हे तपो मूर्ति! हे आराधक! हे योगीश्वर! हे महासन्त!।
यह 'अरुण' कामना देख सके, युग-युग तक आगामी बसन्त॥

ॐ ह्रूं श्री आचार्य विद्यासागरमुनीन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सिद्धचक्र विधान

पं. सन्तलाल जी कृत

जिनाधीश शिवईश नमि, सहसगुणित विस्तार।
सिद्धचक्र पूजा रचों, शुद्ध त्रियोग संभार॥
नीत्याश्रित धनपति सुधी, शीलादिक गुण खान।
जिनपद अम्बुज भ्रमर मन, सो प्रशस्त यजमान॥
देश काल विधि निपुणमति, निर्मल भाव उदार।
मधुर बैन नयना सुघर, सो याजक निरधार॥
रत्नत्रयमण्डित महा, विषय - कषाय न लेश।
संशयहरण सुहितकरन, करत सुगुरु उपदेश॥

छप्पय

निर्मल मण्डप भूमि दरब - मंगल करि सोहत।
सुरभि सरस शुभ पुष्प-जाल, मण्डित मन मोहत॥
यथायोग्य सुन्दर मनोज्ञ, चित्राम अनूपा।
दीरघ मोल सुडोल वसन, झखझोल सरूपा॥
हो वित्त सार प्रासुक दरब, सरब अंग मन को हरै।
सो महाभाग आनन्द सहित, जो जिनेन्द्र अर्चा करै॥

दोहा

सुर-मुनि मन आनन्दकर, ज्ञान सुधारस धार।
सिद्धचक्र सो थापहूं, विधिदव-जल उनहार॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अर्हं शब्द प्रसिद्ध अर्द्ध-मात्रिक महा,
अकारादि स्वर मण्डित अति शोभा लहा।
अति पवित्र अष्टाङ्ग अर्घ करि लायके,
पूरब दिशि पूजों अष्टाङ्ग नमायके॥ 1॥

ॐ ह्रीं अर्हं अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये नमः पूर्वदिशि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा

वर्ण कवर्ग महान, अष्ट पूर्व विधि अर्घ ले।
भक्तिभाव उर ठान, पूजों हो आग्नेय दिशि ॥ 2 ॥

ॐ ह्रीं अर्हं क ख ग घ ङअनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये आग्नेयदिशि अर्घ्यं निर्व.।

वर्ण चवर्ग प्रसिद्ध, वसुविधि अर्घ उतारिके।
मिलि है वसुविधि रिद्धि, दक्षिण दिशि पूजा करौं ॥3 ॥

ॐ ह्रीं अर्हं च छ ज झ ञ अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये दक्षिणदिशि अर्घ्यं निर्व.।

वर्ण टवर्ग प्रशस्त, जल फलादि शुभ अर्घ ले।
पाऊँ सब विधि स्वस्ति,नैऋत दिशि अर्चा करौं ॥ 4 ॥

ॐ ह्रीं अर्हं ट ठ ड ढ ण अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये नैऋत्यदिशि अर्घ्यं निर्व.।

वर्ण तवर्ग मनोग, यथायोग्य कर अर्घ धरि।
मिलि है सब शुभ योग, पूजन करि पश्चिम दिशा ॥ 5 ॥

ॐ ह्रीं अर्हं त थ द ध न अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये पश्चिमदिशि अर्घ्यं निर्व.।

वर्ण पवर्ग सुभाग, करूँ आरती अर्घ ले।
सब विधि आरत त्याग, वायव दिशि पूजा करौं ॥ 6 ॥

ॐ ह्रीं अर्हं प फ ब भ म अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये वायव्यदिशि अर्घ्यं निर्व.।

वर्ण यवर्गी सार, दर्व-अर्घ वसु द्रव्य करि।
भाव अर्घ उर धार, उत्तर दिशि पूजा करौं॥ 7 ॥

ॐ ह्रीं अर्हं य र ल व अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये उत्तरदिशि अर्घ्यं निर्व.।

शेष वर्ण चउ अन्त, उत्तम अर्घ बनाइकें।
नसे कर्म वसु भन्त, पूजों हो ईशान दिशि ॥ 8 ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श ष स ह अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये ईशानदिशि अर्घ्यं निर्व.।

विधान के अर्घ्य

प्रथम पूजा का अर्घ्य

करि दर्व अर्घ वसु जात, यातैं ध्यावत हूँ,
अष्टाङ्ग सुगुण विख्यात, तुम ढिंग पावत हूँ।
अन्तरगत अष्ट-स्वरूप, गुणमई राजत है,
नमूँ सिद्धचक्र शिवभूप, अचल विराजत हैं॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने नमः अट्ठगुणसंयुक्तेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वितीय पूजा का अर्घ्य

शुभ नीर वर काश्मीर चन्दन धवल अक्षत युत अनी,
वर पुष्पमाल विशाल चरु सु रसाल दीपक दुति मनी।
वर धूप पक्व मधुर सुफल लै अर्घ अठ विधि संचरूँ,
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिने नमः षोडशगुणसंयुक्ताय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

तृतीय पूजा का अर्घ्य

वसुविधि अर्घ देउँ तुम मम द्यो, वसुविधि गुण सुखदाई।
जासु पाय वसु त्रास न पाऊँ, संत कहे हर्षाई॥
तुम पूजो रे भाई, सिद्धचक्र बत्तीसगुण, तुम पूजो रे भाई॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने द्वात्रिंशद्गुणसंयुक्ताय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

चतुर्थ पूजा का अर्घ्य

निरघ उपावन पावन वसुविधि, अर्घ हर्ष ठाई।
भेंट धरत तुम पद मैं पाऊँ, निर-आकुलताई॥
सिद्धगण पूजो हरषाई, चौसठ गुण नाम विधिमाला।
सुमरों सुखदाई, सिद्धगण पूजो रे भाई॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुःषष्ठिगुणसंयुक्ताय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पंचम पूजा का अर्घ्य

एक से एक अधिक सोहत वसु, जाति अर्घ करि चरण नमूँ हूँ,
आनंद आरति आरत तजिकै, परमारथ हित कुमति वमूँ हूँ।
लोकाधीश शीश चूड़ामणि, सिद्धचरण उर धारा हो,
चौंसठि दुगुण सुगुण मणि सुवरण, सुमरत ही भवपारा हो॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टाविंशत्यधिकशतगुण-संयुक्ताय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

षष्ठ पूजा का अर्घ्य

समकित विमल वसु अंगयुत करि अर्घ अंतर भावहीं,
वसु दरब अर्घ बनाय उत्तम देहु हर्ष उपावहीं।
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं,
द्वै अर्द्धशत षट् अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने षड्पञ्चाशदधिकद्विशतगुण-संयुक्ताय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

सप्तम पूजा का अर्घ्य

तुमसे स्वामी के पद सेवत, यह विधि दुष्ट रंक कहा कर है।
ज्यों मयूरध्वनि सुनि अहि निज बिल, विलय जाय छिन बिलम न धरहै॥
तातैं तुम पद अर्घ उतारण, विरद उचारण करहुँ मुदामी॥
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुख धामी॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने द्वादशाधिकपञ्चशतगुण-संयुक्ताय निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम पूजा का अर्घ्य

अष्टाङ्ग मूल सु विधि हरो निज अष्ट गुण पायो सही।
अष्टार्द्ध गति संसार मेट सु अचल ह्वै अष्टम मही॥
यातैं उचित ही है जु अठविध अर्घ सों पूजा करूँ॥
इक सहस अरु चौबीस गुण-गण भावयुत मन में धरूँ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्र गुणसंयुक्ताय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

प्रथम पूजा

ऊरध अधो सुरेफ सबिन्दु हकार विराजै,
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजै।
वर्ग्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व सन्धिधर,
अग्रभाग में मन्त्र अनाहत सोहत अतिवर॥
पुनि अन्त ह्रीं बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नाग को।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मङ्गल करो॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं अष्टगुणसंयुक्तश्रीसिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

सूक्ष्मादिक गुण सहित है, कर्म रहित नीरोग।
सिद्धचक्र सो थापहूँ, मिटै उपद्रव योग॥

इति यन्त्र स्थापनार्थं पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

शीतल शुभ सुरभि सु नीर, कंचन कुंभ भरों,
पाऊँ भवसागर तीर, आनंद भेंट धरों।
अन्तरगत अष्ट-स्वरूप, गुणमई राजत हैं,
नमूँ सिद्धचक्र शिवभूप, अचल विराजत हैं॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने नमः अट्ठगुणसंयुक्तेभ्यो जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन तुम वंदन हेत, उत्तम मान्य गिना,
नातर सब काष्ठ समेत, ईंधन था ही बना।
अन्तरगत अष्ट-स्वरूप, गुणमई राजत हैं,
नमूँ सिद्धचक्र शिवभूप, अचल विराजत हैं॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने नमः अट्ठगुणसंयुक्तेभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

दीरघ शशि किरण समान, अक्षत लावत हूँ,
शशिमण्डल सम बहुमान, पूज रचावत हूँ।

अन्तरगत अष्ट-स्वरूप, गुणमई राजत हैं,
नमूँ सिद्धचक्र शिवभूप, अचल विराजत हैं॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने नमः अट्ठगुणसंयुक्तेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

तुम चरणचन्द्र के पास, पुष्प धरे सोहैं,
मनुँ नक्षत्रन की रास, सोहत मन मोहैं।
अन्तरगत अष्ट-स्वरूप, गुणमई राजत हैं,
नमूँ सिद्धचक्र शिवभूप, अचल विराजत हैं॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने नमः अट्ठगुणसंयुक्तेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम नेवज बहु भाँति, सरस सुधा साने,
अहमिन्द्रन मन ललचाय, भक्षण उमगाने।
अन्तरगत अष्ट-स्वरूप, गुणमई राजत हैं,
नमूँ सिद्धचक्र शिवभूप, अचल विराजत हैं॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने नमः अट्ठगुणसंयुक्तेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

फैली दीपन की जोत, अति परकाश करै,
जिम स्याद्वाद उद्योत, संशय तिमिर हरै।
अन्तरगत अष्ट-स्वरूप, गुणमई राजत हैं,
नमूँ सिद्धचक्र शिवभूप, अचल विराजत हैं॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने नमः अट्ठगुणसंयुक्तेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धरि अग्नि धूप के ढेर, गन्ध उड़ावत हूँ,
कर्मों की धूप बखेर, ठोंक जरावत हूँ।
अन्तरगत अष्ट-स्वरूप, गुणमई राजत हैं,
नमूँ सिद्धचक्र शिवभूप, अचल विराजत हैं॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने नमः अट्ठगुणसंयुक्तेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

जिम धर्म वृक्ष की डाल, शिवफल सोहत हैं,
इम धरि फल कञ्चन थाल, भविजन मोहत हैं।
अन्तरगत अष्ट-स्वरूप, गुणमई राजत हैं,
नमूँ सिद्धचक्र शिवभूप, अचल विराजत हैं॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने नमः अट्ठगुणसंयुक्तेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

करि दर्व अर्घ वसु जात, यातैं ध्यावत हूँ,
अष्टाङ्ग सुगुण विख्यात, तुम ढिंग पावत हूँ।
अन्तरगत अष्ट-स्वरूप, गुणमई राजत है,
नमूँ सिद्धचक्र शिवभूप, अचल विराजत हैं॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने नमः अट्ठगुणसंयुक्तेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गीता

निर्मल सलिल शुभवास चन्दन धवल अक्षत युत अनी,
शुभ पुष्प मधुकर नित रमैं चरु प्रचुर-स्वाद सुविधि घनी।
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले,
करि अर्घ सिद्धसमूह पूजत कर्म-दल सब दलमले॥1॥
ते क्रमावर्त नशाय युगपत ज्ञान निर्मल रूप हैं,
दुख जन्म टार अपार गुण सूक्षम सरूप अनूप हैं।
कर्माष्टि बिन त्रैलोक्य पूज अदूज शिव कमलापती,
मुनि ध्येय सेय अमेय चहुँ गुण गेह द्यो हम शुभमती॥2॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धचक्राधिपतये सम्मत्तणाणादिअट्ठगुणसंजुत्ताणं अनर्घ्यपद प्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आठ गुण सहित अर्घ

मिथ्या-त्रय चउ आदि कषाया, मोह नाश छायक गुण पाया।
निज अनुभव प्रत्यक्ष सरूपा, नमूँ सिद्ध समकित गुणभूपा॥

ॐ ह्रीं सम्यक्त्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 1॥

सकल त्रिधा षट् द्रव्य अनन्ता, युगपत जानत हैं भगवन्ता।
निर आवरण विशद स्वाधीना, ज्ञानानन्द परम रस लीना॥

ॐ ह्रीं अनन्तज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 2॥

चक्षु अचक्षु अवधि विधि नाशी, केवल दर्श जोति परकाशी।
सकल ज्ञेय युगपत अवलोका, उत्तम दर्श नमूँ सिद्धों का॥

ॐ ह्रीं अनन्तदर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 3॥

अन्तराय विधि प्रकृति अपारा, जीवशक्ति घाते निरधारा।
ते सब घात अतुल बल स्वामी, लसत अखेद सिद्ध प्रणमामी॥

ॐ ह्रीं अनन्तवीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 4॥

रूपातीत मन इन्द्रिय ताहीं, मनपर्यय हूँ जानत नाहीं।
अलख अनूप अमित अविकारी, नमूँ सिद्ध सूक्षम गुणधारी॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मत्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 5॥

एकक्षेत्र-अवगाह स्वरूपा, भिन्न-भिन्न राजैं चिद्रूपा।
निज-परघात विभाव विडारा, नमूँ सहित अवगाह अपारा॥

ॐ ह्रीं अवगाहनत्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 6॥

परकृत ऊँच-नीच पद नाहीं, रमत निरन्तर निजपद माँहीं।
उत्तम अगुरुलघू गुण भोगी, सिद्धचक्र ध्यावैं नित योगी॥

ॐ ह्रीं अगुरुलघुत्वात्मकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥7॥

नित्य निरामय भवभयभञ्जन, अचल निरन्तर शुद्ध निरञ्जन।
अव्याबाध सोई गुण जानो, सिद्धचक्र पूजन मन मानो॥

ॐ ह्रीं अव्याबाधत्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥8॥

जयमाला

जग आरत भारत महा, गारत करि जय पाय।
विजय आरती तिन कहूँ, पुरुषारथ गुणगाय॥

पद्धरि

जय करण कृपाण सु प्रथम बार, मिथ्यात सुभट कीनो प्रहार।
दृढ़ कोट विपर्यय मति उलङ्घ, पायो समकित थल थिर अभङ्ग॥1॥

निज-पर विवेक अन्तर पुनीत, स्व रुचि वरतायो राजनीति।
जग विभव विभाव असार एह, स्वातम सुखरस विपरीत देह॥2॥

तिन नाशन लीनो दृढ़ संभार, शुद्धोपयोग चित चरण-सार।
निर्ग्रन्थ कठिन मारग अनूप, हिंसादिक टारन सुलभ रूप॥3॥

द्वयबीस परीषह सहन वीर, बहिरन्तर संयम धरण धीर।
द्वादश भावन दश भेद धर्म, विधि नाशन बारह तप सु पर्म॥4॥

शुभ दया हेत धरि समिति सार, मन शुद्धकरण त्रय गुप्ति धार।
एकाकी निर्भय निःसहाय, विचरो प्रमत्त नाशन उपाय॥5॥

लखि मोहशत्रु परचण्ड जोर, तिस हनन शुकल दल ध्यान जोर।
आनन्द वीर रस हिये छाय, क्षायक श्रेणी आरम्भ थाय॥6॥

बारम गुणथानक ताहि नाश, तेरम पायो निजपद प्रकाश।
नव केवललब्धि विराजमान, दैदीप्यमान सोहे सुभान॥7॥

तिस मोह दुष्ट आज्ञा एकान्त, थी कुमति स्वरूप अनेक भांति।
जिनवाणी करि ताको विहण्ड, करि स्याद्वाद आज्ञा प्रचण्ड॥8॥

बरतायो जग में सुमति रूप, भविजन पायो आनन्द अनूप।
थे मोह नृपति उपकरण शेष, चारों अघातिया विधि विशेष॥9॥

है नृपति सनातन रीति एह, अरि विमुख न राखे नाम तेह।

यों तिन नाशन उद्यम सु ठानि,आरभ्यो परम शुकल सु ध्यान ॥ 10 ॥

तिस बलकरि तिनकी थिति विनाश, पायो निर्भय सुखनिधि निवास।
यह अक्षय ज्योति लई अबाध, पुनि अंश न व्यापो शत्रु व्याध ॥ 11 ॥

शाश्वत स्वाश्रित सुखश्रेय स्वामि, हो शान्त सन्त तुमको प्रणाम।
अन्तिम पुरुषारथ फल विशाल, तुम विलसौ सुख सौं अमित काल ॥12 ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सम्मत्तणाणादिअट्ठगुणसंजुत्ताणं सिद्धेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्व.स्वाहा।

परसमय विदूरित, पूरित निजसुख, समयसार चेतनरूपा।
नाना प्रकार, पर का विकार, सब टार लसैं सब गुण भूपा॥
ते निरावर्ण, निर्देह निरूपम, सिद्धचक्र परसिद्ध जजूं।
सुर-मुनि नित ध्यावैं, आनन्द पावैं, मैं पूजत भव वास तजूं॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

जाप - ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा नमः। (108 बार)

द्वितीय पूजा

ऊरध अधो सुरेफ सबिन्दु हकार विराजै,
अकारादि स्वरलिप्त कर्णिका अन्त सु छाजै।
वर्ग्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व सन्धिधर,
अग्रभाग में मन्त्र अनाहत सोहत अतिवर॥
पुनि अन्त ह्रीं बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नाग को।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मङ्गल करो॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षोडशगुणसंयुक्ताय सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

सूक्ष्मादिक गुण सहित है, कर्म रहित नीरोग।
सिद्धचक्र सो थापहूँ, मिटै उपद्रव योग॥

इति यंत्रस्थापनार्थं पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

हिमशैल धवल महा कठिन पाषाण तुम जस रासतैं,
शरमाय अरु सकुचाय द्रव ह्वै वही गङ्गा तास तैं।
सम्बन्ध योग चितार चित भेटार्थ झारी में भरूँ,
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिने नमः षोडशगुणसंयुक्ताय जलं निर्व. स्वाहा।

काश्मीर चन्दन आदि अन्तर-बाह्य बहुविधि तप हरै,
यह कार्य-कारण लखि नमित मम भाव हूं उद्यम करै।
मैं हूँ दुखी भवताप से घसि मलय चरनन ढिंग धरूँ,
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिने नमः षोडशगुणसंयुक्ताय चन्दनं निर्व. स्वाहा।

सौरभ चमक जिस सह न सकि अम्बुज बसैं सरताल में,
शशि गगन बसि नित होत कृश अहिनिशि भ्रमैं इस ख्याल में।
सो अक्षतौघ अखण्ड अनुपम पुञ्ज धरि सन्मुख धरूँ,
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिने नमः षोडशगुणसंयुक्ताय अक्षतान् निर्व. स्वाहा।

जग प्रगट काम सुभट विकट कर हट करत जिय घट जगा,
तुम शील कटक सुघट निकट सरचाप पटक सुझट भगा।
इम पुष्पराशि सुवास तुम ढिंग कर सुयश बहु उच्चरूँ,
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिने नमः षोडशगुणसंयुक्ताय पुष्पं निर्व. स्वाहा।

जीवन सतावत नहिं अघावत क्षुधा डाइन सी बनी,
सो तुम हनी, तुम ढिंग न आवत, जान यह विधि हम ठनी।
नैवेद्य के संकेत करि निज क्षुधा नाशन विधि वरूँ,
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिने नमः षोडशगुणसंयुक्ताय नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

मैं मोह-अन्ध अशक्त अरु यह विकट भव वन है महा,
ऐसे रुले को ज्ञान दुति बिन पार निवरण हो कहाँ।
सो ज्ञानचक्षु उघार स्वामी दीप ले पायनि परूँ,
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिने नमः षोडशगुणसंयुक्ताय दीपं निर्व. स्वाहा।

प्रासुक सुगन्धित द्रव्य सुन्दर दिव्य घ्राण सुहावनो,
धरि अग्नि दश दिश वास पूरित कर्म धूल उडावनो।
तुम भक्ति-भाव उमंग करत सुगंध धूप सु विस्तरूँ,
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिने नमः षोडशगुणसंयुक्ताय धूपं निर्व. स्वाहा।

चित हरन अचित सुरंग रसपूरित विविध फल सोहने,
रसना लुभावन कल्पतरु के सुर-असुर मन मोहने।
भरि थाल कंचन भेंट धरि संसार फल तृष्णा हरूँ,
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिने नमः षोडशगुणसंयुक्ताय फलं निर्व. स्वाहा।

शुभ नीर वर काश्मीर चन्दन धवल अक्षत युत अनी,
वर पुष्पमाल विशाल चरु सु रसाल दीपक दुति मनी।
वर धूप पक्व मधुर सुफल लै अर्घ अठ विधि संचरूँ,
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिने नमः षोडशगुणसंयुक्ताय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

निर्मल सलिल शुभवास चन्दन धवल अक्षत युत अनी,
शुभ पुष्प मधुकर नित रमै चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी।
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले,
करि अर्घ सिद्ध–समूह पूजत कर्मदल सब दलमले॥
ते क्रमावर्त नशाय युगपत ज्ञान निर्मल रूप हैं,
दुख जन्म टाल अपार गुण सूक्षम सरूप अनूप हैं।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज अदूज शिव कमलापती,
मुनि ध्येय सेय अमेय, चहुँ गुण गेह, द्यो हम शुभमती॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये षोडशगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने महार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

सोलह गुण सहित अर्घ

त्रोटक

दर्शन आवर्णी प्रकृति हनी, स्थिती अवलोक सुभाव तनी।
इक साथ समान लखो सबही, नमूँ सिद्ध अनन्त दृगन अबही॥

ॐ ह्रीं अनन्तदर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥1॥

विधि ज्ञानावर्ण विनाश कियो, निजज्ञान स्वभाव विकाश लियो।
समयान्तर सर्व विशेष जनों, नमूँ ज्ञान अनन्त सु सिद्ध तनों॥

ॐ ह्रीं अनन्तज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥2॥

सुख अमृत पीवत स्वेद न हो, निज भाव विराजत खेद न हो।
असमान महाबल धारत हैं, हम पूजत पाप बिडारत हैं॥

ॐ ह्रीं अनन्तवीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥3॥

विपरीत सभीत पराश्रितता, अतिरिक्त धरै न करै थिरता।
परकी अभिलाष न सेवत हैं, निज भाविक आनन्द बेवत हैं॥

ॐ ह्रीं अनन्तसुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥4॥

निज आत्म विकाशक बोध लह्यो, भ्रम को परवेश न लेश रह्यो।
निजरूप सुधारस मग्न भये, हम सिद्धन शुद्ध प्रतीति नये॥

ॐ ह्रीं अनन्तसम्यक्त्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥5॥

निज भाव विडार विभाव न हो, गमनादिक भेद विकार न हो।
निजथान निरूपम नित्य बसे, नमूँ सिद्ध अनाचल रूप लसे॥

ॐ ह्रीं अचलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ 6 ॥

चौपाई

गुण पर्यय परिणति के भेद, अति सूक्षम असमान अछेद।
ज्ञान गहै, न कहै जड़ बैन, नमों सिद्ध सूक्षम गुण ऐन॥

ॐ ह्रीं अनन्तसूक्ष्मत्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥7॥

जन्म-मरण युत धरे न काय, रोगादिक संक्लेश न पाय।
नित्य निरंजन विगत विकार, अव्याबाध नमों सुखकार॥

ॐ ह्रीं अव्याबाधाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥8॥

एक पुरुष अवगाह प्रजन्त, राजत सिद्ध-समूह अनन्त।
एकमेकबाधा नहिं लहैं, भिन्न-भिन्न निजगुण में रहैं॥

ॐ ह्रीं अवगाहनगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥9॥

काययोग पर्यापति प्रान, अनवधि छिन-छिन होवे हान।
जरा कष्ट जग प्रानी लहै, नमों सिद्ध यह दोष न सहै॥

ॐ ह्रीं अजराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥10॥

काल–अकाल प्राण को नाश, पावे जीव मरन को त्रास।
तासौं रहित अमर अविकार, सिद्ध–समूह नमूँ सुखकार॥

ॐ ह्रीं अमराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥11॥

गुण–गुण प्रति है भेद अनन्त, यो अथाह गुणयुत भगवंत।
है परिमाण अगोचर तेह, अप्रमेय गुण वंदूँ एह॥

ॐ ह्रीं अप्रमेयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥12॥

भुजङ्गप्रयात

अनुकर्म तें फर्स वर्णादि जानो, किसी एक वीशेष को किं प्रमानो।
पराधीन आवर्ण अज्ञान त्यागी, नमूँ सिद्ध अत्येन्द्रिय ज्ञान भागी॥

ॐ ह्रीं अतीन्द्रियज्ञानधारकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 13॥

त्रिधा वेद भावित महा–कष्टकारे, रमण भाव सों आकुलित जीव सारे।
निजानंद रमणीय शिवनार स्वामी, नमों पुरुष आकृति सबै सिद्धनामी॥

ॐ ह्रीं अवेदाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 14॥

विशेषं सकल चेतना धार माहीं, भये लै भली विधि रहो भेद नाहीं।
तथा हीन आधिक्य को भाव टारी, नमों सिद्ध पूरण कला ज्ञानधारी॥

ॐ ह्रीं अभेदाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 15॥

निजानंद रस स्वाद में लीन अंता, मगन हो रहे राग वर्जित निरंता।
कहाँ लों कहूँ आपको पार नाहीं, धरों आपको आपही आप माँहीं॥

ॐ ह्रीं अविलीनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥16॥

जयमाला

पञ्च परम परमात्मा, रहित कर्म के फन्द।
जग प्रपञ्च विरहित सदा, नमो सिद्ध सुखकंद॥

त्रोटक

दुखकारन द्वेष विडारन हो, वश डारन राग निवारन हो।
भवि तारन पूरणकारण हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो॥ 1॥

समयामृत पूरित देव सही, पर आकृति मूरति लेश नहीं।
विपरीत विभाव निवारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ॥ 2 ॥
अखिना अभिना अछिना सुपरा, अभिदा अखिदा अविनाशवरा।
यमराज जरा दुखजारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ॥ 3 ॥
निर-आश्रित स्वाश्रित वासित हो, पर-आश्रित खेद विनाशित हो।
विधि धारन हारन पारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ॥ 4 ॥
अमुधा अछुधा अद्विधा अविधं, अकुधा सुसुधा सुबुधा सुसिधं।
विधि कानन दहन हुतासन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ॥5 ॥
शरनं चरनं वरनं मरणं, करनं धरनं डरनं हरनं।
तरनं भव-वारिधि तारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ॥ 6 ॥
भववारिधि त्रास विनाशन हो, दुखरास विनाश हुताशन हो।
निज दासन त्रास निवारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ॥ 7 ॥
तुम ध्यावत शाश्वत व्याधि दहै, तुम पूजत ही पद पूज लहै।
शरणागत संत उभारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ॥ 8 ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं अनन्तदर्शनज्ञानादिषोडशगुणसंयुक्तसिद्धेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिद्धवर्ग गुण अगम हैं, शेष न पावैं पार।
हम किंह विधि वरणन करैं, भक्तिभाव उर धार ॥ 9 ॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

जाप - ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा नमः। (108 बार)

तृतीय पूजा

ऊरध अधो सुरेफ सबिन्दु हकार विराजै,
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजै।
वर्ग्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व सन्धिधर,
अग्रभाग में मन्त्र अनाहत सोहत अतिवर॥
पुनि अन्त ह्रीं बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नाग को।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मङ्गल करो॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशद्गुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

सूक्ष्मादिक गुण सहित है, कर्म रहित नीरोग।
सिद्धचक्र सो थापहूँ, मिटै उपद्रव योग॥

इति यंत्रस्थापनार्थं पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

भव त्रासित आकुलित रहै भवि, कठिन मिटन दुखताई।
विमल चरण तुम सलिल धार दे, पायो सहज उपाई॥
तुम पूजो रे भाई, सिद्धचक्र बत्तीसगुण, तुम पूजो रे भाई॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने द्वात्रिंशद्गुणसंयुक्ताय जलं निर्व. स्वाहा।

जगवंदन परसत पद चंदन, महाभाग उपजाई।
हरिहर आदि लोकवर उत्तम, कर धर शीश चढ़ाई॥
तुम पूजो रे भाई, सिद्धचक्र बत्तीसगुण, तुम पूजो रे भाई॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने द्वात्रिंशद्गुणसंयुक्ताय चन्दनं निर्व. स्वाहा।

शिवनायक पूजन लायक तुम, यह महिमा अधिकाई।
अक्षयपद दायक अक्षत यह, सांचो नाम धराई॥
तुम पूजो रे भाई, सिद्धचक्र बत्तीसगुण, तुम पूजो रे भाई॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने द्वात्रिंशद्गुणसंयुक्ताय अक्षतान् निर्व. स्वाहा।

कामदाह अति ही दुखदायक, मम उर से न टराई।
ताहि निवारण पुष्प भेंट धर, मांगूँ वर शिवराई॥
तुम पूजो रे भाई, सिद्धचक्र बत्तीसगुण, तुम पूजो रे भाई॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने द्वात्रिंशद्गुणसंयुक्ताय पुष्पं निर्व. स्वाहा।

चरुवर प्रचुर क्षुधा नहिं मेंटत पूर परौ इन ताई।
भेंट करत तुम इनहूं न भेटूँ, रहुँ चिरकाल अघाई॥
तुम पूजो रे भाई, सिद्धचक्र बत्तीसगुण, तुम पूजो रे भाई॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने द्वात्रिंशद्गुणसंयुक्ताय नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

दिव्य रत्न इस देश–काल में, कहै कौन है नाँई।
तुम पद भेंटे दीप प्रकट यह, चिंतामणि पद पाई॥
तुम पूजो रे भाई, सिद्धचक्र बत्तीसगुण, तुम पूजो रे भाई॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने द्वात्रिंशद्गुणसंयुक्ताय दीपं निर्व. स्वाहा।

धूप हुताशन वासन में धरि, दसदिशि वास वसाई।
तुम पद पूजत या विधि, वसु विधि, ईंधन जर हो जाई॥
तुम पूजो रे भाई, सिद्धचक्र बत्तीसगुण, तुम पूजो रे भाई॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने द्वात्रिंशद्गुणसंयुक्ताय धूपं निर्व. स्वाहा।

सर्वोत्तम फल द्रव्य ठान मन, पूजूँ हूँ तुम पाई।
जासौं जजैं मुक्तिपद पइयै, सर्वोत्तम फलदाई॥
तुम पूजो रे भाई, सिद्धचक्र बत्तीसगुण, तुम पूजो रे भाई॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने द्वात्रिंशद्गुणसंयुक्ताय फलं निर्व. स्वाहा।

वसुविधि अर्घ देउँ तुम मम द्यो, वसुविधि गुण सुखदाई।
जासु पाय वसु त्रास न पाऊँ, संत कहे हर्षाई॥
तुम पूजो रे भाई, सिद्धचक्र बत्तीसगुण, तुम पूजो रे भाई॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने द्वात्रिंशद्गुणसंयुक्ताय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

गीता

निर्मल सलिल शुभवास चन्दन धवल अक्षत युत अनी,
शुभ पुष्प मधुकर नित रमै चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी।
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले,
करि अर्घ सिद्ध–समूह पूजत कर्मदल सब दलमले॥ 1॥
ते क्रमावर्त नशाय युगपत ज्ञान निर्मल रूप हैं,
दुख जन्म टाल अपार गुण सूक्षम सरूप अनूप हैं।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज अदूज शिव कमलापती,
मुनि ध्येय सेय अमेय चहुँ गुण गेह द्यो हम शुभमती॥ 2॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये श्रीसिद्धपरमेष्ठिने द्वात्रिंशद्‌गुणसंयुक्ताय महार्घ्यं.।

अथ बत्तीसगुण सहित अर्घ

पद्धरि

चेतन विभाव पुद्‌गल विकार, है शुद्ध बुद्ध तिस निमित टार।
दृगबोध सुरूप स्वभाव एह, नमूँ शुद्ध चेतना सिद्ध देह॥

ॐ ह्रीं शुद्धचेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 1॥

मति आदि भेद विच्छेद कीन, क्षायक विशुद्ध निज भाव लीन।
निरपेक्ष निरंतर निर्विकार, नमूँ शुद्ध ज्ञानमय सिद्ध सार॥

ॐ ह्रीं शुद्धज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 2॥

सर्वाङ्ग चेतना व्यक्तरूप, तुम हो चेतन व्यापक सरूप।
पर लेश न निज परदेश माहिं, नमूँ सिद्ध शुद्ध चिद्रूप ताहिं॥

ॐ ह्रीं शुद्धचिद्रूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 3॥

अंतरविधि उदय विपाक टार, तुम जातिभेद बाहिज विडार।
निज परिणति में नहिं लेश शेष, नमूँ शुद्धरूप गुणगण विशेष॥

ॐ ह्रीं शुद्धस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 4॥

रागादिक परिणति को विध्वंस, आकुलित भाव राखो न अंश।
पायो निज शुद्धस्वरूप भाव, नमूँ सिद्धवर्ग धर हिये चाव॥

ॐ ह्रीं शुद्धस्वरूपभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 5॥

दोहा

तिहूं काल में ना डिगैं, रहै निजानंद थान।
नमूँ शुद्ध दृढ़ गुण सहित, सिद्धराज भगवान॥

ॐ ह्रीं शुद्धदृढीयसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 6॥

निज आवर्तक में बसे, नित ज्यों जलधि कलोल।
नमूँ शुद्ध आवर्तकी, कर निज हिये अडोल॥

ॐ ह्रीं शुद्धावर्तकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 7॥

परकृत कर उपजो नहीं, ज्ञानादिक निज भाव।
नमों सिद्ध निज अमलपद, पायो सहज सुभाव॥

ॐ ह्रीं शुद्धस्वयंभुवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 8॥

पद्धरि

स्वै सिद्ध अनंत चतुष्ट पाय, निज शुद्ध-चेतनापुञ्ज काय।
स्वै शुद्ध सबै पायो संयोग, तुम सिद्धराज सु शुद्ध जोग॥

ॐ ह्रीं शुद्धयोगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 9॥

एकेन्द्रिय आदिक जाति भेद, हीनाधिक नामा प्रकृति छेद।
संपूरण लब्धि विशुद्ध जात, हम पूजैं हैं पद जोर हाथ॥

ॐ ह्रीं शुद्धजाताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 10॥

दोहा

महातेज आनंदघन, महातेज परताप।
नमों सिद्ध निजगुण सहित, दिपै अनूपम आप॥

ॐ ह्रीं शुद्धतपसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 11॥

पद्धरि

वर्णादिक को अधिकार नाहिं, संस्थान आदि आकार नाहिं।
अति तेजपिण्ड चेतन अखण्ड, नमूँ शुद्ध सुमूर्तिक कर्मखण्ड ॥

ॐ ह्रीं शुद्धमूर्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 12॥

बाहिज पदार्थ को इष्टमान, नहिं रमत ममत तासो जु ठान।
निज अनुभवरस में सदा लीन, तुम शुद्ध सुखी हम नमन कीन॥

ॐ ह्रीं शुद्धसुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 13॥

धर्म अर्थ अरु काम बिन, अंतिम पौरुष साध।
भये शुद्ध पुरुषारथी, नमूँ सिद्ध निरबाध॥

ॐ ह्रीं शुद्धपौरुषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 14॥

पुद्गल निरमापित वर्ण युक्त, विधि नाम रचित तासों विमुक्त।
पुरुषांकित चेतनमय प्रदेश, ते शुद्ध शरीर नमूँ हमेश॥

ॐ ह्रीं शुद्धशरीराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 15॥

पूरण केवलज्ञानगम, तुम स्वरूप निर्बाध।
और ज्ञान जाने नहीं, नमों सिद्ध तज आध॥

ॐ ह्रीं शुद्धप्रमेयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 16॥

दरशन ज्ञान सुभेद है, चेतन लक्षण योग।
पूरण भई विशुद्धता, नमों शुद्ध उपयोग॥

ॐ ह्रीं शुद्धोपयोगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 17॥

परद्रव्य जनित भोगोपभोग, ते खेदरूप प्रत्यक्ष योग।
निजरस स्वादन है भोगसार, सो भोगो तुम हम नमस्कार॥

ॐ ह्रीं शुद्धभोगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 18॥

निर्ममत्व युगपत लखो, तुम सब लोकालोक।
शुद्ध ज्ञान तुमको लखे, नमों शुद्ध अवलोक॥

ॐ ह्रीं शुद्धावलोकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 19॥

निरइच्छुक मन वेदी महान, प्रज्वलित अग्नि है शुक्लध्यान।
निर्भेद अर्घ दे मुनि महान, तुम ही पूजत अर्हंत जान॥

ॐ ह्रीं शुद्धार्हज्जाताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 20॥

आदि-अंत वर्जित महा, शुद्ध द्रव्य की जात।
स्वयंसिद्ध परमात्मा, प्रणमूँ शुद्ध निपात॥

ॐ ह्रीं शुद्धनिपाताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 21॥

लोकालोक अनंतवें, भाग वसो तुम आन।
ये तुमसों अति भिन्न हैं, शुद्ध गर्भ यह जान॥

ॐ ह्रीं शुद्धगर्भाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 22॥

लोकशिखर शुभ थान में, तथा निजातम वास।
शुद्ध वास परमात्मा, नमों सुगुण की रास॥

ॐ ह्रीं शुद्धवासाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 23॥

अति विशुद्ध निज धर्म में, वसत नशत सब खेद।
परम वास नमि सिद्ध को, वासी वास अभेद॥

ॐ ह्रीं विशुद्धपरमवासाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 24॥

बहिरंतर द्वै विधि रहित, परमातम पद पाय।
निर्विकार परमात्मा, नमूँ नमूँ सुखदाय॥

ॐ ह्रीं शुद्धपरमात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 25॥

हीन अधिक इकदेश को, विकल विभाव उछेद।
शुद्ध-अनंत दशा लई, नमूँ सिद्ध निर्भेद॥

ॐ ह्रीं शुद्धानन्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 26॥

त्रोटक

तुम राग-विरोध विनाश कियो, निजज्ञान सुधारस स्वाद लियो।
तुम पूरण शान्ति विशुद्ध धरो, हमको इकदेश विशुद्ध करो॥

ॐ ह्रीं शुद्धशान्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 27॥

विद पण्डित नाम कहावत है, विद अंत जु अंतहि पावत है।
निजज्ञान प्रकाश सु अंत लहो, कुछ अंश न जानन माहिं रहो॥

ॐ ह्रीं शुद्धविदन्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 28॥

वरणादिकभेद विडारन हो, परिणाम कषाय निवारन हो।
मन इन्द्रिय ज्ञान न पावत ही, अति शुद्ध निरूपम ज्योति लही॥

ॐ ह्रीं शुद्धज्योतिर्जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 29॥

जन्मादिक व्याधि न फेरि धरो, मरणादिक आपद नाहिं वरो।
निर्वाण महान विशुद्ध यहो, जिन-शासन में परसिद्ध कहो॥

ॐ ह्रीं शुद्धनिर्वाणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ 30 ॥

करि अंत न गर्भ लियो फिर के, जनमे शिववास जनम धरके।
जिनको फिर गर्भ न हो कबहूं, शिवराज कहाय नमूँ अब हू॥

ॐ ह्रीं शुद्धसन्दर्भगर्भाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ 31 ॥

जग जीवन पाप नशायक हो, तुम आप महा सुखनायक हो।
तुम मंगल मूरति शांत सही, सब पाप नशै तुम पूजत ही॥

ॐ ह्रीं शुद्धशान्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ 32 ॥

पंच परमपद ईश है, पंचमगति जगदीश।
जगत प्रपंच रहित बसे, नमूँ सिद्ध जग ईश॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धचक्राधिपतये द्वात्रिंशतगुणसंयुक्ताय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ 33 ॥

जयमाला

परम ब्रह्म परमात्मा, परम ज्योति शिव थान।
परमातम पद पाइयो, नमों सिद्ध भगवान॥

जन्म मरण कष्ट को टारि अमरा भये,
जरादिरोग व्याधि परिहार अजरा भये।
जय द्विविध कर्ममल जार अमला भये,
जय दुविधि टार संसार अचला भये॥ 1 ॥

जय जगतवास तज जगतस्वामी भये,
जय बिना नाम थिर परमनामी भये।
जय कुबुद्धिरूप तजि सुबुधिरूपा भये,
जय निषधदोष तज सुगुण भूपा भये॥ 2 ॥

कर्मरिपु नाशकर परम जय पाइयो,
लोकत्रयपूरि तुम सुजस घन छाइयो।
इंद्र नागेंद्र धर शीस तुम पद जजैं,
महा वैराग रस पाग मुनिगण भजैं॥ 3 ॥

विघनवन दहन को अघन घन पौन हो,
सघन गुणरास के वास को भौन हो।
शिवतिया वशिकरन मोहिनी मंत्र हो,
कर्म छयकार वैताल के यंत्र हो॥ 4॥

कोटिथित क्लेश की मेटि शिवकर रहो,
उपल की नकल हो अचल इकथल रहो।
स्वप्न में हूँ न निज अर्थ को पावहीं,
जे महा खल न तुम ध्यान धर ध्यावहीं॥ 5॥

आपके जाप बिन पाप सब भेंटही,
पाप की ताप को पाप कब मेंटही।
'संत' निज दास की आस पूरी करो,
जगत तें काढ़ निज चरण में ले धरो॥6॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये नमः द्वात्रिंशद्गुणसंयुक्त-सिद्धेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जय अमल अनूपं, शुद्ध स्वरूपं, निखिल निरूपं धर्मधरा।
जय विघन नशायक, मंगल दायक, तिहुँ जगनायक परम्परा॥
तुम गुण अमल अपार,अनुभव तैं भव भय नशैं।
सन्त सदा चित धार, शांति करौ भव तप हरौ॥

इत्याशीर्वादः

जाप - ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा नमः। (108 बार)

चतुर्थ पूजा

ऊरध अधो सुरेफ सबिन्दु हकार विराजै,
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजै।
वर्ग्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व सन्धिधर,
अग्रभाग में मन्त्र अनाहत सोहत अतिवर॥
पुनि अन्त ह्रीं बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नाग को।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मङ्गल करो॥ 1॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं चतुष्षष्टिगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

सूक्ष्मादिक गुण सहित है, कर्म रहित नीरोग।
सिद्धचक्र सो थापहूँ, मिटै उपद्रव योग॥ 2॥

इति यंत्रस्थापनार्थं पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

त्रिभुवन उपमा वास लखै, तुम पद–अम्बुज के माई।
निर्मल जल की धार देहु, अवशेष करण ताई॥
सिद्धगण पूजो हरषाई, चौसठ गुण नामा विधिमाला।
सुमरों सुखदाई, सिद्धगण पूजो रे भाई॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुःषष्ठिगुणसंयुक्ताय जलं निर्व. स्वाहा।

तुम पद अम्बुज वास लेन मनु, चन्दन मन भाई।
निजसों गुणाधिक्य संगति को, लहि मन हर्षाई॥ सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुःषष्ठिगुणसंयुक्ताय चन्दनं निर्व. स्वाहा।

क्षीरज धान सुवासित नीरज, करसौं छर लाई।
अंगुल से तंदुल सों पूजत, अक्षय पद पाई॥ सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुःषष्ठिगुणसंयुक्ताय अक्षतान् निर्व. स्वाहा।

धूलिसाल छवि हरण विवर्जित, फूलमाल लाई।
कामशूल निर्मूल करण को, पूजहुं तुम पाई॥
सिद्धगण पूजो हरषाई, चौसठ गुण नामा विधिमाला।
सुमरों सुखदाई, सिद्धगण पूजो रे भाई॥
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुःषष्ठिगुणसंयुक्ताय पुष्पं निर्व. स्वाहा।
भूख व्याधि अक्षीण लगी है, पूरत है नाई।
चरू लाय तुम पद पूजत हो, पूरन शिवराई॥ सिद्ध...॥
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुःषष्ठिगुणसंयुक्ताय नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।
दीपनप्रति तुम पद नित पूजत, शिवमारग दरशाई।
घोर अंध संसार हरण की, भली सूझ पाई॥ सिद्ध...॥
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुःषष्ठिगुणसंयुक्ताय दीपं निर्व. स्वाहा।
कृष्णागरु कर्पूर पूर घट, अग्नि से प्रजलाई।
उड़ै धूम यह उड़ै किधों जर करमन की छाई॥ सिद्ध...॥
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुःषष्ठिगुणसंयुक्ताय धूपं निर्व. स्वाहा।
मधुर मनोग सु प्रासुक फलसों, पूजों शिवराई।
यथायोग विधि फल को दे गुण, फल की अधिकाई॥ सिद्ध...॥
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुःषष्ठिगुणसंयुक्ताय फलं निर्व. स्वाहा।
निरघ उपावन पावन वसुविधि, अर्घ हर्ष ठाई।
भेंट धरत तुम पद मैं पाऊँ, निर-आकुलताई॥ सिद्ध...॥
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुःषष्ठिगुणसंयुक्ताय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।
निर्मल सलिल शुभवास चन्दन धवल अक्षत युत अनी,
शुभ पुष्प मधुकर नित रमै चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी।
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले,
करि अर्घ सिद्ध-समूह पूजत कर्मदल सब दलमले॥1॥

ते क्रमावर्त नशाय युगपत ज्ञान निर्मल रूप हैं,
दुख जन्म टाल अपार गुण सूक्षम सरूप अनूप हैं।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज अदूज शिव कमलापती,
मुनि ध्येय सेय अमेय चहुँ गुण गेह द्यो हम शुभमती ॥ 2 ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं चतुष्षष्टि गुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने महार्घ्यं निर्व.स्वाहा।

अथ चौसठ गुण अर्घ्य

चउ घाती कर्म नशायो, अरहंत परम पद पायो।
द्वै धर्म कह्यो सुखकारा, नमूँ सिद्ध भये अविकारा ॥

ॐ ह्रीं अर्हज्जिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ 1 ॥

संक्लेश भाव परिहारी, भये अमल अवधि बलधारी।
सो अतिशय केवलज्ञाना, उपजाय लियो शिवथाना ॥

ॐ ह्रीं अवधिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ 2 ॥

निर्मल चारित्र संभारा, परमावधि पटल उघारा।
केवल पायो तिस कारण, नमूँ सिद्ध भये जग तारण ॥

ॐ ह्रीं परमावधिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ 3 ॥

वर्द्धमान विशद परिणामी, सर्वावधि के हो स्वामी।
अन्तिम वसुकर्म नसाया, नमूँ सिद्ध भये सुखदाया ॥

ॐ ह्रीं सर्वावधिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ 4 ॥

जिस अन्त अवधि को नाहीं, तुम उपजायो पद ताहीं।
निर्मल अवधी गुणधारी, सब सिद्ध नमूँ सुखकारी ॥

ॐ ह्रीं अनन्तावधिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ 5 ॥

तप बल महिमा अधिकाई, बुधि कोष्ठ रिद्धि उपजाई।
श्रुत ज्ञान कोष्ठ भण्डारी, नमूँ सिद्ध भये अविकारी ॥

ॐ ह्रीं कोष्ठबुद्धिऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ 6 ॥

ज्यों बीज फले बहुरासी, त्यों छिनही बहु अभ्यासी।
यह पावत ही योगीशा, भये सिद्ध नमूँ शिव ईशा॥

ॐ ह्रीं बीजबुद्धिऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 7॥

पदमात्र समस्त चितारें, है ऋद्धि पाद अनुसारे।
यह पाय यतीश्वर ज्ञानी, भये सिद्ध नमूँ शिवथानी॥

ॐ ह्रीं पादानुसारिणीऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 8॥

जो भिन्न-भिन्न इकलारैं, शब्दन सुन अर्थ विचारैं।
यह ऋद्धि पाय सुखदाता, नमूँ सिद्ध भये जगत्राता॥

ॐ ह्रीं संभिन्नसंश्रोतृऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥9॥

मति श्रुत अरु अवधि अनूपा, बिन गुरु के सहज सरूपा।
भये स्वयंबुद्ध निज ज्ञानी, नमूँ सिद्ध भये सुखदानी॥

ॐ ह्रीं स्वयंबुद्धेभ्योऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥10॥

जो पाय न पर उपदेशा, जाने तप ज्ञान विशेषा।
प्रत्येकबुद्ध गुणधारी, भये सिद्ध नमूँ हितकारी॥

ॐ ह्रीं प्रत्येकबुद्धिऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥11॥

गणधर से समकितधारी, तुम दिव्यध्वनि अनुसारी।
ज्ञानिनि सिरताज कहाये, भये सिद्ध सुजस हम गाये॥

ॐ ह्रीं बोधितबुद्धऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥12॥

मन योग सरलता धारै, तिस अंतर भेद उघारै।
जो होय ऋजुमति ज्ञानी, नमूँ सिद्ध भये सुखदानी॥

ॐ ह्रीं ऋजुमतिऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥13॥

बांके मन की सब बाता, जाने सो विपुल कहाता।
तुम पाय भये शिवधामी, नमूँ सिद्धराज अभिरामी॥

ॐ ह्रीं विपुलमतिऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥14॥

सुर-विद्या को नहिं चाहैं, निज चारित विरद निवाहैं।
दस पूर्व ऋद्धि यह पायो, भये सिद्ध मुनिन गुण गायो॥

ॐ ह्रीं दशपूर्वऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥15॥

चौदह पूरव श्रुतज्ञानी, जाने परोक्ष परमाणी।
प्रत्यक्ष लखो तिस सारूं, भये सिद्ध हरो अघ म्हारूं॥

ॐ ह्रीं चतुर्दशपूर्वऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥16॥

सुंदरी

ज्योतिषादिक लक्षण जानकैं, शुभ अशुभ फल कहत बखानिकैं।
निमित ऋद्धि प्रभाव न अन्यथा, होय सिद्ध भये प्रणमूं यथा॥

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गनिमित्तऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥17॥

बहुविधि अणिमादिक ऋद्धि जू, तप प्रभाव भई तिन सिद्धि जू।
निष्प्रयोजन निजपद लीन हैं, नमूँ सिद्ध भये स्वाधीन हैं॥

ॐ ह्रीं विक्रियऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥18॥

भूमि जल तंतू जिय ना हरैं, नमूँ ते मुनि शिव कामिनि वरैं।
नेक नहिं बाधा परिहार हो, नमूँ सिद्ध सभी सुखकार हो॥

ॐ ह्रीं विज्जाहरणऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥19॥

जंघ पर दो हाथ लगावहीं, अंतरिक्ष पवनवत जावहीं।
पाय ऋद्धि महामुनि चारणी, यथायोग्य विशुद्ध विहारणी॥

ॐ ह्रीं चारणऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 20॥

खग समान चलैं आकाश में, लीन नित निज धर्म प्रकाश में।
शुद्ध चारण करि निज सिद्धता, पाइयो हम नमन करैं यथा॥

ॐ ह्रीं आकाशगामिनीऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 21॥

वाद विद्या फुरत प्रमाण ही, वज्रसम परमतगिरि हान में।
सब कुपक्षी दोष प्रगट करैं, स्याद्वाद महाद्युति को धरैं॥

ॐ ह्रीं परामर्शऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥22॥

विषम जहर मिला भोजन करैं, लेत ग्रासहिं तिस शक्तिहरैं।
ते महामुनि जग सुखदाय जू, हम नमें तिन शिवपद पाय जू॥

ॐ ह्रीं आशीर्विषऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥23॥

जो महाविष अति परचंड हो, दृष्टि करि तिन कीने खंड हो।
सो यतीश्वर कर्म विडारकैं, भये सिद्ध नमूँ उर धारकैं॥

ॐ ह्रीं दृष्टिविषऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥24॥

अनशनादिक नितप्रति साधना, मरणकाल तईं न विराधना।
उग्र तप करि वसुविधि नाशतैं, हम नमें शिवलोक प्रकाशतैं॥

ॐ ह्रीं उग्रतपऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥25॥

बढ़त नित प्रति सहज प्रभावना, उग्र तप करि क्लेश न पावना।
दीप्त तप करि कर्म जरायकैं, भये सिद्ध नमूँ सिर नायकैं॥

ॐ ह्रीं दीप्ततपऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥26॥

अंतराय भये उत्सव बढ़े, बाल चंद्र समान कला चढ़े।
वृद्धि तप की ऋद्धि लहैं यती, भये सिद्ध नमत सुख हो अती॥

ॐ ह्रीं तपोवृद्धिऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥27॥

सिंहक्रीडित आदि विधानतें, नित बढ़ावत तप विधि मान तें।
महामुनीश्वर तप परकाशतें नमूँ मुक्त भये जगवासतें॥

ॐ ह्रीं महातपऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 28॥

गिरि शिखर ग्रीषम हिम सर तटैं, तरु निकट पावस निजपदरटैं।
घोर परिषह करि नाहीं हटैं, भये सिद्ध नमत हम दुख कटैं॥

ॐ ह्रीं घोरतपऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥29॥

महाभयंकर निमित मिलै जहाँ, निरविकार यती तिष्ठैं तहां।
महापराक्रम गुण की खान हैं, नमो सिद्ध जगत सुखदान हैं॥

ॐ ह्रीं घोरपराक्रमऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥30॥

सघन गुण की रास महायती, रत्नराशि समान दिपैं अती।
शेष जिन वर्णन करि थकि रहै, नमूँ सिद्ध महापद को लहै॥

ॐ ह्रीं घोरगुणऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥31॥

अतुल वीर्य धनी हन काम को, चलत मन न लखत सुरवामको।
बाल-ब्रह्मचारी योगीश्वरा, नमूँ सिद्ध भये वसुविधि हरा॥

ॐ ह्रीं ब्रह्मचर्यऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥32॥

सकल रोग मिटैं संस्पर्श तें, महायतीश्वर के आमर्श तें।
औषधी यह ऋद्धि प्रभावना, भये सिद्ध नमत सुख पावना॥

ॐ ह्रीं आमर्षौषधिऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥33॥

मूत्र में अमृत अतिशय बसै, जा परस तैं सब व्याधि नसै।
औषधी यह ऋद्धि प्रभावना, भये सिद्ध नमत सुख पावना॥

ॐ ह्रीं मलौषधिऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥34॥

तन पसीजत जल-कण लगत ही, रोग व्याधि सब जन भगत ही।
औषधी यह ऋद्धि प्रभावना, भये सिद्ध नमत सुख पावना॥

ॐ ह्रीं जल्लौषधिऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥35॥

हस्त पादादिक नख केश में, सर्व औषधि हैं सब देश में।
औषधी यह ऋद्धि प्रभावना, भये सिद्ध नमत सुख पावना॥

ॐ ह्रीं सर्वौषधिऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 36॥

अडिल्ल

मन सम्बन्धी वीर्य बढ़े अतिशय महा,
एक मुहूरत अंतर श्रुत चिंतवन लहा।
मनोबली यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूँ तिन पांय जू॥

ॐ ह्रीं मनोबलऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥37॥

भिन्न-भिन्न अति शुद्ध उच्च स्वर उच्चरैं,
एक मुहूरत-अंतर श्रुत वर्णन करैं।

वचनबली यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूँ तिन पांय जू॥

ॐ ह्रीं वचनबलऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥38॥

खड्गासन इक अंग मास छह मास लों,
अचलरूप थिर रहैं छिनक खेदित न हो।
कायबली यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूँ तिन पांय जू॥

ॐ ह्रीं कायबलऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥39॥

अति अरस चरु क्षीर होय कर धरत ही,
वचन खिरत पर-श्रवण तुष्टता करत ही।
क्षीरस्त्रावि यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूँ तिन पांय जू॥

ॐ ह्रीं क्षीरस्त्रावी-ऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥40॥

रूखे भोजन से कर में घृतरस स्त्रवै,
वचन सुनत पर को घृतसम स्वादित ह्वै।
सर्पिस्त्रावि यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूँ तिन पांय जू॥

ॐ ह्रीं सर्पिस्त्रावी-ऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥41॥

हस्तकमल में अन्न मधुर रस देत है,
मधुकर सम जिय वचन गंध को लेत है।
मधुस्त्रावि यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूँ तिन पांय जू॥

ॐ ह्रीं मधुस्त्रावी-ऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥42॥

अमृत सम आहार होय कर आयके,
वचनामृत दे सुक्ख श्रवण में जायके।

आमियरस यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूँ तिन पांय जू॥

ॐ ह्रीं अमृतस्रावी-ऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥43॥

जिस वासन जिस थान आहार करैं यती,
चक्री सेना खाय अखै होवे अती।
अक्षीणरसी यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूँ तिन पांय जू॥

ॐ ह्रीं अक्षीणरसऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥44॥

सोरठा

सिद्धरास सुखदाय, वर्द्धमान नितप्रति लसे।
नमूँ ताहि सिर नाय, वृद्धरूप गुण अगम है॥

ॐ ह्रीं वर्द्धमानजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥45॥

रागादिक परिणाम, अंतर के अरि नाश के।
लहि अरहंत सु नाम, नमों सिद्धपद पाइया॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥46॥

दो अंतिम गुणथान, भाव-सिद्ध इस लोक में।
तथा द्रव्य-शिवथान, सर्व सिद्ध प्रणमूं सदा॥

ॐ ह्रीं अष्टकर्मजित्सर्वसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥47॥

शत्रु व्याधि भय नाहिं, महावीर धीरज धनी।
नमूँ सिद्ध जिननाह, संतनि के भवभय हरैं॥

ॐ ह्रीं भगवते महावीरवर्द्धमानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥48॥

क्षपकश्रेणि आरुढ़, निजभावी योगी तथा।
निश्चय दर्श अमूढ़, सिद्ध योग सब ही जजों॥

ॐ ह्रीं योगसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥49॥

वीतराग परधान, ध्यान करें तिनको सदा।
सोई ध्येय महान, नमो सिद्ध हम अघ हरो॥

ॐ ह्रीं ध्येयसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥50॥

लोकशिखर शिव थान, अचल विराजत सिद्ध जिन।
लोकवास सर्वान, भये सिद्ध प्रणमूँ सदा॥

ॐ ह्रीं सर्वसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥51॥

औरन करत कल्याण, आप सर्व कल्याणमय।
सोई सिद्ध महान, मंगल हेतु नमूँ सदा॥

ॐ ह्रीं स्वस्तिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥52॥

तीन लोक के पूज, सर्वोत्तम सुखदाय हैं।
जिन सम और न दूज, तिनपद पूजूँ भावयुत॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥53॥

लोकोत्तम परधान, तिन पद पूजत हैं सदा।
तातैं सिद्ध महान, सर्व पूज्य के पूज्य हो॥

ॐ ह्रीं सिद्धसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥54॥

परम धरम निज साध, परमातम पद पाइयो।
सोई धर्म अबाध, पूजत पद हम दीजियो॥

ॐ ह्रीं परमात्मसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥55॥

सर्व ऋद्धि नव निद्ध, सिद्ध भये नहिं सिद्ध हो।
निजपद साधत सिद्ध, होत सही तिनको नमो॥

ॐ ह्रीं परमसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥56॥

परमागम की शाख, परम अगम गुणगण सहित।
सोई मन में राख, श्रद्धायुत पूजा करो॥

ॐ ह्रीं परमागमसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥57॥

गुण अनंत परकाश, महा विभवमय लसत हैं।
आवर्णित पद नाश, तेज पुंज प्रणमूँ सदा॥

ॐ ह्रीं प्रकाशमानसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥58॥

स्वयं सिद्ध भगवान, ज्ञानभूत परकाशमय।
लसत नमूँ मन आन, मम उर चिंता दुख हरो॥

ॐ ह्रीं स्वयंभूसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥59॥

मन इन्द्रिय सों भिन्न, मन इन्द्री परकाश कर।
सोई ब्रह्म अखिन्न, साधित सिद्ध भये नमूँ॥

ॐ ह्रीं ब्रह्मसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥60॥

द्रव्य अनंत गुणात्म, परणामी परसिद्ध हैं।
सोई पद निज-आत्म, साधत सिद्ध अनंत गुण॥

ॐ ह्रीं अनन्तगुणसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥61॥

सर्व तत्त्वमय पर्म, गुण अनंत परमातमा।
सो पायो निजधर्म, परम सिद्ध तिनको नमूँ॥

ॐ ह्रीं परमानन्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥62॥

लोकशिखर के वास, पायो अविचल थान निज।
सर्व लोक परकाश, ज्ञानज्योति तिनको नमों॥

ॐ ह्रीं लोकाग्रवासिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥63॥

काल विभाग अनादि, शाश्वत रूप विराजते।
यातें नहिं सो आदि, नमूँ अनादि सिद्धान को॥

ॐ ह्रीं अनादिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥64॥

सिद्धन के जु अनंत गुण, कहि न सके गणराय।
तिन सिद्धन को मैं जजूँ पूरण अर्घ चढ़ाय॥

ॐ ह्रीं अनन्तगुणात्मकसिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥65॥

जयमाला

तीर्थंकर त्रिभुवनधनी, जा पद करत प्रणाम।
हम किह मुख वर्णन करै, तिन महिमा अभिराम॥1॥

चौपाई

जय भवि-कुमुदनि मोदन चंदा, जय दिनंद त्रिभुवन अरविंदा।
भव-तप-हरण शरण रस-कूपा, मद ज्वर जरन हरण घनरूपा ॥2 ॥
अकथित महिमा अमित अथाई, निर-उपमेय सरसता नाँई।
भावलिंग बिन कर्म खिपाये, द्रव्यलिंग बिन शिव पद पाये ॥ 3 ॥
नय विभाग बिन वस्तु प्रमाणा, दया भाव बिन निज कल्याणा।
पङ्गु सुमेरु चूलिका परसै, गूंग गान आरंभे स्वर से॥ 4 ॥
यों अजोग कारज नहिं होई, तुम गुण कथन कठिन है सोई।
सर्व जैन-शासन निजमाँहीं, भाग अनंत धरै तुम नाहीं॥ 5 ॥
गोखुर में नहिं सिंधु समावै, वायस लोक अंत नहीं पावै।
तातें केवल भक्तिभाव तुम, पावन करो अपावन उर हम ॥ 6 ॥
जे तुम यश निज मुख उच्चारैं, ते तिहुँ लोक सुजस विस्तारैं।
तुम गुणगान मात्र कर प्रानी, पावैं सुगुण महा सुखदानी॥ 7 ॥
जिन चित ध्यान सलिल तुम धारा, ते मुनि तीरथ हैं निरधारा।
तुम गुण हंस तुम्हीं सरवासी, वचन जाल में लेत न फाँसी ॥ 8 ॥
जगत बंधु गुणसिंधु दयानिधि, बीजभूत कल्याण सर्वसिधि।
अक्षय शिव-स्वरूप श्रिय स्वामी, पूरण निजानंद विश्रामी ॥9 ॥
शरणागत सर्वस्व सुहितकर,जन्म-मरण दुख आधि-व्याधि हर।
'संत' भक्ति तुम हो अनुरागी, निश्चै अजर अमर पद भागी ॥10 ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं चतुष्षष्टि दलोपरिस्थितसिद्धेभ्यो नमः पूर्णार्घ्यं निर्व.।

जय जय सुखसागर, सुजस उजागर, गुणगण आगर, तारण हो।
जय संत उधारण, विपति विडारन, सुख विस्तारन, कारण हो ॥
तुम गुणगान, परम फलदान, सो मंत्र प्रमान विधान करूँ।
जहरी कर्मनि, बैरी कहरी, असहैरी भव की व्याधि हरूँ॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

जाप - ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा नमः। (108 बार)

पंचम पूजा

ऊरध अधो सुरेफ सबिन्दु हकार विराजै,
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजै।
वर्ग्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व सन्धिधर,
अग्रभाग में मन्त्र अनाहत सोहत अतिवर॥
पुनि अन्त ह्रीं बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नाग को।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मङ्गल करो॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं अष्टाविंशत्यधिकशतगुण संयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

सूक्ष्मादिक गुण सहित है, कर्म रहित नीरोग।
सिद्धचक्र सो थापहूँ, मिटै उपद्रव योग॥

इति यंत्रस्थापनार्थं पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

चंद्रवर्ण लखि चंद्रकांतमणि, मनतें स्त्रवें हु लस धारा हो,
कञ्ज सुवासित प्रासुक जल सों, पूजू पद अनुसारा हो।
लोकाधीश शीश चूड़ामणि, सिद्धचरण उर धारा हो,
चौंसठि दुगुण सुगुण मणि सुवरण, सुमरत ही भव पारा हो॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टाविंशत्यधिकशतगुण-संयुक्ताय जलं निर्व. स्वाहा।

सुरगण मणिधर जास वास लहि, मद तजि गंध लुभावत हैं,
सो चंदन नंदन-वन भूषण, तुम पद-कमल चढ़ावत हैं।
लोकाधीश शीश चूड़ामणि, सिद्धचरण उर धारा हो,
चौंसठि दुगुण सुगुण मणि सुवरण, सुमरत ही भवपारा हो॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टाविंशत्यधिकशतगुण-संयुक्ताय चन्दनं निर्व. स्वाहा।

चंपक ही के भ्रम भ्रमरावलि, भ्रमत चकित चकराज भये,
शशि मंडल जानो सो अक्षत, पुंजधार पद कञ्ज नये।
लोकाधीश शीश चूड़ामणि, सिद्धचरण उर धारा हो,
चौंसठि दुगुण सुगुण मणि सुवरण, सुमरत ही भवपारा हो॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टाविंशत्यधिकशतगुण-संयुक्ताय अक्षतान् निर्व. स्वाहा।

मदन वदन दुतिहरन वरन रति, लोचन अलिगण छाय रहे,
पुष्पमाल वासित विशाल सो, भेंट धरत उर काम दहे।
लोकाधीश शीश चूड़ामणि, सिद्धचरण उर धारा हो,
चौंसठि दुगुण सुगुण मणि सुवरण, सुमरत ही भवपारा हो॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टाविंशत्यधिकशतगुण-संयुक्ताय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

चितवन मन वरणत रसना रस, स्वाद लेत ही तृप्त थये,
जन्मान्तर हुं की छुधा निवारै, सो नेवज तुम भेंट धरे।
लोकाधीश शीश चूड़ामणि, सिद्धचरण उर धारा हो,
चौंसठि दुगुण सुगुण मणि सुवरण, सुमरत ही भवपारा हो॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टाविंशत्यधिकशतगुण-संयुक्ताय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लवमणिप्रभा अनूपम सुर निज, शीश धरण की रास करै,
या बिन तुच्छ विभव निज जानें, सो दीपक तुम भेंट धरैं।
लोकाधीश शीश चूड़ामणि, सिद्धचरण उर धारा हो,
चौंसठि दुगुण सुगुण मणि सुवरण, सुमरत ही भवपारा हो॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टाविंशत्यधिकशतगुण-संयुक्ताय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

नीलांजना सुरी नभ में ज्यों, ऋषभ भक्तिकर नृत्य कियो,
सो तुम सन्मुख धूप उड़ावत, तिस छवि को नहीं भाव लियो।
लोकाधीश शीश चूड़ामणि, सिद्धचरण उर धारा हो,
चौंसठि दुगुण सुगुण मणि सुवरण, सुमरत ही भवपारा हो॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टाविंशत्यधिकशतगुण-संयुक्ताय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सेव रंगीले अनार रसीले, केला की लै डाल फली,
डाली हूँ नृपमाली हूँ, नातर प्रासुकता रीति भली।
लोकाधीश शीश चूड़ामणि, सिद्धचरण उर धारा हो,
चौंसठि दुगुण सुगुण मणि सुवरण, सुमरत ही भवपारा हो॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टाविंशत्यधिकशतगुण-संयुक्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

एक से एक अधिक सोहत वसु, जाति अर्घ करि चरण नमूँ,
आनंद आरति आरत तजिकै, परमारथ हित कुमति वमूँ।
लोकाधीश शीश चूड़ामणि, सिद्धचरण उर धारा हो,
चौंसठि दुगुण सुगुण मणि सुवरण, सुमरत ही भवपारा हो॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टाविंशत्यधिकशतगुण-संयुक्ताय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

निर्मल सलिल शुभवास चन्दन धवल अक्षत युत अनी,
शुभ पुष्प मधुकर नित रमैं चरु प्रचुर-स्वाद सुविधि घनी।
करि दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले,
करि अर्घ सिद्धसमूह पूजत कर्म-दल सब दलमले॥1॥
ते क्रमावर्त नशाय युगपत ज्ञान निर्मल रूप हैं,
दुख जन्म टार अपार गुण सूक्षम सरूप अनूप हैं।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज अदूज शिव कमलापती,
मुनि ध्येय सेय अमेय चहुँ गुण गेह द्यो हम शुभमती॥2॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टाविंशत्यधिकशतगुण-संयुक्ताय अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक सौ अट्ठाईस गुण सहित अर्घ

निरबाध सु तत्त्व सरूप लखो, इक लेश विशेष न शेष रखो।
अति शुद्ध सुभाविक छायक है, नमूँ दर्श महासुखदायकहै॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥1॥

निरमोह अकोह अबाधित हो, परभाव थकी न विराधित हो।
निर अंश चराचर जानत हैं, हम सिद्ध सुज्ञान प्रमानत है॥

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥2॥

सब राग-विरोध निवारन है, निज भाव थकी निज धारन है।
पर में न कबहुं निज भाव बहै, अति सम्यक्चारित्र नाम यहै॥

ॐ ह्रीं सम्यग्चारित्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥3॥

उत्पाद विनाश न बाध धरैं, परिणाम सुभाव नहीं निसरै।
तुम धारत हो यह धर्म महा, हम पूजत हैं पद शीश यहाँ॥

ॐ ह्रीं अस्तित्वधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥4॥

निज भावन तैं व्यतिरिक्त न हो, प्रणमों गुणरूप गुणातम हो।
यह वस्तु सुभाव सदा विलसो, हम पूजत हैं सब पाप नसो॥

ॐ ह्रीं वस्तुत्वधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥5॥

परमाण न जानत हैं तिनको, छिन रोग न आवत है जिनको।
अप्रमेय महागुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं॥

ॐ ह्रीं अप्रमेयत्वधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥6॥

गुण पर्य प्रमाण दशा नित ही, निजरूप न छांड़त हैं कित ही।
जिन बैन प्रमाण सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं॥

ॐ ह्रीं अगुरुलघुत्वधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥7॥

जितने कछु हैं परिणाम विषैं, सब चित्त स्वरूप सुजान तिसैं।
मुख चेतनता गुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं॥

ॐ ह्रीं चेतनत्वधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥8॥

जिन अंग उपंग शरीर नहीं, जिन रंग प्रसंग सु तीर नहीं।
नभसार अमूरति धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं॥

ॐ ह्रीं अमूर्तित्वधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥9॥

पर को न कदाचित धर्म गहैं, निजधर्म स्वरूप न छांड़त हैं।
अति उत्तम धर्म सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं॥

ॐ ह्रीं समकितधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥10॥

जितने कछु हैं परिणाम विषैं, सब ज्ञान स्वरूप सु जान तिसैं।
मुख-ज्ञानमई गुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं॥

ॐ ह्रीं ज्ञानधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥11॥

चिन्मय चिन्मूरति जीव सही, अति पूरणता बिन भेद कही।
निज जीव सुभाव सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं॥

ॐ ह्रीं जीवधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥12॥

मन को नहिं वेग लखावत हैं, जिस बैन नहीं बतलावत हैं।
अति सूक्षम भाव सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥13॥

परघात न आप न घात करैं, इक खेत समूह अनंत वरैं।
अवगाह सरूप सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं॥

ॐ ह्रीं अवगाहधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥14॥

अविनाश सुभाव विराजत हैं, बिन बाध स्वरूप सु छाजत हैं।
यह धर्म महागुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं॥

ॐ ह्रीं अव्याबाधधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥15॥

निज सों निज की अनुभूति करैं, अपनों परसिद्ध सुभाव वरैं।
निज ज्ञान प्रतीति सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं॥

ॐ ह्रीं स्वसंवेदनज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥16॥

निज ज्योति स्वरूप उद्योतमई, तिसमें परदीप्त रहैं नित ही।
यह ताप स्वरूप उधारता हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं॥

ॐ ह्रीं स्वरूपतापतपसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥17॥

निजऽनंत चतुष्टय राजत हैं, दृग ज्ञान बला सुख छाजत हैं।
यह आप महागुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं॥

ॐ ह्रीं अनन्तचतुष्टयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥18॥

सुख समकित आदि महागुण को, तुम साधित सिद्ध भये अबहों।
यह उत्तम भाव सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं॥

ॐ ह्रीं सम्यक्त्वादिगुणात्मकसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥19॥

निश्चय पञ्चाचार सब, भेद रहित तुम साध।
चेतन की अति शक्तिमें, सब सूचै निर्बाध॥

ॐ ह्रीं पञ्चाचाराचार्येभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।20॥

चौपाई

सब विकल्प तजि भेद स्वरूपी, निज अनुभूति मगन चिद्रूपी।
निश्चय रत्नत्रय परकाशो, पूजूँ भाव भेद हम नाशो॥

ॐ ह्रीं रत्नत्रयप्रकाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।21॥

करण भेद रत्नत्रयधारी, कर्म भेद निज-भाव संवारी।
करता भेद आप परणामी, भेदाभेद रूप प्रणमामी॥

ॐ ह्रीं स्वस्वरूपसाधकसर्वसाधुभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।22॥

मनोयोग कृत जिय संसारी, क्रोधारंभ करत दुखकारी।
तासों रहित सिद्ध भगवाना, अंतर शुद्ध करूँ तिन ध्याना॥

ॐ ह्रीं अकृतमनःक्रोधसंरम्भमनोगुप्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।23॥

पर के मन क्रोधी संरम्भा, करत मूढ़ नाना आरंभा।
सिद्धराज प्रणमूँ तिस त्यागी, निर्विकल्प निज गुण के भागी॥

ॐ ह्रीं अकारितमनःक्रोधसंरम्भनिर्विकल्पधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।24॥

भुजंगप्रयात

मनोयोग रंभा प्रशंसीक क्रोधा,
निजानंद को मान ठाने अबोधा।
महा निंदनी भाव को त्याग दीना,
निजानंद को स्वाद सो आप लीना॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनःक्रोधसंरम्भसानन्दधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।25॥

मनोयोग क्रोधी समारंभधारी,
सदा जीव भोगे महाखेद भारी।
महानंद आख्यात को भाव पायो,
नमों सिद्ध सो दोष नाहीं उपायो॥

ॐ ह्रीं अकृतमनःक्रोधसमारम्भपरमानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।26॥

समारंभ क्रोधित सु मन, पर कारित दुख नाहिं।
परमातम पद पाइयो, नमूँ सिद्ध गुण ताहिं॥

ॐ ह्रीं अकारितमनःक्रोधसमारम्भपरमात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥27॥

भुजङ्गप्रयात

समारंभ क्रोधी मनोयोग माँहीं, धरे मोदना भाव को जीव ताहीं।
भये आप संतुष्ट ये त्याग भावा, नमूँ सिद्ध सो दोष नाहीं उपावा॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनःक्रोधसमारम्भपरमानन्दसन्तुष्टाय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा॥28॥

पद्धरि

निज क्रोधित मन आरंभ ठान, जग जिय दुख में सुख रहे मान।
सो आप त्याग संक्लेश भाव, भये सिद्ध नमूँ धर हिये चाव॥

ॐ ह्रीं अकृतमनःक्रोधारम्भस्वसंस्थानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥29॥

क्रोधित मनसों आरंभ हेत, पर प्रेरित निज अपराध लेत।
जग जीवन की विपरीत रीति, तुम त्याग भये शिव वर पुनीत॥

ॐ ह्रीं अकारितमनःक्रोधारम्भबन्धसंस्थानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥30॥

क्रोधित मनसों आरंभ देख, जिय मानत है आनंद विशेष।
तुम सत्य सुखी इह भाव छार, भये सिद्ध नमूँ उर हर्ष धार॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनःक्रोधारम्भसंस्थानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥31॥

मान योग मन रम्भ में, वरतत हैं जग जीव।
भये सिद्ध संक्लेश तज, तिन पद नमूँ सदीव॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोमानसंरम्भधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥32॥

मान उदय मन योग तें, पर को रम्भ करान।
त्याग भये परमात्मा, नमूँ शरन पर हान॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोमानसंरम्भअनन्यशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥33॥

मान सहित मन रम्भ में, जग जिय राखैं चाव।
नमों सिद्ध परमात्मा, जिन त्यागो यह भाव॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमानसंरम्भसुगुणभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥34॥

समारंभ परिवर्तमान युत मन धरै,
विकलपमई उपकरण विविध इकठे करै।
महाकष्ट को हेत भाव यह ना गहौ,
प्रणमूँ सिद्ध अनंत सुखातम गुण लहौ॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोमानसमारम्भसुखात्मगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥35॥

मान सहित मनयोग द्वार चितवन करै,
समारंभ परकृत्य करावन विधि वरै।
तहाँ कष्ट को हेत भाव यह ना गहो,
प्रणमूँ सिद्ध अनन्य गुणातम पद लहो॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोमानसमारम्भअनन्यगताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥36॥

जोड़े चित न समाज विविध जिस काज में,
समारंभ तिस नाम सो मति जिनराज में।
मानै मानी मन आनंद सु निमित सै,
नमूँ सिद्ध हैं अतुल वीर्य त्यागत तिसै॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमानसमारम्भअनन्तवीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥37॥

अशुभ काज परिवर्त नाम आरंभ को,
मान सहित मन द्वार तास उद्यम गहो।
जगवासी जिय नितप्रति पाप उपाय है,
नमो सिद्ध या रहित अतुल सुखराय है॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोमानारम्भअनन्तसुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥38॥

मनो मान आरंभ के, भये अकारित आप।
अतुल ज्ञानधारी भये, नमत नसैं सब पाप॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोमानारम्भअनन्तज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥39॥

मनो मान आरंभ में, नानुमोद भगवंत।
गुण अनंत युत सिद्ध पद, पूजत हैं नित संत॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमानारम्भअनन्तगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥40॥

गीता

जो अशुभ काज विकल्प हो, संरम्भ मनयुत कुटिलता,
कर कर अनादित रंक जिय, बहु भाँति पाप उपावता।
सो त्याग सकल विभाव यह तुम, सिद्ध ब्रह्मस्वरूप हो,
हम पूजि हैं नित भक्तियुत, तुम भक्तवत्सलरूप हो॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोमायासंरम्भब्रह्मस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।41 ।।

मायावी मन तें नहीं, कबहूँ रंभ कराय।
सिद्ध चेतना गुण सहित, नमूँ सदा मन लाय॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोमायासंरम्भचेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।42 ।।

मायावी मन तें कभी, रंभानंद न होय।
सिद्ध अनन्य सुभाव युत, नमूँ सदा मद खोय॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमायासंरम्भअनन्यस्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।43 ।।

पद्धरि

मायावी मन तें समारंभ, नहिं करत सदा हो अचल खंभ।
तुम स्वानुभूति रमणीय संग, नित रमो नमों धरि मन उमंग॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोमायासमारम्भस्वानुभूतिरताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।44 ।।

मन वक्र द्वार उपकर्ण ठान, विधि समारंभ को नहिं करान।
निज साम्यधर्म में रहो लिप्त, तुम सिद्ध नमों पद धार चित्त॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोमायासमारम्भसाम्यधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।45 ।।

मायावी मन में नहीं, समारंभ आनंद।
नमों सिद्धपद परमगुरु, पाऊँ पद सुखवृंद॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमायासमारम्भगुरवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।46 ।।

पद्धरि

बहु विधिकर जोड़े अशुभ काज, आरंभ नाम हिंसा समाज।
मायावी मन द्वारै करेय, तुम सिद्ध नमूँ यह विधि हरेय॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोमायारम्भपरमशान्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।47 ।।

पूर्वोक्त अकारित विधि सरूप, पायो निर आकुल सुख अनूप।
सर्वोत्तम पद पायो महान, हम पूजत हैं उर भक्ति ठान॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोमायारम्भनिराकुलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥48 ॥

मायावी आरंभ करि, मन में आनंद मान।
सो तुम त्यागो भाव यह, भये परम सुख खान॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमायारम्भअनन्तसुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥49 ॥

लोभी मन द्वारे नहीं, करैं सदा समरंभ।
हम अनंत-दृग सिद्धपद, पूजत हैं मनथंभ॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोलोभसंरम्भअनन्तदृगात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥50 ॥

लोभी मन समरंभ को, पर सौं नाहिं कराय।
दृगानंद भावातमा, नमूँ सिद्ध मन लाय॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोलोभसंरम्भदृगानन्दभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥51 ॥

लोभी मन समरंभ में, मानै नहिं आनंद।
नमूँ नमूँ परमात्मा, भये सिद्ध जगवंद॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोलोभसंरम्भसिद्धभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥52 ॥

समारंभ नहिं करत हैं, लोभी मन के द्वार।
चिदानंद चिद्देव तुम, नमूँ लहूँ पद सार॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोलोभसमारम्भचिद्देवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥53 ॥

पर सों भी पूर्वोक्त विधि, कबहूँ नहीं कराय।
निराकार परमात्मा, नमूँ सिद्ध हरषाय॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोलोभसमारम्भनिराकाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥54 ॥

ऐसे ही पूर्वोक्त विधि, हर्षित होवे नाहिं।
चित्स्वरूप साकार पद, धारत हूँ उरमाहिं॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोलोभसमारम्भसाकाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥55 ॥

रचना हिंसा काज की, लोभी मन के द्वार।
नहीं करैं हैं ते नमूँ, चिदानंद पद सार॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोलोभारम्भचिदानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥56 ॥

लोभी मन प्रेरित नहीं, पर को आरंभ हेत।
चिन्मय रूपी पद धरैं, नमूँ लहूँ निज खेत॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोलोभारम्भचिन्मयस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥57॥

मन लोभी आरंभ में, आनंद लहे न लेश।
निजपद में नित रमत हैं, ध्याऊँ भक्ति विशेष॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोलोभारम्भस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥58॥

अडिल्ल

क्रोधित जिय वच योग द्वार उपयोग को,
रचना विधि संकल्प नाम समरंभ सो।
तामें करैं प्रवृत्ति पाप उपजावते,
नमूँ सिद्ध या बिन वचगुप्ति उपावते॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनक्रोधसंरम्भवाग्गुप्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥59॥

क्रोध अग्नि करि निज उपयोग जरावहीं,
वचन योग करि विधि समरंभ करावहीं।
सो तुम त्याग विभाव सुभाव सरूप हो,
नमूँ उरानंद धार चिदानंद रूप हो॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनक्रोधसंरम्भस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥60॥

क्रोधित निज वच द्वार, मोदित हो समरंभ में।
सो तुम भाव विडार, नमूँ स्वानुभव लब्धि युत॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनक्रोधसंरम्भस्वानुभवलब्धये नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा ॥61॥

क्रोध सहित वाणी नहीं, समारंभ परिवृत्य।
स्वानुभूति रमणी रमण, नमूँ सिद्ध कृतकृत्य॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनक्रोधसमारम्भस्वानुभूतिरमणाय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा ॥62॥

समारंभ क्रोधित जिये, प्रेरित पर वच द्वार।
नमूँ सिद्ध इस कर्म बिन, धर्म धरा साधार॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनक्रोधसमारम्भ साधारणधर्माय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा ॥63॥

समारंभमय वचन करि, हर्षित हो युत क्रोध।
नमूँ सिद्ध या बिन लहो, परम शांति सुख बोध॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनक्रोधसमारम्भपरमशान्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥64॥

मोतियादाम

वैर वचयोग धरै जियरोष, करैं विधि भेद अरंभ सदोष।
तजो यह सिद्ध भये सुखकार, नमूँ परमामृत तुष्ट अवार॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनक्रोधारम्भपरमामृततुष्टाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥65॥

अकारित बैन सदा युत क्रोध, महा दुखकार अरंभ अबोध।
भये समरूप महारस धार, नमैं हम सिद्ध लहैं भवपार॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनक्रोधारम्भसमरसाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥66॥

नानुमोद आरंभ में, क्रोध सहित वच द्वार।
परम प्रीति निज आत्मरति, नमूँ सिद्ध सुखकार॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनक्रोधारम्भपरमप्रीतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥67॥

अडिल्ल

वचन द्वार समरंभ मानयुत जे करै,
जोड़ करण उपकरण मान सो उच्चरै।
नानाविध दुखभोग निजातम को हरैं,
नमूँ सिद्ध या बिन अविनश्वर पद धरैं॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनमानसंरम्भ अविनश्वरधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥68॥

मान प्रकृति करि उदै करावै ना कदा,
वचनन करि समरंभ भेद वरणूँ यदा।
मन इंद्रिय अव्यक्त स्वरूप अनूप हो,
नमूँ सिद्ध गुणसागर स्वातम रूप हो॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनमानसंरम्भ अव्यक्तस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥69॥

नानुमोद वच योग, मान सहित समरंभमय।
दुर्लभ इंद्री भोग, परम सिद्ध प्रणमूँ सदा॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनमानसंरम्भदुर्लभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥70॥

समारंभ निज बैनन द्वार, करत नहिं है मान संभार।
ज्ञान सहित चिन्मूरति सार, परम गम्य है निर-आकार॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनमानसमारम्भपरमगम्यनिराकाराय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा ॥71॥

वचन प्रवृत्ति मानयुत ठान, समारंभ विधि नाहिं करान।
शुद्ध स्वभाव परम सुखकार, नमूँ सिद्ध उर आनंद धार॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनमानसमारम्भपरमस्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥72॥

वचन प्रवृत्ति मानयुत होय, समारंभमय हर्षित सोय।
त्यागत एकरूप ठहराय, नमूँ एकत्व गती सुखदाय॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनमानसमारम्भएकत्वगतपरमसुखाय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा ॥73॥

मानी जिय निज वचन उचार, वरतत है आरंभ मँझार।
परमातम हो तजि यह भाव, नमूँ धर्मपति धर्मस्वभाव॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनमानारम्भपरमआत्मधर्मराजधर्मस्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा ॥74॥

सोरठा

मानी बोले बैन, पर-प्रेरण आरंभ में।
सो त्यागो तुम एन, शाश्वत सुख आतम नमूँ॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनमानारम्भशाश्वतानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥75॥

हर्षित वचन उचार, मान सहित आरंभमय।
सो तुम भाव विडार, निजानंद रस घन नमूँ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनमानारम्भामृतपूर्णाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥76॥

पद्धरि

धरि कुटिल भाव जो कहत बैन, समरंभ रूप पापिष्ट ऐन।
तुम धन्य-धन्य यह रीति त्याग, हो बेहद धर्मस्वरूप भाग॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनमायासंरम्भानन्तधर्मैकरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥77॥

मायायुत वचनन को प्रयोग, समरंभ करावत अशुभ योग।
तुम यह कलंक नहिं धरो लेश, हो अमृत शशि पूजूँ हमेश॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनमायासंरम्भामृतचन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥78॥

वच मायायुत समरंभ कीन, सो पापरूप भाषो मलीन।
तिस त्याग अनेक गुणात्मरूप, राजत अनेक मूरत अनूप॥

ऍं ह्रीं नानुमोदितवचनमायासंरम्भअनेकमूर्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥79॥

तुम समारंभ की विधि विधान, नहिं करत कुटिलता भेद ठान।
हो नित्य निरञ्जन भाव-युक्त, मैं नमूँ सदा संशय विमुक्त॥

ऍं ह्रीं अकृतवचनमायासमारम्भनित्यनिरञ्जनस्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा॥80॥

मायायुत निज बैनतैं, समारंभ के हेत।
नहिं प्रेरित पर को नमूँ, निजगुण धर्म समेत॥

ऍं ह्रीं अकारितवचनमायासमारम्भआत्मैकधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥81॥

मायाकरि बोलत नहीं, समारंभ हर्षाय।
सूक्ष्म अतीन्द्रिय वृष नमूँ, नमूँ सिद्ध मन लाय॥

ऍं ह्रीं नानुमोदितवचनमायासमारम्भपरमसूक्ष्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥82॥

मायायुत आरंभ की, वचन प्रवृत्ति नशाय।
नमूँ अनंत अवकाश गुण, ज्ञान द्वार सुखदाय॥

ऍं ह्रीं अकृतवचनमायारम्भानन्तअवकाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥83॥

मायायुत आरंभमय, मेंट वचन उपदेश।
भये अमल गुण ते नमूँ, रागद्वेष नहिं लेश॥

ऍं ह्रीं अकारितवचनमायारम्भअमलगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥84॥

मायायुत आरंभमय, मेंट वचन आनंद।
भये अनंत सुखी नमूँ, सिद्ध सदा सुखवृंद॥

ऍं ह्रीं नानुमोदितवचनमायारम्भनिरवधिसुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥85॥

अडिल्ल

जो परिग्रह की चाह लोभ सो मानियो,
विधि-विधान ठानत समरंभ बखानियो।
वचन द्वार नहिं करें नमूँ परमातमा,
सब प्रत्यक्ष लखें व्यापक धर्मात्मा॥

ऍं ह्रीं अकृतवचनलोभसंरम्भव्यापकधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥86॥

वर्तावन समरंभ हेत पर के तईं,
लोभ उदै करि वचन कहै हिंसामई।
नमूँ सिद्ध पद यह विपरीत सु जिन हरो,
सकल चराचर ज्ञानी व्यापक गुण वरो॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनलोभसंरम्भव्यापकगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥87॥

लोभी वच समरंभ हर्ष परकाशनं,
नाना विधि संचये पाप दुखरासनं।
सो तुम नाशत शाश्वत ध्रुवपद पाइयो,
नमूँ अचल गुण सहित सिद्ध मन भाइयो॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनलोभसंरम्भअचलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥88॥

सोरठा

समारंभ के बैन, लोभ सहित पर आसरैं।
तज निरलंबी ऐन, नमूँ सिद्ध उर धारिकैं॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनलोभसमारम्भनिरालम्बाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥89॥

समारंभ उपदेश, लोभ उदै थिति मेटिकें।
पायो अचल स्वदेश, नमूँ निराश्रय सिद्ध गुण॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनलोभसमारम्भनिराश्रयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥90॥

नानुमोद वच लोभ, समारंभ परवृत्त में।
नमूँ तिन्हैं तजि क्षोभ, नित्य अखंड विराजतें॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनलोभसमारम्भअखण्डाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥91॥

लोभ सहित आरंभ को, करत नहीं व्याख्यान।
नूतन पंचम गति लहो, नमूँ सिद्ध भगवान॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनलोभारम्भपरीतावस्थाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥92॥

लोभ वचन आरंभ को, कहत न पर के हेत।
समयसार परमातमा, नमत सदा सुख देत॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनलोभारम्भसमयसाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥93॥

नानुमोद वच द्वार, लोभ सहित आरंभमय।
अजर अमर सुखकार, नमूँ निरन्तक सिद्धपद॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनलोभारम्भनिरन्तकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।94 ।।

अडिल्ल

क्रोधित रूप भयंकर हस्तादिक तनी,
करत समस्या विध संरम्भ प्रकाशनी।
सो तुम नाशो काय गुप्ति करि यह तथा,
दृष्टि अगोचर काय गुप्ति प्रणमूँ सदा॥

ॐ ह्रीं अकृतकायक्रोधसंरम्भकायगुप्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।95 ।।

सोरठा

पर प्रेरण निज काय, क्रोध सहित समरंभ तज।
चेतन मूरति पाय, शुद्ध काय प्रणमूँ सदा॥

ॐ ह्रीं अकारितकायक्रोधसंरम्भशुद्धकायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।96 ।।

हर्षित शीश हिलाय, क्रोध उदय समरंभ में।
त्यागत भये अकाय, नमूँ सिद्ध पद भावयुत॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायक्रोधसंरम्भ अकायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।97 ।।

समारंभ विधि मेटि, कायिक चेष्टा क्रोध की।
स्वै गुणपर्य समेत, भक्तिसहित प्रणमूँ सदा॥

ॐ ह्रीं अकृतकायक्रोधसमारम्भस्व अन्वयगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।98 ।।

समारंभ विधि क्रोध युत, तनसों नहिं कराय।
नित-प्रति रति निजभाव में, वंदूँ तिनके पांय॥

ॐ ह्रीं अकारितकायक्रोधसमारम्भभावरतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।99 ।।

समारंभ को कायसों, क्रोध सहित परसंस।
स्वै अभिन्न पद पाइयो, नमूँ त्याग सरवंस॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायक्रोधसमारम्भस्व अन्वयधर्माय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा ।।100 ।।

क्रोधित कायारंभ तजि, परसों रहित स्वभाव।
शुद्ध द्रव्य में रत नमूँ, निज सुख सहज उपाव॥

ॐ ह्रीं अकृतकायक्रोधारम्भशुद्धद्रव्यरताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥101॥

क्रोधित कायारंभ नहिं, रंच प्रपंच कराय।
पंचरूप संसार हनि, नमूँ पंचमगति राय॥

ॐ ह्रीं अकारितकायक्रोधारम्भसंसारछेदकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥102॥

क्रोधित कायारंभ में, हर्ष विषाद विडार।
अनेकान्त वस्तुत्व गुण, धरै नमों पद सार॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायक्रोधारम्भजैनधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥103॥

मान सहित समरंभ की, तनसों रचना त्याग।
पर प्रवेश बिन रूप निज, लियो नमूँ बड़भाग॥

ॐ ह्रीं अकृतकायमानसंरम्भस्वरूपगुप्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥104॥

मान उदय समरंभ विधि, तनसों नहीं कराय।
निज कृत पर उपकार बिन, लियो नमूँ तिन पांय॥

ॐ ह्रीं अकारितकायमानसंरम्भनिजकृतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥105॥

मान सहित समरंभ में, तनसों हर्ष न लेश।
ध्यान योग निज ध्येय पद, भावित नमूँ अशेष॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमानसंरम्भध्येयभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥106॥

मदयुत तनसों रंच भी, समारंभ विधि नाहिं।
परमाराधन योगपद, पायो प्रणमूँ ताहिं॥

ॐ ह्रीं अकृतकायमानसमारम्भपरमआराधनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥107॥

समारंभ निज कायसों, मदयुत नहीं कराय।
ज्ञानानंद स्वभाव युत, प्रणमूँ शीश नवाय॥

ॐ ह्रीं अकारितकायमानसमारम्भआनन्दगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥108॥

समारंभमय विधि सहित, तनसों हर्ष न होय।
निजानंद नंदित तिन्हैं, नमूँ सदा मद खोय॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमानसमारम्भस्वानन्दनन्दिताय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा॥109॥

चौपाई

अकृत मानारंभ शरीर, पर अनिच्छ वंदूँ धर धीर।
सिद्ध वसे जु लोक के अन्त, नमो करौ हमरी भव अन्त॥

ॐ ह्रीं अकृतकायमान आरम्भसन्तोषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥110॥

कायारंभ अकारित मान, स्वस्वरूपरत वंदूँ तान।
सिद्ध वसे जु लोक के अन्त, नमो करौ हमरी भव अन्त॥

ॐ ह्रीं अकारितकायमान आरम्भस्वरूपरताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥111॥

मानारंभ अनन्दित काय, प्रणमूँ विमल शुद्ध पर्याय।
सिद्ध वसे जु लोक के अन्त, नमो करौ हमरी भव अन्त॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमानआरम्भशुद्धपर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥112॥

मायायुत समरंभ विधि, तनसों करत न आप।
गुप्त निजामृत रस लहैं, नमूँ तिन्हैं तज पाप॥

ॐ ह्रीं अकृतकायमायासंरम्भअमृतगर्भाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥113॥

मायायुत समरंभ विधि, तनसों नहीं कराय।
मुख्य धर्म चैतन्यता विलसै, प्रणमूँ पांय॥

ॐ ह्रीं अकारितकायमायासंरम्भचैतन्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥114॥

मायायुत समरंभमय, नानुमोदयुत काय।
वीतराग आनंद पद, समरस भावन भाय॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमायासंरम्भसमरसीभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥115॥

समारंभ माया सहित, अकृत तन विच्छेद।
बंध दशा निज पर द्विविधि, नमत नसै भव खेद॥

ॐ ह्रीं अकृतकायमायासमारम्भबन्धच्छेदकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥116॥

समारंभ तन कुटिल सों, भये अकारित स्वामि।
निज परिणति परिणमन बिन, गुण स्वातन्त्र नमामि॥

ॐ ह्रीं अकारितकायमायासमारम्भस्वातन्त्र्यधर्माय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा॥117॥

नानुमोदित तन कुटिलता, समारंभ विधि देव।
गुण अनंत युत परिणमूं, धर्म समूही एव॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमायासमारम्भधर्मसमूहाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥118॥

मायायुत निज देहसों, नहिं आरंभ करेह।
परमातम सुख अक्ष-बिन, पायो वंदूँ तेह॥

ॐ ह्रीं अकृतकायमायाआरम्भपरमात्मसुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥119॥

मायारंभ शरीर करि, परसों नहीं करान।
निष्ठातम स्वस्थित नमूँ, सिद्धराज गुणखान॥

ॐ ह्रीं अकारितकायमायाआरम्भनिष्ठात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥120॥

मायारंभ शरीर सों, नानुमोद भगवंत।
दर्श ज्ञान मय चेतना, सहित नमें नित संत॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमायाआरम्भचेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥121॥

पद्धरि

समरंभ चाह नहिं काययोग, चित परिणति नमि शुद्धोपयोग।
धारक सिद्धन को धरूँ ध्यान, तुम मेटो मेरो सब अज्ञान॥

ॐ ह्रीं अकृतकायलोभसंरम्भ परमचित्परिणताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥122॥

समरंभ अकारित लोभ देह, निज आतम रत स्वयमेव तेह।
धारक सिद्धन को धरूँ ध्यान, तुम मेटो मेरो सब अज्ञान॥

ॐ ह्रीं अकारितकायलोभसंरम्भस्वसमयरताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥123॥

समरंभ लोभ तन हर्ष नाश, नमि व्यक्तधर्म केवल प्रकाश।
धारक सिद्धन को धरूँ ध्यान, तुम मेटो मेरो सब अज्ञान॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायलोभसंरम्भव्यक्तधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥124॥

सोरठा

लोभी योग शरीर, समारंभ विधि नाशके।
ध्रुव आनंद अतीर, पायो पूजूँ सिद्धपद॥

ॐ ह्रीं अकृतकायलोभसमारम्भनित्यसुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥125॥

लोभ अकारित काय, समारंभ निज कर्म हनि।
पायो पद अकषाय, सिद्ध वर्ग पूजूँ सदा॥

ॐ ह्रीं अकारितकायलोभसमारम्भाकषायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥126॥

पूर्व वर्तनानंद, परिग्रह इच्छा मेटिकें।
पायो शौच स्वच्छन्द, नमूँ सिद्ध पद भक्तियुत॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायलोभसमारम्भशौचगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥127॥

काय द्वार आरंभ की, लोभ उदय विधि नाश।
नमों चिदातम पद लियो, शुद्ध ज्ञान परकाश॥

ॐ ह्रीं अकृतकायलोभारम्भचिदात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥128॥

काय द्वार आरंभ विधि, लोभ उदय न कराय।
निर अवलम्बित पद लियो, नमूँ सदा तिन पांय॥

ॐ ह्रीं अकारितकायलोभारम्भनिरालम्बाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥129॥

लोभी तन आरंभ में, आनंद रीति मेंट।
नमूँ सिद्ध पद पाइयो, निज आतम गुण श्रेष्ठ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायलोभारम्भात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥130॥

सवैया

जेते कछु पुदगल परमाणु शब्दरूप,
भये हैं अतीत काल आगे होनहार हैं।
तिनको अनंत गुण करत अनंतबार,
ऐसे महाराशि रूप धरैं विस्तार हैं॥
सब ही एकत्र होय सिद्ध परमातम के,
मानो गुण गण उचरन अर्थधार हैं।
तौ भी इक समय के अनंत भाग आनंद को,
कहत न कहैं हम कौन परकार हैं॥

ॐ ह्रीं अष्टाविंशत्यधिकशतगुणसंयुक्तसिद्धेभ्यः नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

शिवगुण सरधा धार उर, भक्तिभाव है सार।
केवल निज आनंद करि, करूँ सुजस उच्चार॥

जय मदन कदन मन करण नाश, जय शांतिरूप निज सुख विलास।
जय कपट सुभट पट करन सूर, जय लोभ क्षोभ मद दम्भ चूर॥1॥

पर-परिणति सों अत्यंत भिन्न, निज परिणति सों अति ही अभिन्न।
अत्यंत विमल सब ही विशेष, मल लेश शोध राखो न शेष॥2॥

मणि दीप सार निर्विघ्न ज्योति, स्वाभाविक नित उद्योत होत।
त्रैलोक्य शिखर राजत अखण्ड, संपूरण द्युति प्रगटी प्रचण्ड॥3॥

मुनि-मन-मंदिर को अंधकार, तिस ही प्रकाश सौं नशत सार।
सो सुलभ रूप पावै न अर्थ, जिस कारण भव-भव भ्रमै व्यर्थ॥4॥

जो कल्प-काल में होत सिद्ध, तुम छिन ध्यावत लहिये प्रसिद्ध।
भवि पतितन को उद्धार हेत, हस्तावलम्ब तुम नाम देत॥5॥

तुम गुण सुमिरण सागर अथाह, गणधर सरीख नहीं पार पाह।
जो भवदधि पार अभव्य रास, पावे न वृथा उद्यम प्रयास॥6॥

जिन-मुख द्रह सों निकसी अभंग, अति वेग रूप सिद्धांत गंग।
नय-सप्त-भंग-कल्लोल मान, तिहुँ लोक बही धारा प्रमान॥7॥

सो द्वादशांग वाणी विशाल, ता सुनत पढ़त आनंद विशाल।
यातें जग में तीरथ सुधाम, कहिलायो है सत्यार्थ नाम॥8॥

सो तुम ही सों है शोभनीक, नातर जल सम जु बहै सु ठीक।
निज-पर आतम हित आत्मभूत, जबसे है जब उत्पत्ति सूत॥9॥

ज्यों महाशीत ही हिम प्रवाह, है मेटन समरथ अग्नि दाह।
त्यों आप महा मंगलस्वरूप, पर विघन विनाशन सहजरूप ॥10॥

है संत दीन तुम भक्ति लीन, सो निश्चय पावै पद प्रवीण।
तातैं मन-वच-तन भाव धार, तुम सिद्धन कूं मम नमस्कार ॥11॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं अष्टाविंशत्यधिकशतदलोपरिस्थितसिद्धेभ्यः पूर्णार्घ्यं।

जो तुम ध्यावें भावसों, ते पावें निज भाव।
अगनि पाक संयोग करि, शुद्ध सुवर्ण उपाव॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

जाप - ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा नमः। (108 बार)

षष्ठ पूजा

ऊरध अधो सुरेफ सबिन्दु हकार विराजै,
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजै।
वर्ग्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व सन्धिधर,
अग्रभाग में मन्त्र अनाहत सोहत अतिवर॥
पुनि अन्त ह्रीं बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नाग को।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मङ्गल करो॥1॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षड्पञ्चाशदधिकद्विशतगुणसंयुक्ताय - श्रीसिद्ध-परमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

सूक्ष्मादिक गुण सहित है, कर्म रहित नीरोग।
सिद्धचक्र सो थापहूँ, मिटै उपद्रव योग॥2॥

इति यंत्रस्थापनार्थं पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

गीता

अति नम्रता तिहुँ योग में जिन भक्ति निर्मल भावहीं,
यह गुप्त जल प्रत्यक्ष निर्मल सलिल तीरथ लावहीं।
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं,
द्वै अर्द्धशत षट् अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने षड्पञ्चाशदधिकद्विशतगुण-संयुक्ताय जलं निर्व. स्वाहा।

अति वास विषय न वासनायुत मलय शील सुभावहीं,
अरु चंदनादि सुगंध द्रव्य मनोज्ञ प्रासुक लावहीं।
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं,
द्वै अर्द्धशत षट् अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने षड्पञ्चाशदधिकद्विशतगुण-संयुक्ताय चन्दनं निर्व. स्वाहा।

परिणाम धवल सुवर्ण अक्षत मलिन मन न लगावहीं,
तिस सार अक्षत अखय स्वच्छ सुवास पुञ्ज बनावहीं।
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं,
द्वै अर्द्धशत षट् अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने षड्पञ्चाशदधिकद्विशतगुण-संयुक्ताय अक्षतान् निर्व. स्वाहा।

मन पाग भक्त्यनुराग आनंद ताग माल पुरावहीं,
तिस भाग कुसुम सुहाग अर सुर नागबाग सु लावहीं।
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं,
द्वै अर्द्धशत षट् अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने षड्पञ्चाशदधिकद्विशतगुण-संयुक्ताय पुष्पं निर्व. स्वाहा।

जिन भक्ति रस में तृप्तता मन आन स्वाद न चावहीं,
अंतर चरू बाहिज मनोहर रसिक नेवज लावहीं।
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं,
द्वै अर्द्धशत षट् अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने षड्पञ्चाशदधिकद्विशतगुण-संयुक्ताय नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

सरधान दीप प्रदीप्त अंतर मोह तिमिर नशावहीं,
मणिदीप जगमग ज्योति तेज सु भास भेंट धरावहीं।
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं,
द्वै अर्द्धशत षट् अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने षड्पञ्चाशदधिकद्विशतगुण-संयुक्ताय दीपं निर्व. स्वाहा।

आनंद धर्म प्रभावना मन घटा धूम्र सु छावहीं,
गंधित दरव शुभ घ्राण प्रिय अति अग्नि संग जरावहीं।
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं,
द्वै अर्द्धशत षट् अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने षड्पञ्चाशदधिकद्विशतगुण-संयुक्ताय धूपं निर्व. स्वाहा।

शुभ चिंतवन फल विविध रसयुत भक्ति तरु उपजावहीं,
रसना लुभावन कल्पतरु के सुर–असुर मन मोहहीं।
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं,
द्वै अर्द्धशत षट् अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने षड्पञ्चाशदधिकद्विशतगुण–संयुक्ताय फलं निर्व. स्वाहा।

समकित विमल वसु अंगयुत करि अर्घ अंतर भावहीं,
वसु दरब अर्घ बनाय उत्तम देहु हर्ष उपावहीं।
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं,
द्वै अर्द्धशत षट् अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने षड्पञ्चाशदधिकद्विशतगुण–संयुक्ताय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

निर्मल सलिल शुभवास चन्दन धवल अक्षत युत अनी,
शुभ पुष्प मधुकर नित रमैं चरु प्रचुर–स्वाद सुविधि घनी।
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले,
करि अर्घ सिद्धसमूह पूजत कर्म–दल सब दलमले॥1॥
ते क्रमावर्त नशाय युगपत ज्ञान निर्मल रूप हैं,
दुख जन्म टार अपार गुण सूक्षम सरूप अनूप हैं।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज अदूज शिव कमलापती,
मुनि ध्येय सेय अमेय चहुँ गुण गेह द्यो हम शुभमती॥2॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने षड्पञ्चाशदधिकद्विशतगुण–संयुक्ताय महार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दो सौ छप्पन गुण सहित अर्घ

मिथ्यातम कारण दुखकारा, नित्य निरंजन विधि संसारा।
तिस हनि समरथ अतिशयरूपा, केवल पाय नमूँ शिव भूपा॥

ॐ ह्रीं चिरंतनसंसारकारणाज्ञाननिर्द्धूतोद्भूतकेवलज्ञानातिशयसम्पन्नाय सिद्धचक्राधिपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥1॥

मन-इंद्रिय निमित्त मतिज्ञाना, योग देश तिष्ठत पद जाना।
क्षय-उपशम आवर्ण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥

ॐ ह्रीं अभिनिबोधवारककर्म विमुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये नमः अर्घ्यं निर्व. ॥2 ॥

द्वादश अंगरूप अज्ञाना, श्रुत आवरणी भेद बखाना।
क्षय-उपशम आवर्ण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो

ॐ ह्रीं द्वादशाङ्गश्रुतावरणीयकर्मविमुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये नमः अर्घ्यं निर्व. ॥3 ॥

हैं असंख्य लोकावधि जेते, अवधिज्ञान के भेद सु तेते।
क्षय-उपशम आवर्ण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥

ॐ ह्रीं असंख्यभेदलोकावधिज्ञानावरणविमुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये नमः अर्घ्यं निर्व. ॥ 4 ॥

हैं असंख्य परकार प्रमाना, मनपर्यय के भेद बखाना।
क्षय-उपशम आवर्ण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥

ॐ ह्रीं असंख्यप्रकारमनःपर्ययज्ञानावरणविमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥5 ॥

निखिल रूप गुणपर्यय ज्ञानं, सत् स्वरूप प्रत्यक्ष प्रमाणं।
केवल आवर्णी विधि नाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥

ॐ ह्रीं निखिलरूपगुणपर्यायबोधककेवलज्ञानावरणविमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा ॥6 ॥

द्वारपति भूपति के ताई, रोक रहै देखन दे नाहीं।
सोई दर्शनावरण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥

ॐ ह्रीं सकलदर्शनावरणकर्मविनाशकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥7 ॥

मूर्तीक पद को प्रतिभासन, नेत्र द्वार होवै परकाशन।
चक्षु-दर्शनावरण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥

ॐ ह्रीं चक्षुर्दर्शनावरणकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥8 ॥

दृग बिन अन्येन्द्री मन द्वारे, वस्तुरूप सामान्य उघारे।
अदृग-दर्शनावरण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥

ॐ ह्रीं अचक्षुर्दर्शनावरणीयकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥9 ॥

देश-काल-द्रव-भाव प्रमानं, अवधि दर्श होवे सब ठानं।
अवधि-दर्श-आवरण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥

ॐ ह्रीं अवधिदर्शनावरणकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥10 ॥

बिन मर्याद सकल तिहुं काल, होंय प्रकट घटपट तिहँ हाल।
केवल दर्शनावरण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो॥

ॐ ह्रीं केवलदर्शनावरणकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥11॥

बैठे खड़े पड़े घुम्मरिया, देखे नहिं निद्रा की बिरिया।
निद्रा दर्शनावरण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो॥

ॐ ह्रीं निद्राकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥12॥

सावधानी कितनी की जावे, रंच नेत्र उघड़न नहीं पावे।
निद्रा-निद्रावरण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो॥

ॐ ह्रीं निद्रानिद्राकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥13॥

मंदरूप निद्रा का आना, अवलोकै जागृतहि समाना।
प्रचला दर्शनावरण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो॥

ॐ ह्रीं प्रचलाकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥14॥

मुखसों लार बहै अति भारी, हस्त पाद कंपत दुखकारी।
प्रचला-प्रचलावरण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो॥

ॐ ह्रीं प्रचलाप्रचलाकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥15॥

सोता हुआ करै सब काजा, प्रगटावै प्राकर्म समाजा।
यह स्त्यानगृद्धि विधि नाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो॥

ॐ ह्रीं स्त्यानगृद्धिकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥16॥

चौपाई

जे पदार्थ हैं इंद्रिय योग, ते सब वेदे जिय निज भोग।
सोई नाम वेदनी होई, नमूँ सिद्ध तुम नाशो सोई॥

ॐ ह्रीं वेदनीयकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥17॥

रति के उदय भोग सुखकार, पावैं जिय शुभ विविध प्रकार।
साता भेद वेदनी होय, नमूँ सिद्ध तुम नाशो सोय॥

ॐ ह्रीं सातावेदनीयकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥18॥

अरति उदय जिय इंद्री द्वार, विषयभोग वेदे दुखकार।
एही भेद असाता होय, नमूँ सिद्ध तुम नाशो सोय॥

ॐ ह्रीं असातावेदनीयकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥19॥

ज्यों असावधानी मदपान, करत मोह विधि तैसो जान।
ता विधि करि निज लाभ न होय, नमूँ सिद्ध तुम नाशो सोय॥

ॐ ह्रीं मोहकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥20॥

जाके उदय तत्त्व परतीत, सत्य रूप नहीं हो विपरीत।
पंच भेद मिथ्यात निवार, भये सिद्ध प्रणमूँ सुखकार॥

ॐ ह्रीं मिथ्यात्वकर्मरहिताय सिद्धचक्राधिपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥21॥

प्रथमोपशम समकित जब गले, मिथ्या समकित दोनों मिले।
मिश्र भेद मिथ्यात निवार, भये सिद्ध प्रणमूँ सुखकार॥

ॐ ह्रीं सम्यग्मिथ्यात्वकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥22॥

दर्शन में कछु मल उपजाय, करै समल नहिं मूल नसाय।
सम्यक्-प्रकृति मिथ्यात निवार, भये सिद्ध प्रणमूँ सुखकार॥

ॐ ह्रीं सम्यक्त्वप्रकृतिरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥23॥

धर्म-मार्ग में उपजे रोष, उदय भये मिथ्यात सदोष।
यह अनंत-अनुबंध निवार, भये सिद्ध प्रणमूँ सुखकार॥

ॐ ह्रीं अनन्तानुबंधीक्रोधरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥24॥

देव-धर्म-गुरुसों अभिमान, उदय भये मिथ्या सरधान।
यह अनंत-अनुबंध निवार, भये सिद्ध प्रणमूँ सुखकार॥

ॐ ह्रीं अनन्तानुबंधीमानरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥25॥

छलसों धर्म रीति दलमलै, उदय होय मिथ्या जब चलै।
यह अनंत-अनुबंध निवार, भये सिद्ध प्रणमूँ सुखकार॥

ॐ ह्रीं अनन्तानुबंधीमायारहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥26॥

लोभ उदय निर्मालय दर्व, भक्षै महानिंद मति सर्व।
यह अनंत–अनुबंध निवार, भये सिद्ध प्रणमूँ सुखकार॥

ॐ ह्रीं अनन्तानुबंधीलोभरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥27॥

सुंदरी

क्रोध करि अणुव्रत नहिं लीजिए, चरितमोह प्रकृति सु भनीजिए।
है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूँ तिस नासियो॥

ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणक्रोधकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥28॥

मान करि अणुव्रत न हो कदा, रहै अव्रत युत दर्शन सदा।
है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूँ तिस नासियो॥

ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणमानकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥29॥

देशव्रती श्रावक नहीं होत है, वक्रता को जहँ उद्योत है।
है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूँ तिस नासियो॥

ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणमायाकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥30॥

मोह लोभ चरित जे जिय वसे, देशव्रत श्रावक नहीं ते लसे।
है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूँ तिस नासियो॥

ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणलोभकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥31॥

अडिल्ल

प्रत्याख्यानी क्रोध सहित जे आचरे,
देशव्रती सो सकल व्रत नाहीं धरे।
चारितमोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है,
नाश कियो मैं नमूँ सिद्ध शिवधाम है॥

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरणक्रोधकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥32॥

प्रत्याख्यानभिमान महान न शक्ति है,
जास उदय पूरण संयम अव्यक्त है।
चारितमोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है,
नाश कियो मैं नमूँ सिद्ध शिवधाम है॥

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरणमानकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥33॥

प्रत्याख्यानी माया मुनि पद कों हतै,
श्रावकव्रत पूरण नहीं खंडे जास तैं।
चारितमोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है,
नाश कियो मैं नमूँ सिद्ध शिवधाम है॥

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरणमायाकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥34॥

श्रावक पद में जास लोभ को वास है,
प्रत्याख्यानी श्रुत में संज्ञा तास है।
चारितमोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है,
नाश कियो मैं नमूँ सिद्ध शिवधाम है॥

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरणलोभकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥35॥

भुजङ्गप्रयात

यथाख्यात चारित्र को नाश कारा,
महाव्रत को जास में हो उजारा।
यही संज्वलन क्रोध सिद्धांत गाया,
नमूँ सिद्ध के चरण ताको नसाया॥

ॐ ह्रीं संज्वलनक्रोधकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥36॥

रहै संज्वलन रूप उद्योत जेते,
न हो सर्वथा शुद्धता भाव तेते।
यही संज्वलन मान सिद्धांत गाया,
नमूँ सिद्ध के चरण ताको नसाया॥

ॐ ह्रीं संज्वलनमानकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥37॥

बहै संज्वलन की जहाँ मंद धारा,
लहै है तहाँ शुक्लध्यानी उभारा।
यही संज्वलन वक्र सिद्धांत गाया,
नमूँ सिद्ध के चरण ताको नसाया॥

ॐ ह्रीं संज्वलनमायाकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥38॥

जहाँ संज्वलन लोभ को रञ्च नाहीं,
निजानंद को वास होवे तहाँ ही।
यही संज्वलन लोभ सिद्धांत गाया,
नमूँ सिद्ध के चरण ताको नसाया॥

ॐ ह्रीं संज्वलनलोभकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।39 ।।

मोदक

जा करि हास्य भाव जुत होतहिं, हास्य किये परकी यहपातहिं।
सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीश नमूँ तुमको धरि हाथहिं॥

ॐ ह्रीं हास्यकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।40 ।।

प्रीत करै पर सों रति मानहिं, सो रति भेद विधी तिस जानहिं।
सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीश नमूँ तुमको धरि हाथहिं॥

ॐ ह्रीं रतिकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।41 ।।

जो परसों परसन्न न हो मन, आरति रूप रहै नित आनन।
सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीश नमूँ तुमको धरि हाथहिं॥

ॐ ह्रीं अरतिकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।42 ।।

जा करि पावत इष्ट वियोगहिं, खेदमई परिणाम सु शोकहिं।
सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीश नमूँ तुमको धरि हाथहिं॥

ॐ ह्रीं शोककर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।43 ।।

हो उद्वेग उच्चाटन रूपहिं, मन तन कंपित होत अरूपहिं।
सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीश नमूँ तुमको धरि हाथहिं॥

ॐ ह्रीं भयकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।44 ।।

सवैया

जो पर को अपराध उघारत, जो अपनो कछु दोष न जाने,
जो पर के गुण औगुण जानत, जो अपने गुण को प्रगटाने।
सो जिनराज बखान जुगुप्सित, है जियनो विधि के वश ऐसो,
हे भगवंत! नमूँ तुमको तुम जीति लियो छिन में अरि तैसो॥

ॐ ह्रीं जुगुप्साकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।45 ।।

जो नर संग रमें सुख मानत, अंतर गूढ़ न जानत कोई,
हाव विलास हि लाज धरै मन, आतुरता करि तृप्त न होई।
सो जिनराज बखानत है, तिय-वेद हनो विधि के वश ऐसो,
हे भगवंत! नमूँ तुमको तुम जीत लियो छिन में अरि तैसो॥

ॐ ह्रीं स्त्रीवेदरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥46॥

जो तिय संग रमें विधि यो मन, औरन से कछु आनंद माने,
किञ्चित काम जगै उर में नित, शांत सुभावन की सुध ठाने।
सो जिनराज बखानत है, नर-वेद हनो विधि के वश ऐसो,
हे भगवंत! नमूँ तुमको तुम जीत लियो छिन में अरि तैसो॥

ॐ ह्रीं पुरुषवेदरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥47॥

जो नर-नार रमावन को, निज सों अभिलाष धरै उरमाँहीं,
सो अति ही परकाश हिये नित, काम की दाह मिटै छिननाँहीं।
सो जिनराज बखान नपुंसक, वेद हनो विधि के वश ऐसो,
हे भगवंत! नमूँ तुमको तुम जीति लियो छिन में अरि तैसो॥

ॐ ह्रीं नपुंसकवेदरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥48॥

वसंततिलका

आयु प्रमाण दृढ़ बंधन और नाहीं,
गत्यानुसार थिति पूरण करण माँहीं।
सोई विनाश कीनो तुम देव नाथा,
वंदूँ तुम्हें तरण कारण जोर हाथा॥

ॐ ह्रीं आयुष्कर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥49॥

जो है कलेस अवधी सब होत जासों,
तेतीस सागर रहे थिति नर्क तासों।
सोई विनाश कीनो तुम देव नाथा,
वंदूँ तुम्हें तरण कारण जोर हाथा॥

ॐ ह्रीं नरकायुरहिताय सिद्धचक्राधिपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥50॥

जासों करैं तिर्यक् की थिति आउ पूरी,
सोई कहो त्रिजग आयु महा लघूरी।
सोई विनाश कीनो तुम देव नाथा,
वंदूँ तुम्हें तरण कारण जोर हाथा॥

ॐ ह्रीं तिर्यञ्चायुरहिताय सिद्धचक्राधिपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥51॥

जेते नरायु विधि दे रस आप जाको,
तेते प्रजाय नर रूप भुगाय ताको।
सोई विनाश कीनो तुम देव नाथा,
वंदूँ तुम्हें तरण कारण जोर हाथा॥

ॐ ह्रीं मनुष्यायुरहिताय सिद्धचक्राधिपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥52॥

याही प्रकार जितने दिन देव देही,
नासै अकाल नहिं जे सुर आयु से ही।
सोई विनाश कीनो तुम देव नाथा,
वंदूँ तुम्हें तरण कारण जोर हाथा॥

ॐ ह्रीं देवायुरहिताय सिद्धचक्राधिपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥53॥

पद्धरि

जो करे जीव को बहु प्रकार, ज्यों चित्रकार चित्राम सार।
सो नामकर्म तुम नाश कीन, मैं नमूँ सदा उर भक्तिलीन॥

ॐ ह्रीं नामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥54॥

जा उदय नारकी देह पाय, नाना दुख भोगे नर्क जाय।
सो नरकगती तुम नाश कीन, मैं नमूँ सदा उर भक्तिलीन॥

ॐ ह्रीं नरकगतिरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥55॥

जासों उपजे तिर्यंच जीव, रहै ज्ञानहीन निर्बल सदीव।
सो तिर्यग्गति तुम नाश कीन, मैं नमूँ सदा उर भक्तिलीन॥

ॐ ह्रीं तिर्यञ्चगतिरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥56॥

जा उदय भये मानुष्य होत, लहै नीच ऊँच ताको उद्योत।
सो मानुषगती तुम नाश कीन, मैं नमूँ सदा उर भक्तिलीन॥

ॐ ह्रीं मनुष्यगतिरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥57॥

चउ विधि सुरपद जासों लहाय, विषयातुर नित भोगे उपाय।
सो देवगति तुम नाश कीन, मैं नमूँ सदा उर भक्तिलीन॥

ॐ ह्रीं देवगतिरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥58॥

कामिनीमोहन

एक ही भाव सामान्य का पावना,
जीव की जाति का भेद सो गावना।
होत जो थावरा एक इंद्री कहो,
पूजहूँ सिद्ध के चरण ताको दहो॥

ॐ ह्रीं एकेन्द्रियजातिरहिताय नमः अर्घ्यं निर्व4पामीति स्वाहा ॥59॥

फर्स के साथ में जीभ जो आ मिले,
पांयसों आपने आप भूपर चले।
गामिनी कर्म सों दोय इंद्री कहो,
पूजहूँ सिद्ध के चरण ताको दहो॥

ॐ ह्रीं द्वीन्द्रियजातिरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥60॥

नाक हो और दो आदि के जोड़ में,
हो उदय चालना योग सों दोल में।
गामिनी कर्म सों तीन इंद्री कहो,
पूजहूँ सिद्ध के चरण ताको दहो॥

ॐ ह्रीं त्रीन्द्रियजातिरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥61॥

आँख हो नाक हो जीभ हो फर्श हो,
कान के शब्द का ज्ञान जामें न हो।
गामिनी कर्म सों चार इंद्री कहो,
पूजहूँ सिद्ध के चरण ताको दहो॥

ॐ ह्रीं चतुरिन्द्रियजातिरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥62॥

कान भी आ मिले जीव की जाति में,
हो असंज्ञी सुसंज्ञी दो भाँति में।
गामिनी कर्म की पाँच इंद्री कहो,
पूजहूँ सिद्ध के चरण ताको दहो॥

ॐ ह्रीं पञ्चेन्द्रियजातिरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥63॥

लावनी

हो उदार जो प्रगट उदारिक, नामकर्म की प्रकृति भनी।
लहै औदारिक देह जीव तिस, कर्म प्रकृति के उदय तनी॥
भये अकाय अमूरति आनंद-पुञ्ज चिदातम ज्योति घनी।
नमूँ तुम्हैं कर जोर युगल तुम, सकल रोग थल काय हनी॥

ॐ ह्रीं औदारिकशरीरविमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥64॥

निज शरीर को अणिमादिक करि, बहु प्रकार प्रणमाय वरे।
वैक्रियक तन कहलावे यह, देव नारकी मूल धरे॥
भये अकाय अमूरति आनंद-पुंज चिदातम ज्योति घनी।
नमूँ तुम्हैं कर जोर युगल तुम, सकल रोग थल काय हनी॥

ॐ ह्रीं वैक्रियिकशरीरविमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥65॥

धवल वर्ण शुभ योगी संशय-हरण आहारक का पुतला।
जो प्रमत्त गुणथानक मुनि के, देह औदारिक सों निकला॥
भये अकाय अमूरति आनंद-पुंज चिदातम ज्योति घनी।
नमूँ तुम्हैं कर जोर युगल तुम, सकल रोग थल काय हनी॥

ॐ ह्रीं आहारकशरीररहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥66॥

पुद्गलीक तन कर्म वर्गणा, कारमाण परदीप्त करण।
तैजस नाम शरीर शास्त्र में, गावत हैं नहिं तेज वरण॥
भये अकाय अमूरति आनंद-पुंज चिदातम ज्योति घनी।
नमूँ तुम्हैं कर जोर युगल तुम, सकल रोग थल काय हनी॥

ॐ ह्रीं तैजसशरीररहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥67॥

पुद्गलीक वरगणा जीव सों, एक क्षेत्र अवगाही हैं।
नूतन कारण करण मूल तन, कारमाण तिस नाम कहैं॥
भये अकाय अमूरति आनंद-पुंज चिदातम ज्योति घनी।
नमूँ तुम्हैं कर जोर युगल तुम, सकल रोग थल काय हनी॥

ॐ ह्रीं कार्मणशरीररहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥68॥

इंद्रवज्रा

जेते प्रदेशा तन बीच आवैं, सारे मिलैं जोड़ न छिद्र पावैं।
संघात नामा जिस देह जानो,पूजूँ तुम्हें सिद्ध यह कर्म हानो॥

ॐ ह्रीं औदारिकसंघातरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥69॥

वैक्रिय के जोड़ जो होत नाहीं, संघातनामा जिन बैन मांहीं।
संघात नामा जिस देह जानो,पूजूँ तुम्हें सिद्ध यह कर्म हानो॥

ॐ ह्रीं वैक्रियिकसंघातरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥70॥

ऐसे प्रकारा तन में अहारा, संधि मिलाया कर देत सारा।
संघात नामा जिस देह जानो,पूजूँ तुम्हें सिद्ध यह कर्म हानो॥

ॐ ह्रीं आहारकसंघातरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥71॥

तेजस्स के अंग उपंग सारे, संधी मिलाया तिस मांहिं धारें।
संघात नामा जिस देह जानो,पूजूँ तुम्हें सिद्ध यह कर्म हानो॥

ॐ ह्रीं तैजससंघातरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥72॥

ज्ञानादि आवर्ण जो कर्मकाया, ताको मिलाया श्रुत मांहिं गाया।
संघात नामा जिस देह जानो,पूजूँ तुम्हें सिद्ध यह कर्म हानो॥

ॐ ह्रीं कार्मणसंघातरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥73॥

चौबोला

पुद्गलीक वर्गणा जोग तैं जब जिय करत अहारा,
प्रणवावे तिनको एकत्र करि बंध उदय अनुसारा।
यही औदारिक बंधन तुमने छेद कियो निरधारा,
भये अबंध अकाय अनूपम जजूँ भक्ति उर धारा॥

ॐ ह्रीं औदारिकबन्धनरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥74॥

वैक्रियक तन परमाणु मिल परस्परा अनिवारा,
हो स्कंध रूप पर्यायी यह बंधन परकारा।
वैक्रियक तन बंधन तुमने छेद कियो निरधारा,
भये अबंध अकाय अनूपम जजूँ भक्ति उर धारा॥

ॐ ह्रीं वैक्रियिकबन्धनरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥75॥

मुनि शरीरसों बाहिज निसरे संशय नाशनहारा,
ताके मिले प्रदेश परस्पर हो संबंध अवारा।
यही आहारक बंधन तुमने छेद कियो निरधारा,
भये अबंध अकाय अनूपम जजूँ भक्ति उर धारा॥

ॐ ह्रीं आहारकबन्धनरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥76॥

दीप्त जोति जो कारमाण की रहै निरंतर लारा,
जहाँ तहाँ नहिं बिखरैं कण ज्यों बहै एक ही धारा।
तैजस नामा बंधन तुमने छेद कियो निरधारा,
भये अबंध अकाय अनूपम जजूँ भक्ति उर धारा॥

ॐ ह्रीं तैजसबन्धनरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥77॥

द्रव्य कर्म ज्ञानावरणादिक पुद्गल जाति पसारा,
एक क्षेत्र अवगाही जिय को दुविधि भाव कर्तारा।
कारमाण यह बंधन तुमने छेद कियो निरधारा,
भये अबंध अकाय अनूपम जजूँ भक्ति उर धारा॥

ॐ ह्रीं कार्मणबन्धनरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥78॥

रोला

तन आकृति संस्थान आदि समचतुरस्र बखानो,
ऊपर तले समान यथाविधि सुंदर जानो।
यह विपरीत स्वरूप त्याग पायो निजात्म पद,
बीजभूत कल्याण नमूँ भव्यनि प्रति सुखप्रद॥

ॐ ह्रीं समचतुरस्रसंस्थानरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥79॥

ऊपर से हो थूल तले हो न्यून देह जिस।
परिमण्डलन्यग्रोध नाम वरणों सिद्धांत तिस॥
यह विपरीत स्वरूप त्याग पायो निजात्म पद,
बीजभूत कल्याण नमूँ भव्यनि प्रति सुखप्रद॥

ॐ ह्रीं न्यग्रोधपरिमण्डलसंस्थानरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।80 ।।

नीचे से हो थूल न्यून होवे उपराहीं,
बमई सम वामीक देह जिन आज्ञा माँहीं।
यह विपरीत स्वरूप त्याग पायो निजात्म पद,
बीजभूत कल्याण नमूँ भव्यनि प्रति सुखप्रद॥

ॐ ह्रीं वामीकसंस्थानरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।81 ।।

जो कूबड़ आकार रूप पावे तन प्राणी,
कुब्ज नाम संस्थान ताहि वर्णो जिनवानी।
यह विपरीत स्वरूप त्याग पायो निजात्म पद,
बीजभूत कल्याण नमूँ भव्यनि प्रति सुखप्रद॥

ॐ ह्रीं कुब्जकसंस्थानरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।82 ।।

लघुसों ठिगना रूप एम तन होवे जाको,
वामन है परसिद्ध लोक में कहिये ताको।
यह विपरीत स्वरूप त्याग पायो निजात्म पद,
बीजभूत कल्याण नमूँ भव्यनि प्रति सुखप्रद॥

ॐ ह्रीं वामनसंस्थानरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।83 ।।

जित तित बहु आकार कहीं नहिं हो इकसारूँ ,
हुण्डक अति असुहान पाप फल प्रगट उघारूँ।
यह विपरीत स्वरूप त्याग पायो निजात्म पद,
बीजभूत कल्याण नमूँ भव्यनि प्रति सुखप्रद॥

ॐ ह्रीं हुण्डकसंस्थानरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।84 ।।

लक्ष्मीधरा

जीव आप भाव सों जु कर्म की क्रिया करेत,
अंग वा उपंग सो शरीर के उदय समेत।
सो औदारिकी शरीर अंग वा उपंग नाश,
सिद्धरूप हो नमों सु पाइयो अबाध वास॥

ॐ ह्रीं औदारिकाङ्गोपाङ्गरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।85 ।।

देव नारकी शरीर मांस रक्त से न होत,
तास को अनेक भांति आप दे सकै उद्योत।
वैक्रियिक सो शरीर अंग वा उपंग नाश,
सिद्धरूप हो नमों सु पाइयो अबाध वास॥

ॐ ह्रीं वैक्रियिकाङ्गोपाङ्गरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।86 ।।

साधु के शरीर मूल तें कढ़े प्रशंस योग,
संश को विध्वंसकार केवली सु लेत भोग।
आहरक सो शरीर अंग वा उपंग नाश,
सिद्धरूप हो नमों सु पाइयो अबाध वास॥

ॐ ह्रीं आहारकाङ्गोपाङ्गरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।87 ।।

गीता

संहनन बंधन हाड़ होय अभेद वज्र सो नाम है,
नाराच कीली वृषभ डोरी बाँधने की ठाम है।
है आदि को जो संहनन जिम वज्र सब परकार हो,
यह त्याग बंध अबंध निवसौ परम आनंदधार हो॥

ॐ ह्रीं वज्रवृषभनाराचसंहननरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।88 ।।

ज्यों वज्र की कीली ठुकी हो हाड़ संधी में जहाँ,
सामान्य वृषभ जु जेवरी ताकरि बंधाई हो तहाँ।
है दूसरा संहनन यह नाराच वज्र प्रकार हो,
यह त्याग बंध अबंध निवसौ परम आनंदधार हो॥

ॐ ह्रीं वज्रनाराचसंहननरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।89 ।।

नहिं वज्र की हो वृषभ अरु नाराच भी नहीं वज्र हो,
सामान्य कीली करि ठुकी सब हाड़ संधि वज्र हो।
है तीसरा संहनन जो नाराच ही परकार हो,
यह त्याग बंध अबंध निवसौ परम आनंदधार हो॥

ॐ ह्रीं नाराचसंहननरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥90॥

हो जड़ित छोटी कीलिका सो संधि हाड़ों की जबै,
कछु ना विशेषण वज्र के सामान्य ही होवे सबै।
है चौथवाँ संहनन जो नाराच अर्द्ध परकार हो,
यह त्याग बंध अबंध निवसौ परम आनंदधार हो॥

ॐ ह्रीं अर्द्धनाराचसंहननरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥91॥

जो परस्पर कर जड़ित होवे संधि हाड़न की जहाँ,
नहिं कीलिका सो ठुकी होवे साल संधि के तहाँ।
है पांचवां संहनन कीलक नाम यह परकार हो,
यह त्याग बंध अबंध निवसौ परम आनंदधार हो॥

ॐ ह्रीं कीलकसंहननरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥92॥

कछु छिद्र कछुक मिलाप होवे संधि हाड़ोंमय सही,
केवल नसों सों होय बेढी मांससों लतपत रही।
अंतिम स्फाटिक संहनन यह हीन शक्ति असार हो,
यह त्याग बंध अबंध निवसौ परम आनंदधार हो॥

ॐ ह्रीं असंप्राप्तासृपाटिकासंहननरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥93॥

दोहा

वर्ण विशेष न स्वेत है, नामकर्म तन धार।
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूँ ताहि कर्मरज टार॥

ॐ ह्रीं श्वेतनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥94॥

वर्ण विशेष न पीत है, नामकर्म तन धार॥
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूँ ताहि कर्मरज टार॥

ॐ ह्रीं पीतनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥95॥

वर्ण विशेष न रक्त है, नामकर्म तन धार ॥
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूँ ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं रक्तनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥96 ॥

वर्ण विशेष न हरित है, नामकर्म तन धार ॥
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूँ ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं हरितनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥97 ॥

वर्ण विशेष न कृष्ण है, नामकर्म तन धार ॥
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूँ ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं कृष्णनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥98 ॥

गंध विशेष न शुभ कहो, नामकर्म तन धार ॥
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूँ ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं सुगन्धनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥99 ॥

गंध विशेष न अशुभ है, नामकर्म तन धार ॥
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूँ ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं दुर्गन्धनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥100 ॥

स्वाद विशेष न तिक्त है, नामकर्म तन धार ॥
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूँ ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं तिक्तरसरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥101 ॥

स्वाद विशेष न कटुक है, नामकर्म तन धार ॥
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूँ ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं कटुकरसरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥102 ॥

स्वाद विशेष न आम्ल है, नामकर्म तन धार ॥
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूँ ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं आम्लरसरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥103 ॥

स्वाद विशेष न मधुर है, नामकर्म तन धार ॥
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूँ ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं मधुररसरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥104 ॥

स्वाद विशेष न कषाय है, नामकर्म तन धार ॥
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूँ ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं कषायरसरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥105 ॥

फर्स विशेष न नर्म है, नामकर्म तन धार।
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूँ ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं मृदुस्पर्शरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥106 ॥

फर्स विशेष न कठिन है, नामकर्म तन धार ॥
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूँ ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं कर्कशस्पर्शरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥107 ॥

फर्स विशेष न भार है, नामकर्म तन धार ॥
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूँ ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं गुरुस्पर्शरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥108 ॥

फर्स विशेष न अगुरुहै, नामकर्म तन धार ॥
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूँ ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं लघुस्पर्शरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥109 ॥

फर्स विशेष न शीत है, नामकर्म तन धार ॥
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूँ ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं शीतस्पर्शरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥110 ॥

फर्स विशेष न उष्ण है, नामकर्म तन धार ॥
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूँ ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं उष्णस्पर्शरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥111 ॥

फर्स विशेष न चिकण है, नामकर्म तन धार ॥
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूँ ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं स्निग्धस्पर्शरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥112 ॥

फर्स विशेष न रूक्ष है, नामकर्म तन धार ॥
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूँ ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं रूक्षस्पर्शरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥113 ॥

मरहठा

हो जो प्रजाप्त वर, पणइंद्रीधर, जाय नर्क निरधार,
विग्रह सु चाल में, अंतराल में, धरै पूर्व-आकार।
सो नर्क नामकर, गावत गणधर, आनुपूर्वी सार,
तुम ताहि नशायो, शिवगति पायो, नमित लहूँ भवपार॥

ॐ ह्रीं नरकगत्यानुपूर्वीरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥114॥

निजकाय छांड़कर, अंत समय मरि, होय पशू अवतार,
विग्रह सु चाल में, अंतराल में, धरैं पूर्व-आकार।
सो तिर्यञ्च नामकर, गावत गणधर, आनुपूर्वी सार,
तुम ताहि नशायो, शिवगति पायो, नमित लहूँ भवपार॥

ॐ ह्रीं तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥115॥

हो मिश्र प्रणामी, वा शिवगामी, वरै मनुजगति सार,
विग्रह सु चाल में, अंतराल में, धरै पूर्व-आकार।
सो मनुष्य नामकर, गावत गणधर, आनुपूर्वी सार,
तुम ताहि नशायो, शिवगति पायो, नमित लहूँ भवपार॥

ॐ ह्रीं मनुष्यगत्यानुपूर्वीरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥116॥

समकित सों मर, वा कलेश करि, धरहिं देवगति चार,
विग्रह सु चाल में, अंतराल में, धरै पूर्व आकार।
सो देव नामकर, गावत गणधर, आनुपूर्वी सार,
तुम ताहि नशायो, शिवगति पायो, नमित लहूँ भवपार॥

ॐ ह्रीं देवगत्यानुपूर्वीरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥117॥

त्रोटक

तनभार भए निज घात ठने, तिसकी कछु विधि ऐसी जु बने।
अपघात सु कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भए तिस मूल हनो॥

ॐ ह्रीं अपघातनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥118॥

विष आदि अनेक उपाधि धरै, पर प्राणन को निर्मूल करै।
परघात सु कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भए तिस मूल हनो॥

ॐ ह्रीं परघातनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥119॥

अति तेजमई तन दीप्त महा, रवि–बिंब विषै जिय भूमि लहा।
यह आतप कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भए तिस मूल हनो॥

ॐ ह्रीं आतपनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥120॥

परकाशमई जिम बिंब शशी, पृथिवी जिय पावत देह असी।
द्युति नाम सु कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भए तिस मूल हनो॥

ॐ ह्रीं उद्योतनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥121॥

तन की थिति कारण स्वांस गहै, स्वर अंतर बाहर भेद बहै।
यह स्वास सु कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भए तिस मूल हनो॥

ॐ ह्रीं श्वासोच्छवासनामकर्मविमुक्ताय सिद्धातिपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥122॥

शुभ चाल चलैं अपनी जिसतें, शशि ज्यों नभ सोहत हैं तिसतें।
नभ में गति कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भए तिस मूल हनो॥

ॐ ह्रीं विहायोगतिनामकर्मविमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥123॥

इक इंद्रिय जात विरोध मई, चतुरान्त स्वभाविक प्राप्त भई।
त्रस नाम सु कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भए तिस मूल हनो॥

ॐ ह्रीं त्रसनामकर्मविमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥124॥

इक इंद्रिय जातहिं पावत है, अरु शेष न ताहि धरावत है।
यह थावर कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भए तिस मूल हनो॥

ॐ ह्रीं स्थावरनामकर्मविमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥125॥

पर में परवेश न आप करैं, पर को निज में नहिं थाप धरैं।
यह बादर कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भए तिस मूल हनो॥

ॐ ह्रीं बादरनामकर्मविमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥126॥

जल सों दव सों नहीं आप मरै, सब ठौर रहै पर को न हरै।
यह सूक्षम कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भए तिस मूल हनो॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥127॥

जिसतें परिपूरणता करि है, निज शक्ति समान उदय धरि है।
पर्याप्त सु कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भए तिस मूल हनो॥

ॐ ह्रीं पर्याप्तकनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥128॥

परिपूरणता नहिं धार सके, यह होत सभी साधारण के।
अपरयापति कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भए तिस मूल हनो॥

ॐ ह्रीं अपर्याप्तकनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥129॥

जिम लोह न भार धरै तन में, जिम आक न फूल उड़ै वन में।
है अगुरुलघु यह भेद भनो, जग पूज्य भए तिस मूल हनो॥

ॐ ह्रीं अगुरुलघुनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥130॥

इक देह विषैं इक जीव रहै, इकलो तिसको सब भोग लहै।
परतेक सु कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भए तिस मूल हनो॥

ॐ ह्रीं प्रत्येकनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥131॥

इक देह विषैं बहु जीव रहैं, इक साथ सभी तिस भोग लहैं।
यह भेद निगोद सिद्धांत भनो, जग पूज्य भए तिस मूल हनो॥

ॐ ह्रीं साधारणनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥132॥

उपेन्द्रवज्रा

चले न जो धातु तजै न वासा, यथाविधि आप धरै निवासा।
यही प्रकारा थिर नाम भासो, नमामि देवं तिस देह नासो॥

ॐ ह्रीं स्थिरनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥133॥

अनेक थानं मुख गौण धातं, चलंति धारं निज वास घातं।
यही प्रकाराऽथिर नाम भासो, नमामि देवं तिस देह नासो॥

ॐ ह्रीं अस्थिरनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥134॥

यथाविधि देह विलास सोहै, मुखारविंदादिक सर्व मोहै।
यही प्रकारा शुभ नाम भासो, नमामि देवं तिस देह नासो॥

ॐ ह्रीं शुभनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥135॥

असुंदराकार शरीर माँही, लखों जहाँ सों विडरूप ताहीं।
यही प्रकाराशुभ नाम भासो, नमामि देवं तिस देह नासो॥

ॐ ह्रीं अशुभनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥136॥

अनेक लोकोत्तम भावधारी, करैं सभी तापर प्रीति भारी।
सुभाग ताको यह भेद भासो, नमामि देवं तिस देह नासो॥

ॐ ह्रीं सुभगनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥137॥

धरै अनेका गुण तो न जासों, करैं सभी प्रीति न कोई तासों।
दुर्भाग ताको यह भेद भासो, नमामि देवं तिस देह नासो॥

ॐ ह्रीं दुर्भगनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥138॥

पद्धरि

ध्वनि बीन भांति ज्यों मधुर बैन, निसरै पिक आदिक सुरस दैन।
यह सुस्वर नाम प्रकृति कहाय, तुम हनी नमूँ निज शीश नाय॥

ॐ ह्रीं सुस्वरनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥139॥

गर्दभ स्वर जैसो कहो भास, तैसो रव अशुभ कहो सुभास।
यह दुस्वर नाम प्रकृति कहाय, तुम हनी नमूँ निज शीश नाय॥

ॐ ह्रीं दुस्वरनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥140॥

अडिल्ल

होत प्रभामई कान्ति महा रमणीक जू,
जग जन मन भावन माने यह ठीक जू।
यह आदेय सुप्रकृति नाश निजपद लहो,
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हें हम अघ दहो॥

ॐ ह्रीं आदेयनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥141॥

रूखो मुख को वरण लेश नहिं कान्ति को,
रूखे केश नखाकृति तन बढ़ भाँति को।
अनादेय यह प्रकृति नाश निजपद लहो,
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हें हम अघ दहो॥

ॐ ह्रीं अनादेयनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥142॥

होत गुप्त गुण तो भी जग में विस्तरैं,
जग जन सुजस उचारत ताकी थुति करैं।

यह जस प्रकृति विनाश सुभावी यश लहो,
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हें हम अघ दहो॥

ॐ ह्रीं यशःकीर्तिनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥143॥

जासु गुणन को औगुण कर सब ही ग्रहैं,
करत काज-परशंसित पण निंदित कहैं।
अयश प्रकृति को नाश सुभाविक यश लहो,
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हें हम अघ दहो॥

ॐ ह्रीं अयशःकीर्तिनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥144॥

योग थान नेत्रादिक ज्यों के त्यों बनें,
रचित चतुर कारीगर करते हैं तनें।
यह निर्माण विनाश सुभावी पद लहो,
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हें हम अघ दहो॥

ॐ ह्रीं निर्माण-नामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥145॥

पंचकल्याणक चौंतिस अतिशय राजहीं,
प्रातिहार्य अठ समवसरण द्युति छाजहीं।
तीर्थंकर विधि विभव नाश निजपद लहो,
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हें हम अघ दहो॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकरत्वनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥146॥

चाल

जो कुंभकार की नाई, छिन घट छिन करत सुराई।
सो गोत्र कर्म परजारा, हम पूज रचो सुखकारा॥

ॐ ह्रीं गोत्रकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥147॥

लोकनि में पूज्य प्रधाना, सब करत विनय सनमाना।
यह ऊँच गोत्र परजारा, हम पूज रचो सुखकारा॥

ॐ ह्रीं उच्चगोत्रकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥148॥

जिसको सब कहत कमीना, आचरण धरे अति हीना।
यह नीच गोत्र परजारा, हम पूज रचो सुखकारा॥

ॐ ह्रीं नीचगोत्रकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥149॥

ज्यों दे न सके भण्डारी, परधन की हो रखवारी।
यह अन्तराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा॥

ॐ ह्रीं अन्तरायकर्मरहिताय सिद्धचक्राधिपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥150॥

हो दान देन को भावा, दे सके न कोटि उपावा।
दानान्तराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा॥

ॐ ह्रीं दानान्तरायकर्मरहिताय सिद्धचक्राधिपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥151॥

मन दान लेन को भावे, दातार प्रसंग न पावे।
लाभान्तराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा॥

ॐ ह्रीं लाभान्तरायकर्मरहिताय सिद्धचक्राधिपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥152॥

पुष्पादिक चाहै भोगा, पर पाय न अवसर योगा।
भोगान्तराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा॥

ॐ ह्रीं भोगान्तरायकर्मरहिताय सिद्धचक्राधिपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥153॥

तिय आदिक बारंबारा, नहिं भोग सके हितकारा।
उपभोगान्तराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा॥

ॐ ह्रीं उपभोगान्तरायकर्मरहिताय सिद्धचक्राधिपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥154॥

चेतन निज बल प्रकटावे, यह योग कबहुँ नहिं पावे।
वीर्यान्तराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा॥

ॐ ह्रीं वीर्यान्तरायकर्मरहिताय सिद्धचक्राधिपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥155॥

ज्ञानावरणादिक नामी, निज काज उदय परिणामी।
अठ भेद कर्म परजारा, हम पूज रचो सुखकारा॥

ॐ ह्रीं अष्टकर्मरहिताय सिद्धचक्राधिपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥156॥

इकसौ अड़ताल प्रकारी, उत्तर विधि सत्ताधारी।
सब प्रकृति कर्म परजारा, हम पूज रचो सुखकारा॥

ॐ ह्रीं शताष्टचत्वारिंशत्कर्मप्रकृतिरहिताय सिद्धचक्राधिपतये नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा॥157॥

परणाम भेद संख्याता, जो वचन योग में आता।
संख्यात कर्म परजारा, हम पूज रचो सुखकारा॥

ॐ ह्रीं संख्यातकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥158॥

है वचनन सों अधिकाई, परिणाम भेद दुखदाई।
विधि असंख्यात परजारा, हम पूज रचो सुखकारा॥

ॐ ह्रीं असंख्यातकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥159॥

अविभाग प्रछेद अनंता, यह केवलज्ञान लहंता।
यह कर्म अनंत परजारा, हम पूज रचो सुखकारा॥

ॐ ह्रीं अनन्तकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥160॥

सब भाग अनंतानंता, यह सूक्षमभाव धरंता।
विधि नंतानंत परजारा, हम पूज रचो सुखकारा॥

ॐ ह्रीं अनन्तानन्तकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥161॥

मोतियादाम

न हो परिणाम विषैं कछु खेद, सदा इकसा प्रणवै बिन भेद।
निजाश्रित भाव रमै सुखधाम, करूँ तिस आनंद कों परणाम॥

ॐ ह्रीं आनन्दस्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥162॥

धरैं जितने परिणामन भेद, विशेषनि तैं सब ही बिन खेद।
पराश्रितता बिन आनंद धर्म, नमूँ तिन पांय लहूँ पद शर्म॥

ॐ ह्रीं आनन्दधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥163॥

न हो पर योग निमित्त विभाव, सदा निवसै निज आनंद भाव।
यही वरणो परमानंद धर्म, नमूँ तिन पांय लहूँ पद पर्म॥

ॐ ह्रीं परमानन्दधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥164॥

कबहुँ परसों कछु द्वेष न होत, कबहुँ पुनि हर्ष विशेष न होत।
रहैं नित ही निज भावन लीन, नमूँ पद साम्य सुभाव सु लीन॥

ॐ ह्रीं साम्यस्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥165॥

निजाकृति में नहिं लेश कषाय, अमूरति शांतमयी सुखदाय।
निराकुलतामय साम्य स्वरूप, नमूँ तिनको नित आनंद रूप॥
ॐ ह्रीं साम्यस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥166॥

अनंत गुणातम द्रव पर्याय, यही विधि आप धरैं बहु भाय।
सभी कुमति करि हो अलखाय, नमूँ जिन बैन भली विधि गाय॥
ॐ ह्रीं अनन्तगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥167॥

अनंत गुणातम रूप कहाय, गुणी-गुण भेद सदा प्रणमाय।
महागुण स्वच्छमयी तुम रूप, नमूँ तिनको पद पाइ अनूप॥
ॐ ह्रीं अनन्तगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥168॥

अभेद सुभेद अनेक सु एक, धरो इन आदिक धर्म अनेक।
विरोधित भावन सों अविरुद्ध, नमूँ जिन आगम की विधि शुद्ध॥
ॐ ह्रीं अनन्तधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥169॥

रहै धर्मी नित धर्म सरूप, न हो परदेशन सों अणुरूप।
चिदातम धर्म सभी निजरूप, धरो प्रणमूँ मन भक्ति स्वरूप॥
ॐ ह्रीं अनन्तधर्मस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥170॥

चौपाई

हीनाधिक नहीं भाव विशेष, आतमीक आनंद हमेश।
सम स्वभाव सोई सुखरास, प्रणमूँ सिद्ध मिटै भववास॥
ॐ ह्रीं समस्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥171॥

इष्टानिष्ट मिटो भ्रम जाल, पायो निज आनंद विशाल।
साम्य सुधारस को नित भोग, नमूँ सिद्ध संतुष्ट मनोग॥
ॐ ह्रीं सन्तुष्टाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥172॥

पर पदार्थ को इच्छुक नाहिं, सदा सुखी स्वातम पद माहिं।
मेटो सकल राग रुष दोष, प्रणमूँ राजत सम संतोष॥
ॐ ह्रीं समसन्तोषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥173॥

मोह उदय सब भाव नसाय, मेटो पुद्गलीक पर्याय।
शुद्ध निरंजन समगुण लहो, नमूँ सिद्ध परकृत दुख दहो॥

ॐ ह्रीं साम्यगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥174॥

निज पद सों थिरता नहिं तजैं, स्वानुभूत अनुभव नित भजैं।
निराबाध तिष्ठैं अविकार, साम्य-स्थाई गुण भंडार॥

ॐ ह्रीं साम्यस्थाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥175॥

भव संबंधी काज निवार, अचल रूप तिष्ठैं समधार।
कृत्याकृत्य साम्य गुण पायो, भक्ति सहित हम शीश नवायो॥

ॐ ह्रीं साम्यकृतकृत्यगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥176॥

झूलना

भूल नहीं भय धरैं छोभ नाहीं करैं,
गैर की आस को त्रास नाहीं धरैं।
शरण काकी चहैं, सबन को शरण हैं,
अन्य की शरण बिन नमूँ ताही वरैं॥

ॐ ह्रीं अनन्यशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥177॥

द्रव्य षट् में नहीं आप गुण आप ही,
आप में राजते सहज नीको सही।
स्वगुण अस्तित्वता वस्तु की वस्तुता,
धरत हो मैं नमूँ आप ही को स्वता॥

ॐ ह्रीं अनन्यगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥178॥

गैर से गैर हो आप में रमाइयो,
स्वै चतुर खेत में वास तिन पाइयो।
धर्म समुदाय हो परमपद पाइयो,
मैं तुम्हें भक्तियुत शीश निज नाइयो॥

ॐ ह्रीं अनन्यधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥179॥

साधना जब तई होत है तब तईं,
दोउ परिमाण को काज जामें नहीं।
आप निजपद लियो तिन जलाञ्जलि दियो,
अन्य नहीं चहत निज शुद्धता में लियो॥

ॐ ह्रीं परिमाणविमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥180॥

तोमर

दृग ज्ञान पूरणचंद, अकलंक ज्योति अमंद।
निरद्वंद ब्रह्मस्वरूप, नित पूजहूँ चिद्रूप॥

ॐ ह्रीं ब्रह्मस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥181॥

सब ज्ञानमय परिणाम, वर्णादि को नहिं काम।
निरद्वंद ब्रह्मस्वरूप, नित पूजहूँ चिद्रूप॥

ॐ ह्रीं ब्रह्मगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥182॥

निज चेतनागुण धार, बिन रूप हो अविकार।
निरद्वंद ब्रह्मस्वरूप, नित पूजहूँ चिद्रूप॥

ॐ ह्रीं ब्रह्मचेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥183॥

सुंदरी

अन्य रूप सु अन्य रहै सदा, पर निमित्त विभाव न हो कदा।
कहत हैं मुनि शुद्ध सुभाव येह, नमूँ सिद्ध सदा तिन पाय तेह॥

ॐ ह्रीं शुद्धस्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥184॥

पर परिणामन सों नहिं मिलत हैं, निज परिणामन सों नहिं चलत हैं।
परिणामी शुद्ध स्वरूप एह, नमूँ सिद्ध सदा तिन पांय तेह॥

ॐ ह्रीं शुद्धपारिणामिकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥185॥

वस्तुता व्यवहार नहीं ग्रहै, उपस्वरूप असत्यारथ कहै।
शुद्ध स्वरूप न ताकरि साध्य हो, निर्विकल्प समाधि अराध्य है॥

ॐ ह्रीं अशुद्धरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥186॥

द्रव्य पर्यायार्थिक नय दोऊ, स्वानुभव में विकलप नहिं कोऊ।
सिद्ध शुद्धाशुद्ध अतीत हो, नमत तुम तिस पद परतीत हो॥

ॐ ह्रीं शुद्धाशुद्धरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥187॥

चौपाई

क्षय-उपशम अवलोकन टारो, निज गुण क्षायक रूप उघारो।
युगपत सकल चराचर देखा, ध्यावत हूँ मन हर्ष विशेखा॥

ॐ ह्रीं अनन्तदृक्स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥188॥

जब पूरण अवलोकन पायो, तब पूरण आनंद उपायो।
अविनाभाव स्वयं पद देखा, ध्यावत हूँ मन हर्ष विशेखा॥

ॐ ह्रीं अनन्तदृगानन्दस्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥189॥

नाश सु पूर्वक हो उतपादा, सत लक्षण परिणति मरजादा।
क्षय-उपशम क्षायक पेखा, ध्यावत हूँ मन हर्ष विशेखा॥

ॐ ह्रीं अनन्तदृगुत्पादकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥190॥

नित्य रूप निज चित पद माँहीं, अन्य रूप पलटन हो नाहीं।
द्रव्य-दृष्टि में यह गुण देखा, ध्यावत हूँ मन हर्ष विशेखा॥

ॐ ह्रीं अनन्तध्रुवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥191॥

कर्म नाश जो निज-पद पावै, रंच मात्र फिर अंत न आवै।
यह अव्यय गुण तुम में देखा, ध्यावत हूँ मन हर्ष विशेखा॥

ॐ ह्रीं अव्ययभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥192॥

पर नहिं व्यापै तुम पद माँहीं, पर में रमण भाव तुम नाहीं।
निज करि निज में निज लय देखा, ध्यावत हूँ मन हर्ष विशेखा॥

ॐ ह्रीं अनन्तनिलयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥193॥

शंखनारी

अनंताभिधानो, गुणाकार जानो।
धरो आप सोई, नमूँ मान खोई॥

ॐ ह्रीं अनन्ताकाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥194॥

अनंता स्वभावा, विशेषन उपावा।
धरो आप सोई, नमूँ मान खोई॥

ॐ ह्रीं अनन्तस्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥195॥

बिनाकार रूपा, यह चिन्मय स्वरूपा।
धरो आप सोई, नमूँ मान खोई॥

ॐ ह्रीं चिन्मयस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥196॥

सदा चेतना में, न हो अन्यता में।
धरो आप सोई, नमूँ मान खोई॥

ॐ ह्रीं चिद्रूपस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥197॥

जो कछु भाव विशेष हैं, सब चिद्रूपी धर्म।
असाधारण पूरण भये, नमत नशे सब कर्म॥

ॐ ह्रीं चिद्रूपधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥198॥

परकृत व्याधि विनाश के, निज अनुभव की प्राप्ति।
भई, नमूँ तिनको लहूँ, यह जगवास समाप्ति॥

ॐ ह्रीं स्वानुभवोपलब्धिरमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥199॥

निरावरण निज ज्ञान करि, निज अनुभव की डोर।
गहो लहो थिरता रहो, रमण ठोर नहीं और॥

ॐ ह्रीं स्वानुभूतिरताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥200॥

सर्वोत्तम लौकीक रस-सुधा, कुरस सब त्याग।
निज पद परमामृत रसिक, नमूँ चरण बड़ भाग॥

ॐ ह्रीं परमामृतरताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥201॥

विषयामृत विषसम अरुचि, अरस अशुभ असुहान।
जान निजानंद परमरस, तुष्ट सिद्ध भगवान॥

ॐ ह्रीं परमामृततुष्टाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥202॥

शंकातीत अतीत सों, धरे प्रीत निज माँहिं।
अमल हिये संतन प्रिये, परम प्रीति नमूँ ताहिं॥

ॐ ह्रीं परमप्रीतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥203॥

अक्षय आनंद भावयुत, निज हितकार मनोग।
सज्जन चित वल्लभ परम, दुर्जन दुर्लभ योग॥

ॐ ह्रीं परमवल्लभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥204॥

शब्द गंध रस फरस नहिं, नहीं वरण आकार।
बुद्धि गहै नहिं पार तुम, गुप्त भाव निरधार॥

ॐ ह्रीं अव्यक्तभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥205॥

सर्व दर्व सों भिन्न हैं, नहिं अभिन्न तिहुँ काल।
नमूँ सदा परकाश धर, एकहि रूप विशाल॥

ॐ ह्रीं एकत्वस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥206॥

सर्व दर्वतें भिन्नता, निज गुण निज में वास।
नमूँ अखंड परमातमा, सदा सुगुण की राशि॥

ॐ ह्रीं एकत्वगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥207॥

सर्व दर्व परिणाम सों, मिलै न निज परिणाम।
नमूँ निजानंद ज्योति घन, नित्य उदय अभिराम॥

ॐ ह्रीं एकत्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥208॥

पर संयोग तथा समवाय, यह संवाद न हो द्वै भाय।
नित्य अभेद एकता धरो, प्रणमूँ द्वैत भाव हम हरो॥

ॐ ह्रीं द्वैतभावविनाशकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥209॥

पूर्व पर्याय नाशियो सोय, जाको फिर उत्पाद न होय।
अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमूँ सुखधाम॥

ॐ ह्रीं शाश्वताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥210॥

निर्विकार निर्मल निजभाव, नित्य प्रकाश अमंद प्रभाव।
अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमूँ सुखधाम॥

ॐ ह्रीं शाश्वतप्रकाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥211॥

निरावरण रवि बिंब समान, नित उद्योत धरो निज ज्ञान।
अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमूँ सुखधाम॥

ॐ ह्रीं शाश्वतोद्योताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥212॥

ज्ञानानंद सुधाकर चंद्र, सोहत पूरण ज्योति अमंद।
अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमूँ सुखधाम॥

ॐ ह्रीं शाश्वतामृतचन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥213॥

ज्ञानानंद सुधारस धार, निरविच्छेद अभेद अपार।
अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमूँ सुखधाम॥

ॐ ह्रीं शाश्वतामृतमूर्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥214॥

पद्धरि

मन-इंद्रिय ज्ञान न पाय जेह, है सूक्षम नाम सरूप तेह।
मनपर्यय हूँ जाको न पाय, सो सूक्षम परम सुगुण नमाय॥

ॐ ह्रीं परमसूक्ष्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥215॥

बहु राशि नभोदर में समाय, प्रत्यक्ष स्थूल ताको न पाय।
इक सों इक को बाधा न होय, सूक्षम अवकाशी नमों सोय॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मावकाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥216॥

नभ गुण ध्वनि हो यह जोग नाहिं, हो जिसो गुणी गुण तिसो ताहिं।
सो राजत हो सूक्षम स्वरूप, नमहूँ तुम सूक्षम गुण अनूप॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥217॥

तुम त्याग द्वैतता को प्रसंग, पायौ एकाकी छबि अभंग।
जाको कबहूँ अनुभव न होय, नमूँ परमरूप है गुप्त सोय॥

ॐ ह्रीं परमरूपगुप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥218॥

त्रोटक

सर्वार्थ विमानिक देव तथा, मन इंद्रिय भोगन शक्ति यथा।
इनके सुख को इक सीम सही, तुम आनंद को पर अंत नहीं॥

ॐ ह्रीं निरवधिसुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥219॥

जग जीवनि को नहिं भाग्य यहै, निज शक्ति उदय करि व्यक्त लहै।
तुम पूरण क्षायक भाव लहो, इम अंत बिना गुण रास गहो॥

ॐ ह्रीं निरवधिगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥220॥

भवि-जीव सदा यह रीति धरें, नित नूतन पर्य विभाव वरें।
तिस कारण को सब व्याधि दहो, तुम पाइ सुरूप जु अंत न हो॥

ॐ ह्रीं निरवधिस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥221॥

अवधी मनपर्ययज्ञान महा, द्रव्यादि विषै मरजाद लहा।
तुम ताहि उलंघ सुभावमई, निजबोध लहो जिस अंत नहीं॥

ॐ ह्रीं अतुलज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥222॥

तिहुँकाल तिहूँ जग के सुख को, कर बार अनंत गुणा इनको।
तुम एक समय सुख की समता, नहीं पाय नमूँ मन आनंदता॥

ॐ ह्रीं अतुलसुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥223॥

नाराच

सर्व जीव राशि के, सुभाव आप जान हो,
आपके सुभाव अंश और को न ज्ञान हो।
सो विशुद्ध भाव पाय जास को न अंत हो,
राज हो सदीव देव चरणदास संत हो॥

ॐ ह्रीं अतुलभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥224॥

आपकी गुणौघ बेलि फैलि है अलोक लों।
शेष से भ्रमाय पत्र की न पाय नोंक लों॥
सो विशुद्ध भाव पाय जास को न अंत हो,
राज हो सदीव देव चरणदास संत हो॥

ॐ ह्रीं अतुलगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥225॥

सूर्य को प्रकाश एक-देश वस्तु भास ही।
आपको सुज्ञान भानु सर्वथा प्रकाश ही॥
सो विशुद्ध भाव पाय जास को न अंत हो,
राज हो सदीव देव चरणदास संत हो॥

ॐ ह्रीं अतुलप्रकाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥226॥

तास रूप को गहो न फेरि जास नाश हो।
स्वात्मवास में विलास आस त्रास नाश हो॥
सो विशुद्ध भाव पाय जास को न अंत हो,
राज हो सदीव देव चरणदास संत हो॥

ॐ ह्रीं अचलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥227॥

सोरठा

मोहादिक रिपु जीत, निजगुण निधि सहजे लहो।
विलसो सदा पुनीत, अचल रूप वंदूँ सदा॥

ॐ ह्रीं अचलगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥228॥

उत्तम क्षायक भाव, क्षय-उपशम सब गये विनशि।
पायो सहज सुभाव, अचल रूप वंदूँ सदा॥

ॐ ह्रीं अचलस्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥229॥

अथिर रूप संसार, त्याग सुथिर निजरूप गहि।
रहो सदा अविकार, अचल रूप वंदूँ सदा॥

ॐ ह्रीं अचलस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥230॥

मोतियादाम

निराश्रित स्वाश्रित आनंदधाम, परै परसों न परै कछु काम।
अबिंदु अबंधु अबंध अमंद, करूँ पद-वंद रहूँ सुखवृंद॥

ॐ ह्रीं निरालम्बाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥231॥

अराग अदोष अशोक अभोग, अनिष्ट संयोग न इष्ट वियोग।
अबिंदु अबंधु अबंध अमंद, करूँ पद-वंद रहूँ सुखवृंद॥

ॐ ह्रीं आलम्बरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥232॥

अजीव न जीव न धर्म अधर्म, न काल अकाश लहै तिस धर्म।
अबिंदु अबंधु अबंध अमंद, करूँ पद-वंद रहूँ सुखवृंद॥

ॐ ह्रीं निर्लेपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥233॥

अवर्ण अकर्ण अरूप अकाय, अयोग असंयमता अकषाय।
अबिंदु अबंधु अबंध अमंद, करूँ पद-वंद रहूँ सुखवृंद॥

ॐ ह्रीं निष्कषायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥234॥

न हो परसों रुष-राग विभाव, निजातम में अवलीन स्वभाव।
अबिंदु अबंधु अबंध अमंद, करूँ पद-वंद रहूँ सुखवृंद॥

ॐ ह्रीं आत्मरतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥235॥

निज स्वरूप में लीनता, ज्यों जल पुतली खार।
गुप्त-स्वरूप नमूँ सदा, लहूँ भवार्णव पार॥

ॐ ह्रीं स्वरूपगुप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥236॥

जो हैं सो हैं और नहिं, कछु निश्चय-व्यवहार।
शुद्ध द्रव्य परमातमा, नमूँ शुद्धता धार॥

ॐ ह्रीं शुद्धद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥237॥

पूर्वोत्तर संतति तनी, भव व्यच्छेद कराय।
असंसार पद को नमूँ, यह भव वास नशाय॥

ॐ ह्रीं असंसाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥238॥

नागरूपिणी तथा अर्द्धनाराच छंद

हरो सहाय कर्ण को, सुभोगता विवर्ण को।
निजातमीक एक ही लहो अनन्द तास ही॥

ॐ ह्रीं स्वानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥239॥

न हो विभावता कदा, स्वभाव में सुखी सदा॥
निजातमीक एक ही लहो अनन्द तास ही॥

ॐ ह्रीं स्वानन्दभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥240॥

अछेद रूप सर्वथा, उपाधि की नहीं व्यथा॥
निजातमीक एक ही लहो अनन्द तास ही॥

ॐ ह्रीं स्वानन्दस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥241॥

दुभेदता न वेद ही, सचेतना अभेद ही॥
निजातमीक एक ही लहो अनन्द तास ही॥

ॐ ह्रीं स्वानन्दगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥242॥

न अन्य की परवाह है, अचाह है, न चाह है॥
निजातमीक एक ही लहो अनन्द तास ही॥

ॐ ह्रीं स्वानन्दसन्तोषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥243॥

रागादिक परिणाम, हैं कारण संसार के।
नाश लियो सुखधाम, नमत सदा भव-भय हरूँ॥

ॐ ह्रीं शुद्धभावपर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥244॥

उदइक भाव विनाश, प्रगट कियो निज धर्म को।
स्वातम गुण परकाश, नमत सदा भव-भय हरूँ॥

ॐ ह्रीं स्वतन्त्रधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥245॥

निजगुण पर्य सरूप, स्वयं-सिद्ध परमात्मा।
राजत हैं शिवभूप, नमत सदा भव-भय हरूँ॥

ॐ ह्रीं आत्मस्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥246॥

विमल विशद निज ज्ञान, है स्वभाव परिणतिमई।
राजत हैं सुख-खानि, नमत सदा भव-भय हरूँ॥

ॐ ह्रीं परमचित्परिणामाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥247॥

दर्श-ज्ञानमय धर्म, चेतन धर्मी प्रगट हो।
भेदाभेद सुपर्म, नमत सदा भव-भय हरूँ॥

ॐ ह्रीं चिद्रूपधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥248॥

दर्श-ज्ञान-गुणसार, जीवभूत परमातमा।
राजत सब परकार, नमत सदा भव-भय हरूँ॥

ॐ ह्रीं चिद्रूपगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥249॥

अष्ट कर्ममल जार, दीप्तरूप निज पद लहो।
स्वच्छ हेम उनहार, नमत सदा भव-भय हरूँ॥

ॐ ह्रीं परमस्नातकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥250॥

रागादिक मल सोध, दोऊ विविध विधान बिन।
लहो शुद्ध प्रतिबोध, नमत सदा भव-भय हरूँ॥

ॐ ह्रीं स्नातकधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥251॥

विधि आवर्ण विनाश, दर्श-ज्ञान परिपूर्ण हो।
लोकालोक प्रकाश, नमत सदा भव-भय हरूँ॥

ॐ ह्रीं सर्वावलोकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥252॥

निजकर निज में वास, सर्व लोक सों भिन्नता।
पायो शिव सुख-रास, नमत सदा भव-भय हरूँ॥

ॐ ह्रीं लोकाग्रस्थिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥253॥

ज्ञान-भान की जोति, व्यापक लोकालोक में।
दर्शन बिन उद्योत, नमत सदा भव-भय हरूँ॥

ॐ ह्रीं लोकालोकव्यापकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥254॥

जे कुछ धरत विशेष, सब ही सब आनंदमय।
लेश न भाव कलेस, नमत सदा भव-भय हरूँ॥

ॐ ह्रीं आनन्दनिधानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥255॥

जिस आनंद को पार, पावत नहिं यह जगतजन।
सो पायो हितकार, नमत सदा भव-भय हरूँ॥

ॐ ह्रीं आनन्दपूर्णाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥256॥

नित्य धर्म सुखकार, दर्शन ज्ञान चरित्रमय।
मनसों दुविधा टार, नमत सदा भव भय हरूँ॥

ॐ ह्रीं रत्नत्रयसंयुक्ताय सिद्धाधिपतये नमः ॥257॥

सब जीवन के हेत, दश विधि धर्म बताइयो।
जासो होय सुचेत, आलस तजि धारण करो॥

ॐ ह्री दशधर्मसंयुक्ताय सिद्धाधिपतये नमः ॥258॥

इत्यादिक आनंद गुण, धारत सिद्ध अनंत।
तिन पद आठों दरव सों, पूजत है नित 'संत'॥

ॐ ह्रीं षड्पञ्चाशदधिकद्विशतगुणसंयुक्तश्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जयमाला

थावर शब्द विषय धरै, त्रस-थावर पर्याय।
यो न होय तो तुम सुगुण, हम किह विधि वर्णाय ॥1॥

तिस पर जो कछु कहत हैं, केवल भक्ति प्रमान।
बालक जल शशि-बिंब को, चहत ग्रहण निज पान ॥2॥

पद्धरि

जय पर-निमित्त व्यवहार त्याग, पायो निज शुद्ध-स्वरूप भाग।
जय जगपालन बिन जगत देव, जय दयाभाव बिनशांतिमेव ॥3॥

पर सुख-दुखकरण कुरीति टार, पर सुख-दुखकारण शक्तिधार।
पुनि-पुनि नव-नव नित जन्मरीत, बिन सर्वलोक थापी पुनीत ।।4 ।।
जय लीला रास विलास नाश, स्वाभाविक निजपद रमण वास।
शयनासन आदि क्रिया-कलाप, तज सुखी सदा शिवरूप आप ।।5 ।।
बिन कामदाह नहिं नार भोग, निरद्वंद निजानंद मगन योग।
वर माल आदि श्रृंगार रूप, बिन शुद्ध निरंजन पद अनूप ।।6 ।।
जय धर्म भर्म वन हन कुठार, परकाश-पुंज चिद्रूप सार।
उपकरण हरण दव सलिलधार, निज शक्ति प्रभाव उदय अपार ।।7 ।।
नभ सीम नहीं अरु होत होउ, नहीं काल अंत लहो अंत सोउ।
पर तुम गुणरास अनंत भाग, अक्षय विधि राजत अवधि त्याग ।।8 ।।
आनंद जलधि धारा-प्रवाह, विज्ञान सुरी मुख-द्रह अथाह।
निज शांति सुधारस परम खान, समभाव बीज उत्पत्ति थान ।।9 ।।
निज आत्मलीन विकलप विनाश, शुद्धोपयोग परिणति प्रकाश।
दृग ज्ञान असाधारण स्वभाव, स्पर्श आदि परगुण अभाव ।।10 ।।
निज गुणपर्यय समुदाय स्वामि, पायो अखंड पद परम धाम।
अव्यय अबाध पद स्वयं सिद्ध, उपलब्धिरूप धर्मी प्रसिद्ध ।।11 ।।
एकाग्ररूप चिंता निरोध, जे ध्यावैं पावैं स्वयंबोध।
गुणमात्र 'संत' अनुराग रूप, यह भाव देहु तुम पद अनूप ।।12 ।।

सिद्ध सुगुण सुमरण महा, मंत्रराज है सार।
सर्व सिद्धि दातार है, सर्व विघन हरतार ।।13 ।।

ॐ ह्रीं अर्हं षड्पञ्चाशदधिकद्विशतदलोपरिस्थितसिद्धेभ्यः पूर्णार्घ्यं।

तीन लोक चूड़ामणी, सदा रहो जयवंत।
विघन हरण मंगल करण, तुम्हें नमैं नित 'संत' ।।14 ।।

।। इत्याशीर्वादः ।।

जाप - ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा नमः। (108 बार)

सप्तम पूजा

ऊरध अधो सुरेफ सबिन्दु हकार विराजै,
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजै।
वर्ग्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व सन्धिधर,
अग्रभाग में मन्त्र अनाहत सोहत अतिवर॥
पुनि अन्त ह्रीं बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नाग को।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मङ्गल करो॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वादशाधिकपञ्चशतगुणसंयुक्ताय-श्रीसिद्ध-परमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

सूक्ष्मादिक गुण सहित है, कर्म रहित नीरोग।
सिद्धचक्र सो थापहूँ, मिटै उपद्रव योग॥

इति यंत्रस्थापनार्थं पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

बारहमासा

सुर मणि-कुंभ क्षीर भर धारत, मुनि मन-शुद्धप्रवाह बहावहिं।
हम दोऊ विध लायक नाहिं, कृपा करहुँ लहि भव तट भावहिं॥
शक्ति सार सामान्य नीर सों, पूजूँ हूँ शिव-तिय के स्वामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने द्वादशाधिकपञ्चशतगुण-संयुक्ताय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

न तु कोउ चंदन न तु कोउ केसर, भेंट किये भवपार भयो है।
केवल आप कृपा-दृग ही सों, यह अथाह दधि पार लयो है॥
रीति सनातन भक्तन की लखि, चंदन की यह भेंट धरामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने द्वादशाधिकपञ्चशतगुण-संयुक्ताय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

इंद्रादिक पद हूँ अनवस्थित, दीखत अंतर रुचि न करैं हैं।
केवल एकहि स्वच्छ अखण्डित, अक्षयपद की चाह धरैं हैं॥
तातें अक्षत सों अनुरागी हूँ सो तुम पद पूज करामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने द्वादशाधिकपञ्चशतगुण-संयुक्ताय अक्षतान् निर्व. स्वाहा।

पुष्प-बाण ही सो मन्मथ जगविजई जग में नाम धरावै।
देखहु अद्भुत रीति भक्त की, तिसहि भेंट धर काम हनावै॥
शरणागत की चूक न देखी, तातैं पूज्य भये शिरनामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने द्वादशाधिकपञ्चशतगुण-संयुक्ताय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

हनन असाता-पीर नहीं यह, भीर परै चरु भेंटन लायो।
भक्त अभिमान मेंटहो स्वामी, यह भवकारण भाव सतायो॥
मम उद्यम करि कहा आप ही, सो एकाकी अर्थ लहामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने द्वादशाधिकपञ्चशतगुण-संयुक्ताय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूरण ज्ञानानंद ज्योति घन, विमल गुणातम शुद्ध स्वरूपी।
हो तुम पूज्य भये हम पूजक, पाय विवेक प्रकाश अनूपी॥
मोह अंध विनसों तिह कारण, दीपन सों अर्चूं अभिरामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने द्वादशाधिकपञ्चशतगुण-संयुक्ताय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप भरे उघरें प्रजरें मणि, हेम घरे तुम पद पर वारूँ।
बार-बार आवर्त जोरि करि, धार-धार निजशीश न हारूँ॥
धूम्र धार सम तन रोमांचित, हर्ष सहित अष्टांग नमामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने द्वादशाधिकपञ्चशतगुण-संयुक्ताय धूपं निर्व. स्वाहा।

तुम हो वीतराग निज पूजन, वंदन थुति परवाह नहीं है।
अरु अपने समभाव बहै कछु, पूजा फल की चाह नहीं है॥
तो भी यह फल पूजि फलद अनिवार, निजानंद कर इच्छामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने द्वादशाधिकपञ्चशतगुण-संयुक्ताय फलं निर्व. स्वाहा।

तुमसे स्वामी के पद सेवत, यह विधि दुष्ट रंक कहा कर है।
ज्यों मयूरध्वनि सुनि अहि निज बिल, विलय जाय छिन बिलम न धरहै॥
तातैं तुम पद अर्घ उतारण, विरद उचारण करहुँ मुदामी॥
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुख धामी॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने द्वादशाधिकपञ्चशतगुण-संयुक्ताय निर्वपामीति स्वाहा।

निर्मल सलिल शुभवास चन्दन धवल अक्षत युत अनी,
शुभ पुष्प मधुकर नित रमैं चरु प्रचुर-स्वाद सुविधि घनी।
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले,
करि अर्घ सिद्धसमूह पूजत कर्म-दल सब दलमले॥1॥
ते क्रमावर्त नशाय युगपत ज्ञान निर्मल रूप हैं,
दुख जन्म टार अपार गुण सूक्षम सरूप अनूप हैं।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज अदूज शिव कमलापती,
मुनि ध्येय सेय अमेय चहुँ गुण गेह द्यो हम शुभमती॥2॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने द्वादशाधिकपञ्चशतगुण-संयुक्ताय महार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पाँच सौ बारह गुण सहित अर्घ

जोगीरासा

लोकत्रय करि पूज्य प्रधाना, केवल ज्योति प्रकाशी।
भव्यन मन तम मोह विनाशक, वंदूँ शिवथलवासी॥

ॐ ह्रीं अर्हद्भ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥1॥

सुर-नर-मुनि मन कुमुदन मोदन, पूरण चंद्र समाना।
हो अर्हंत जात जन्मोत्सव, वंदूँ श्री भगवाना॥

ॐ ह्रीं अर्हज्जाताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥2॥

केवल-दर्श-ज्ञान-किरणावलि, मंडित तिहुँ जग चंदा।
मिथ्यातप हर जल आदिक कर, वंदूँ पद अरविंदा॥

ॐ ह्रीं अर्हच्चिद्रूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥3॥

घातिकर्म रिपु जार छारकर, स्व-चतुष्टय पद पायो।
निजस्वरूप चिद्रूप गुणातम, हम तिन पद शिर नायो॥

ॐ ह्रीं अर्हच्चिद्रूपगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥4॥

ज्ञानावरणी पटल उघारत, केवल-भानु उगायो।
भव्यन को प्रतिबोध उघारें, बहुरि मुक्ति पद पायो॥

ॐ ह्रीं अर्हज्ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥5॥

धर्म-अधर्म तास फल दोनों, देखो जिम कर रेखा।
बतलायो परतीत विषय करि, यह गुण जिन में देखा॥

ॐ ह्रीं अर्हद्दर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥6॥

मोह महा दृढ़ बंध उघारो, कर विषतंतु समाना।
अतुलबली अरिहंत कहायो, पाय नमूँ शिवथाना॥

ॐ ह्रीं अर्हद्वीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥7॥

युगपत लोकालोक विलोकन, है अनंत दृगधारी।
गुप्तरूप शिवमग दरसायो, तिन पद धोक हमारी॥

ॐ ह्रीं अर्हद्दर्शनगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥8॥

घटपटादि सब परकाशत जद, हो रवि किरण पसारा।
तैसो ज्ञान-भान अर्हत् को, ज्ञेय अनंत उघारा॥

ॐ ह्रीं अर्हज्ज्ञानगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥9॥

आसन शयन पान भोजन बिन, दीप्त देह अरिहंता।
ध्यान वान करतान हान विधि, भये सिद्ध भगवंता॥

ॐ ह्रीं अर्हद्वीर्यगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥10॥

सप्त तत्त्व षट् द्रव्य भेद सब, जानत संशय खोई।
ताकरि भव्य जीव संबोधे, नमूँ भये सिद्ध सोई॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सम्यक्त्वगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥11॥

ध्यान सलिल सों धोय लोभमल, शुद्ध निजातम कीनो।
परम शौच अरहन्त स्वरूपी, पाय नमूँ शिव लीनो॥

ॐ ह्रीं अर्हद्शौचगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥12॥

नय-प्रमाण श्रुतज्ञान प्रकारा, द्वादशांग जिनवानी।
प्रगटायो प्रत्यक्ष ज्ञानतें, नमूँ भये शिव-थानी॥

ॐ ह्रीं अर्हद्द्वादशाङ्गाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥13॥

मन-इंद्रिय बिन सकल चराचर, जुगपद कर प्रगटायो।
यह अरहंत मती कहलायो, वंदूँ तिन शिव पायो॥

ॐ ह्रीं अर्हदभिन्नबोधकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥14॥

अनुभव सम नहीं होत दिव्यध्वनि, ताको भाग अनंता।
जानो गणधर यह श्रुत-अवधि, पाय नमूँ अरिहंता॥

ॐ ह्रीं अर्हच्छ्रुतावधिगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥15॥

सर्वावधि निधि वृद्धि प्रवाही, केवल-सागर मांहीं।
एक भयो अरहन्त अवधि यह, मुक्त भये नमूँ तांहीं॥

ॐ ह्रीं अर्हदवधिगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥16॥

अति विशुद्धमय विपुलमती लहि, हो पूर्वोक्त प्रकारा।
यह अरहन्त पाय मनपर्यय, नमूँ भये भव पारा॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मनःपर्ययभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥17॥

मोह मलिनता जग जिय नाशैं, केवलता गुण पावैं।
सर्व शुद्धता पाय, नमत हैं हम, अरिहंत कहावैं॥

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥18॥

मोह-जनित सो रूप विरूपी, तिस बिन केवलरूपा।
श्री अरहन्त रूप सर्वोत्तम, वंदूँ हो शिव भूपा॥

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥19॥

तास विरोधी कर्म जीत के, केवल-दरशन पायो।
इस गुणसहित नमत तुम पदप्रति, भावसहित शिर नायो॥

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलदर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥20॥

निर–आवरण करण बिन जाको, शरण हरण नहिं कोई।
केवल–ज्ञान पाय शिव पायो, पूजत हैं हम सोई॥

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।21 ।।

अगम अतीर भवोदधि उतरे, सहज ही गोखुर मानो।
केवल बल अरहन्त नमें हम, शिवथल वास करानो॥

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलवीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।22 ।।

सब विधि अपने विघन निवारण, औरन विघन विडारी।
मंगलमय अरहन्त सर्वदा, नमूँ मुक्ति पदधारी॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मङ्गलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।23 ।।

चक्षु आदि सब विघन विदूरित, क्षायिक मंगलकारी।
यह अरिहंत दर्श पायो मैं, नमूँ भये शिवधारी॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मङ्गलदर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।24 ।।

निजपर संशय आदि पाय बिन, निरावरण विकसानो।
मंगलमय अरिहंत ज्ञान है, वंदूँ शिवसुख थानो॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मङ्गलज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।25 ।।

परकृत जरा आदि संकट बिन, अतुलबली अरिहन्ता।
नमूँ सदा शिवनारी के संग, सुखसों केलि करंता॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मङ्गलवीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।26 ।।

पापरूप एकांत पक्ष बिन, सर्व–तत्त्व–परकाशी।
द्वादशांग अरहंत कहों मैं, नमूँ भये शिववासी॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मङ्गलद्वादशाङ्गाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।27 ।।

बिन प्रत्यक्ष अनुमान सबाधित, सुमतिरूप परिणामा।
मंगलमय अर्हंतमती मैं, नमूँ देउ शिवधामा॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मङ्गलाभिनिबोधकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।28 ।।

नय विकल्प श्रुत अङ्ग पक्ष के, त्यागी हैं भगवंता।
ज्ञाता दृष्टा वीतराग, विख्यात नमूँ अरिहंता॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मङ्गलश्रुताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।29 ।।

मंगलमय सर्वावधि जाकरि, पावैं पद अरिहंता।
वंदूँ ज्ञानप्रकाश नाश भव, शिवथल वास करंता॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मङ्गलावधये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥30॥

वर्धमान मनपर्यय ज्ञान कर, केवल भानु उगाया।
भव्यनि प्रति शुभमार्ग बतायो, नमूँ सिद्ध पद पाया॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मङ्गलमनःपर्ययाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥31॥

जा बिन और अज्ञान सकल जग, कारण बंध प्रधाना।
नमूँ पाय अरिहंत मुक्ति पद, मंगल केवलज्ञाना॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मङ्गलकेवलज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥32॥

निरावरण निरखेद निरंतर, निराबाधमई राजैं।
केवलरूप नमूँ सब अघहर, श्री अरिहंत विराजैं॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मङ्गलकेवलस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥33॥

चक्षु आदि सब भेद विघन हर, क्षायक दर्शन पाया।
श्री अरहन्त नमूँ शिववासी, इह जग पाप नशाया॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मङ्गलकेवलदर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥34॥

जग मंगल सब विघन रूप हैं, इक केवल अरहंता।
मंगलमय सब मंगलदायक, नमूँ कियो जग अंता॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मङ्गलकेवलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥35॥

केवलरूप महा मंगलमय, परम शत्रु क्षयकारा।
सो अरहंत सिद्धपद पायो, नमूँ पाय भवपारा॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मङ्गलकेवलरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥36॥

शुद्धातम निजधर्म प्रकाशी, परमानंद विराजैं।
सो अरहंत परम मंगलमय, नमूँ शिवालय राजैं॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मङ्गलधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥37॥

सब विभावमय विघन नाशकर, मंगल धर्मस्वरूपा।
सो अरहंत भये परमातम, नमूँ त्रियोग निरूपा॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मङ्गलधर्मस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥38॥

सर्व जगत संबंध विघन नहीं, उत्तम मंगल सोई।
सो अरहंत भये शिववासी, पूजत शिवसुख होई॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मङ्गलोत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥39॥

लोकातीत त्रिलोक पूज्य जिन, लोकोत्तम गुणधारी।
लोकशिखर सुखरूप विराजैं, तिनपद धोक हमारी॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥40॥

लोकाश्रित गुण सब विभाव हैं, श्री जिनपद सों न्यारे।
तिनको त्याग भये शिव वंदूँ, काटो बंध हमारे॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥41॥

मिथ्यामति कर सहित ज्ञान, अज्ञान जगत में सारा।
ता विनाशि अरिहंत कहो, लोकोत्तम पूज हमारा॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥42॥

क्षायक दरशन है अरहंता, और लोक में नाहीं।
सो अरहंत भये शिववासी, लोकोत्तम सुखदाई॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमदर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥43॥

कर्मबली ने सब जग बांध्यो, ताहि हनो अरहंता।
यह अरहंत वीर्य लोकोत्तम, पायो सिद्ध अनंता॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमवीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥44॥

अक्षातीत ज्ञान लोकोत्तम, परमातम पद मूला।
सो अरहंत नमूँ शिवनायक, पाऊँ भवदधि कूला॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमाभिनिबोधकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥45॥

परमावधि ज्ञान सुखखानी, केवलज्ञान प्रकाशी।
यह अवधि अरहंत नमूँ मैं, संशय तम को नाशी॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमावधिज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥46॥

जो अरहंत धरै मनपर्यय, सो केवल के मांहीं।
साक्षात् शिवरूप नमों मैं, अन्य लोक में नाहीं॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तममनःपर्ययज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥47॥

तीन लोक में सार सु श्री अरहंत स्वयंभू ज्ञानी।
नमूँ सदा शिवरूप आप हो, भविजन प्रति सुखदानी॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥48॥

सर्वोत्तम तिहुँ लोक प्रकाशित, केवलज्ञान स्वरूपी।
सो अरहंत नमूँ शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलज्ञानस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥49॥

ज्ञान तरंग अभंग बहै, लोकोत्तम धार अरूपी।
सो अरहंत नमूँ शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलपर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥50॥

सहित असाधारण गुण-पर्यय, केवलज्ञान सरूपी।
सो अरहंत नमूँ शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥51॥

जगजिय सर्व अशुद्ध कहो इक, केवल शुद्ध सरूपी।
सो अरहंत नमूँ शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥52॥

विविध कुरूप सर्व जगवासी, केवल स्वयं सरूपी।
सो अरहंत नमूँ शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥53॥

हीनाधिक धिक् धिक् जग प्राणी, धन्य एक ध्रुवरूपी।
सो अरहंत नमूँ शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमध्रुवभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥54॥

संसारिन के भाव सब, बंध हेत वरणाय।
मुक्तरूप अरहंत के, भाव नमूँ सुखदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥55॥

कबहुँ न होय विभावमय, सो थिर भाव जिनेश।
मुक्तरूप प्रणमूँ सदा, नाशे विघन विशेष॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमस्थिरभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥56॥

जा सेवत वेवत स्व सुख, सो सर्वोत्तम देव।
शिववासी नाशी त्रिजग-फाँसी नमहूँ एव॥

ॐ ह्रीं अर्हच्छरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥57॥

जिन ध्यायो तिन पाइयो, निश्चय सो सुखरास।
शरण स्वरूपी जिन नमूँ, करैं सदा शिववास॥

ॐ ह्रीं अर्हच्छरणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥58॥

पद्धरि

स्वाभाविक गुण अरहंत गाय, जासों पूरण शिवसुख लहाय।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हद्गुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥59॥

बिन केवलज्ञान न मुक्ति होय, पायो है श्री अरहंत सोय।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हज्ज्ञानशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 60॥

प्रत्यक्ष देख सर्वज्ञ देव, भाख्यो है शिव-मारग असेव।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हद्दर्शनशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 61॥

संसार विषम-बंधन उछेद, अरहंत वीर्य पायो अखेद।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हद्वीर्यशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 62॥

सब कुमति विगत मत जिन प्रतीत, हो जिसतें शिवसुख दे अभीत।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हद्द्वादशाङ्गश्रुतशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥63॥

अनुमानादिक साधित विज्ञान, अरहंत मति प्रत्यक्ष जान।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हदभिनिबोधकशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥64॥

जिन भाषित श्रुत सुनि भव्य जीव, पायो शिव अविनाशी सदीव।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हच्छ्रुतशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।65।।

प्रतिपक्षी सब जीते कषाय, पायो अवधी शिवसुख कराय।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हदवधिबोधशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।66।।

मुनि लहैं गहैं परिणाम श्वेत, जिन मनपर्यय शिववास देत।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मनःपर्ययशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।67।।

आवरण रहित प्रत्यक्ष ज्ञान, शिवरूप केवली जिन सुजान।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।68।।

मुनि केवलज्ञानी जिन अराध, पावैं शिव-सुख निश्चय अबाध।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलशरणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।69।।

शिव-सुखदायक निज आत्म-ज्ञान, सो केवल पावै जिन महान।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलधर्मशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।70।।

यह केवल गुण आतम स्वभाव, अरहंतन प्रति शिव-सुख उपाय।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।71।।

संसार रूप सब विघन टार, मंगल गुण श्री जिन मुक्तिकार।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मङ्गलगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।72।।

क्षय-उपशम ज्ञानी विघन रूप, ता बिन जिन ज्ञानी शिव सरूप।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मङ्गलज्ञानशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।73।।

अरहंत दर्श मंगल स्वरूप, तासों दरशै शिव-सुख अनूप।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मङ्गलदर्शनशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥74॥

अरहंत बोध है मंगलीक, शिव-मारग प्रति वरते अलीक।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मङ्गलबोधशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥75॥

निज ज्ञानानंद प्रवाह धार, वरते अखंड अव्यय अपार।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मङ्गलकेवलशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥76॥

जा बिन तिहुँ लोक न और ठान, भवसिंधु तरण-तारण महान।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥77॥

स्वाभाविक भव्यन प्रति दयाल, विच्छेद करण संसार जाल।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥78॥

तुम बिन समरथ तिहुँ लोक माहिं, भवसिंधु उतारण और नाहिं।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमवीर्यशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥79॥

बिन परिश्रम तारण-तरण होय, लोकोत्तम अद्भुत शक्ति सोय।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमवीर्यगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥80॥

अप्रसिद्ध कुनय अल्पज्ञ भास, ताको विनाश शिवमग प्रकाश।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमद्वादशाङ्गशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥81॥

सब कुनय कुपक्ष कुसाध्य नाश, सत्यारथ-मत कारण प्रकाश।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमाभिनिबोधकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥82॥

मिथ्यात प्रकृति अवधी विनाश, लोकोत्तम अवधी को प्रकाश।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमावधिशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।83।।

मनपर्यय शिवमंगल लहाय, लोकोत्तम श्रीगुरु सो कहाय।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तममनःपर्ययशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।84।।

आवरणातीत प्रत्यक्ष ज्ञान, है सेवनीक जग में प्रधान।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलज्ञानशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।85।।

हो बाह्य विभव सुरकृत अनूप, अंतर लोकोत्तम ज्ञानरूप।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमविभूतिप्रधानशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।86।।

रत्नत्रय निमित मिलो अबाध, पायो निज आनंद धर्म साध।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमविभूतिधर्मशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।87।।

सुख-ज्ञान-वीर्य-दर्शन सुभाव, पायो कर सब प्रकृती अभाव।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमानन्तचतुष्टयशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।88।।

अडिल्ल

दर्श-ज्ञान-सुख-बल निजगुण ये चार हैं,
आतमीक परधान विशेष अपार हैं।
इनहीं सों हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हमहूँ यह गुण पाय नमन यातैं करा॥

ॐ ह्रीं अर्हदनन्तगुणचतुष्टयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।89।।

क्षयोपशम सम्बाधित ज्ञानकलाहरी,
पूरण ज्ञायक स्वयंबुद्ध श्रीजिनवरी।
इनहीं सों हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,

हमहूँ यह गुण पाय नमन यातैं करा॥

ॐ ह्रीं अर्हन्निजज्ञानस्वयंभुवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥90॥

जन्मत ही दश अतिशय शासन में कही,
स्वयं शक्ति भगवान आप तिन को लही।
इनहीं सों हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हमहूँ यह गुण पाय नमन यातैं करा॥

ॐ ह्रीं अर्हद्दशातिशयस्वयंभुवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 91॥

ये दश अतिशय घातिकर्म क्षय को करें,
महाविभव को पाय मोक्षनारी वरैं।
इनहीं सों हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हमहूँ यह गुण पाय नमन यातैं करा॥

ॐ ह्रीं अर्हद्दशातिशयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 92॥

केवल विभव उपाय प्रभु जिन पद लियो,
चौदह अतिशय देवन करि सेवन कियो।
इनहीं सों हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हमहूँ यह गुण पाय नमन यातैं करा॥

ॐ ह्रीं अर्हद्देवकृतचतुर्दशातिशयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 93॥

चौतिस अतिशय जे पुराण वरणे महा,
मुक्ति समाज अनूप श्रीगुरु ने कहा।
इनहीं सों हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हमहूँ यह गुण पाय नमन यातैं करा॥

ॐ ह्रीं अर्हच्चतुस्त्रिंशदतिशयविराजमानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥94॥

लोकालोक अणु सम जानो, ज्ञानानंत सुगुण पहिचानो।
सो अरिहंत सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो॥

ॐ ह्रीं अर्हज्ज्ञानानन्तगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥95॥

समरस सुस्थिर भाव उघारा, युगपत लोकालोक निहारा।
सो अरिहंत सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो॥
ॐ ह्रीं अर्हद्ध्यानानन्तध्येयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥96॥

इक-इक गुण का भाव अनंता, पर्यरूप सो है अरहंता।
सो अरिहंत सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो॥
ॐ ह्रीं अर्हदनन्तगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥97॥

उत्तर गुण सब लख चौरासी, पूरण चारित भेद प्रकाशी।
सो अरिहंत सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो॥
ॐ ह्रीं अर्हत्तपोऽनन्तगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥98॥

आतम शक्ति जास करि छीनी, तास नाश प्रभुताई लीनी।
सो अरिहंत सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो॥
ॐ ह्रीं अर्हत्परमात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥99॥

निज गुण निज ही माँहिं समाये, गणधरादि वरनन न कराये।
सो अरिहंत सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो॥
ॐ ह्रीं अर्हद्स्वरूपगुप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥100॥

दोधक

जो निज आतम साधु सुखाई, सो जगतेश्वर सिद्ध कहाई।
लोक शिरोमणि है शिवस्वामी, भाव सहित तुमको प्रणमामी॥
ॐ ह्रीं सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥101॥

सर्व विरूप विरुद्ध सरूपी, स्वातम-रूप विशुद्ध अनूपी।
लोक शिरोमणि है शिवस्वामी, भाव सहित तुमको प्रणमामी॥
ॐ ह्रीं सिद्धस्वरूपेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥102॥

पराश्रित सर्व विभाव निवारा, स्वाश्रित सर्व अबाध अपारा।
लोक शिरोमणि है शिवस्वामी, भाव सहित तुमको प्रणमामी॥
ॐ ह्रीं सिद्धगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥103॥

आकुलता सबही विधि नाशी, ज्ञायक लोकालोक प्रकाशी।
लोक शिरोमणि है शिवस्वामी, भाव सहित तुमको प्रणमामी॥
ॐ ह्रीं सिद्धज्ञानेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥104॥

जीव अजीव लखे अविचारा, हो नहिं अंतर एक प्रकारा।
लोक शिरोमणि है शिवस्वामी, भाव सहित तुमको प्रणमामी ॥

ॐ ह्रीं सिद्धदर्शनेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥105 ॥

अंतर बाहिर भेद उघारी, दर्श विशुद्ध सदा सुखकारी।
लोक शिरोमणि है शिवस्वामी, भाव सहित तुमको प्रणमामी ॥

ॐ ह्रीं सिद्धसम्यक्त्वेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥106 ॥

एक अणु मल कर्म लजावै, सोय निरंजनता नहिं पावै।
लोक शिरोमणि है शिवस्वामी, भाव सहित तुमको प्रणमामी ॥

ॐ ह्रीं सिद्धनिरञ्जनेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥107 ॥

अर्द्धरोला

चारों गति को भ्रमण, नाशकर थिरता पाई।
निजस्वरूप में लीन, अन्य सों मोह नशाई ॥

ॐ ह्रीं अचलपदप्राप्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥108 ॥

रत्नत्रय आराधि साधि, निज शिवपद पायो।
संख्या भेद उलंघि, शिवालय वास करायो ॥

ॐ ह्रीं संख्यातीतसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥109 ॥

असंख्यात मरजाद, एक ताहू सो बीते।
विजयी लक्ष्मीनाथ, महाबलि सब विधि जीते ॥

ॐ ह्रीं असंख्यातसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥110 ॥

काल आदि मर्याद, अनादी इह विधि जारी।
भए अनंत दिगम्बर साधु जे शिवपदधारी ॥

ॐ ह्रीं अनन्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥111 ॥

पुष्करार्द्ध सागर लों जे जल थान बखानो।
देव सहाइ उपाइ ऊर्ध्व-गति गमन करानो ॥

ॐ ह्रीं जलसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥112 ॥

वन गिरि नगर गुफादि, सर्व थल सों शिव पाई।
सिद्धक्षेत्र सब ठौर बखानत, श्री जिनराई ॥

ॐ ह्रीं स्थलसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥113 ॥

नभ ही में जिन शुक्लध्यान, बल कर्म नाश किये।
आयु पूर्ण वश ततछिन, ही शिववास जाय लिये॥

ॐ ह्रीं गगनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥114॥

आयु स्थिति सम अन्य कर्म, कारण परदेशा।
परसैं पूरण लोक आत्म, केवली जिनेशा॥

ॐ ह्रीं समुद्घातसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥115॥

केवलि जिन बिन समुद्घात, शिववास लिया है।
स्वतः स्वभाव समान, अघाती कर्म किया है॥

ॐ ह्रीं असमुद्घातसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥116॥

उल्लाला

तिन विशेष अतिशय रहित, सामान्य केवली नामहै।
सिद्ध भये तिहुँ योग तैं, तिनके पद परणाम है॥

ॐ ह्रीं साधारणसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥117॥

त्रिभुवन में नहीं पावतो, जो जिन गुण अभिराम हैं।
सिद्ध भये तिहुँ योग तैं, तिनके पद परणाम है॥

ॐ ह्रीं असाधारणसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥118॥

गर्भ कल्याण आदि युत, तीर्थंकर सुखधाम है।
सिद्ध भये तिहुँ योग तैं, तिनके पद परणाम है॥

ॐ ह्रीं तीर्थङ्करसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥119॥

तीर्थंकर के समय में, केवलि जिन अभिराम है।
सिद्ध भये तिहुँ योग तैं, तिनके पद परणाम है॥

ॐ ह्रीं तीर्थङ्करान्तरसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥120॥

पंच शतक पच्चीस पुनि, धनुष काय अभिराम है।
सिद्ध भये तिहुँ योग तैं, तिनके पद परणाम है॥

ॐ ह्रीं उत्कृष्टावगाहनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥121॥

आदि अंत अंतर विषैं, मध्य अवगाहन नाम है।
सिद्ध भये तिहुँ योग तैं, तिनके पद परणाम है॥

ॐ ह्रीं मध्यमावगाहनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥122॥

तीन अर्द्ध तन केवली, हस्त प्रमाण कहाय हैं॥
सिद्ध भये तिहुँ योग तैं, तिनके पद परणाम है।

ॐ ह्रीं जघन्यावगाहनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥123॥

देव निमित्त मिलो जहाँ, त्रिजग केवली धाम है॥
सिद्ध भये तिहुँ योग तैं, तिनके पद परणाम है।

ॐ ह्रीं तिर्यक्लोकसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥124॥

षट्विधि परिणति काल की, तिस अपेक्ष यह नाम है।
सिद्ध भये तिहुँ योग तैं, तिनके पद परणाम है॥

ॐ ह्रीं षड्विधिकालसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥125॥

अंत समय उपसर्ग तैं, शुक्लध्यान अभिराम है।
सिद्ध भये तिहुँ योग तैं, तिनके पद परणाम है॥

ॐ ह्रीं उपसर्गसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥126॥

पर-उपसर्ग मिलै नहीं, स्वतः शुक्ल शुभ धाम है।
सिद्ध भये तिहुँ योग तैं, तिनके पद परणाम है॥

ॐ ह्रीं निरुपसर्गसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥127॥

अंतर द्वीप महा जहाँ, देवन के अभिराम है।
सिद्ध भये तिहुँ योग तैं, तिनके पद परणाम है॥

ॐ ह्रीं अन्तर्द्वीपसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥128॥

देव गये ले सिंधु जब, कर्म छयो तिहँ ठाम है।
सिद्ध भये तिहुँ योग तैं, तिनके पद परणाम है॥

ॐ ह्रीं उदधिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥129॥

भुजंगप्रयात

धरैं जोग आसन गहैं स्वस्थिताई,
न हो खेद ध्यानाग्नि सो कर्म छाई।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा,
यही मोक्ष नाजा नमः सिद्ध काजा॥

ॐ ह्रीं स्वस्थित्यासनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥130॥

महाशान्ति मुद्रा पलौथी लगाये,
कियो कर्म को नाश ज्ञानी कहाये।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा,
यही मोक्ष नाजा नमः सिद्ध काजा॥

ॐ ह्रीं पर्यंकासनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥131॥

लहै आदि को संहनन पुरुष देही,
तथा हो परारंभ में भाव ते ही।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा,
यही मोक्ष नाजा नमः सिद्ध काजा॥

ॐ ह्रीं पुरुषवेदसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥132॥

खपायो प्रथम सात प्रकृति विमोहा,
गहो शुद्ध श्रेणी क्षयो कर्म लोहा।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा,
यही मोक्ष नाजा नमः सिद्ध काजा॥

ॐ ह्रीं क्षपकश्रेण्यारूढसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥133॥

समय एक में एक वासौ भनंता,
धरो आठ तापं यही भेद अंता।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा,
यही मोक्ष नाजा नमः सिद्ध काजा॥

ॐ ह्रीं एकसमयसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥134॥

किसी देश में वा किसी काल माँहीं,
गिने दो समय में तथा अंतराई।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा,
यही मोक्ष नाजा नमः सिद्ध काजा॥

ॐ ह्रीं द्विसमयसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥135॥

समय एक दो तीन धाराप्रवाही,
कियो कर्म क्षय अंतराय होय नाहीं।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा,
यही मोक्ष नाजा नमः सिद्ध काजा॥

ॐ ह्रीं त्रिसमयसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥136॥

हुवे हैं सु होंगे सु हो हैं अबारी,
त्रिकालं सदा मोक्ष पंथं विहारी।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा,
यही मोक्ष नाजा नमः सिद्ध काजा॥

ॐ ह्रीं त्रिकालसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥137॥

तिहूँ लोक के शुद्ध सम्यक्त्वधारी,
महाभार संजम धरैं हैं अबारी।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा,
यही मोक्ष नाजा नमः सिद्ध काजा॥

ॐ ह्रीं त्रिलोकसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥138॥

मरहठा

तिहुँ लोक निहारा, सब दुखकारा, पापरूप संसार।
ताको परिहारा सुलभ सुखारा, भये सिद्ध अविकार॥
हे जगत्रयनायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार।
मैं नमूँ त्रिकाला हो अघ टाला, तप हर शशि उनहार॥

ॐ ह्रीं सिद्धमङ्गलेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥139॥

तिहुँ कर्म-कालिमा, लगी जालिमा, करैं रूप दुखदाय।
तुम ताको नाशो, स्वयं प्रकाशो स्वातम रूप सुभाय॥
हे जगत्रयनायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार।
मैं नमूँ त्रिकाला हो अघ टाला, तप हर शशि उनहार॥

ॐ ह्रीं सिद्धमङ्गलस्वरूपेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥140॥

तिहुँ जग के प्राणी, सब अज्ञानी, फंसे मोह जंजाल।
हो तिहुँ जगत्राता, पूरण ज्ञाता, तुम ही इक खुशहाल ।।हे जगत्रय...।।

ॐ ह्रीं सिद्धमङ्गलज्ञानेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।141 ।।

यह मोह अंधेरी, छाई घनेरी, प्रबल पटल रहो छाय।
तुम ताहि उघारो, सकल निहारो, युगपत आनंददाय ।। हे जगत्रय...।।

ॐ ह्रीं सिद्धमङ्गलदर्शनेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।142 ।।

निजबंधन डोरी, छिन में तोरी, स्वयं शक्ति परकाश।
निरभय निरमोही, परम अछोही, अंतराय विधि नाश ।।
हे जगत्रयनायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार।
मैं नमूँ त्रिकाला हो अघ टाला, तप हर शशि उनहार ।।

ॐ ह्रीं सिद्धमङ्गलवीर्येभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।143 ।।

जाके प्रसादकर, सकल चराचर, निजसों भिन्न लखाय।
रुष-राग निवारा, सुख विस्तारा, आकुलता विनशाय ।। हे जगत्रय...।।

ॐ ह्रीं सिद्धमङ्गलसम्यक्त्वेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।144 ।।

अस्पर्श अमूरति, चिन्मय मूरति, अरस अलिंग अनूप।
मन अक्ष अलक्षं, ज्ञान प्रत्यक्षं, शुभ अवगाह स्वरूप ।। हे जगत्रय...।।

ॐ ह्रीं सिद्धमङ्गलावगाहनेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।145 ।।

अव्यक्त स्वरूपं, अमल अनूपं, अलख अगम असमान।
अवगाह उदर धर, वास परस्पर, भिन्न-भिन्न परनाम ।। हे जगत्रय...।।

ॐ ह्रीं सिद्धमङ्गलसूक्ष्मत्वेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।146 ।।

अनुभूति विलासी समरस रासी, हीनाधिक विधि नाश।
विधि गोत्र नाशकर, पूरण पदधर असंवाद परकाश ।। हे जगत्रय...।।

ॐ ह्रीं सिद्धमङ्गलागुरुलघुभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।147 ।।

पुद्गल कृत सारी, विविध प्रकारी, द्वैतभाव अधिकार।
सब भ्रान्ति निवारी, निज सुखकारी, पायो पद अविकार ।। हे जगत्रय...।।

ॐ ह्रीं सिद्धमङ्गलाव्याबाधेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।148 ।।

अवगाह प्रमाणी, ज्ञानारामी, दर्शन–वीर्य अपार।
सूक्ष्म अवकाशं, अज अविनाशं, अगुरुलघु सुखकार॥ हे जगत्रय...॥

ॐ ह्रीं सिद्धमङ्गलाष्टगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥149॥

शुद्धातम सारं, अष्ट प्रकारं, शिव स्वरूप अनिवार।
निज गुणपरधानं, सम्यकज्ञानं, आदि अन्त अविकार॥ हे जगत्रय...॥

ॐ ह्रीं सिद्धमङ्गलाष्टस्वरूपेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥150॥

मंगल अरहंतं, अष्टम भंतं, सिद्ध अष्टगुण भाष।
ये ही विलसावैं, अन्य न पावैं, असाधार्ण परकाश॥
हे जगत्रयनायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार।
मैं नमूँ त्रिकाला हो अघ टाला, तप हर शशि उनहार॥

ॐ ह्रीं सिद्धमङ्गलाष्टप्रकाशकेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥151॥

निर आकुलताई, सुख अधिकाई, परम शुद्ध परिणाम।
संसार निवारण, बंध विडारन, यही धर्म सुखधाम॥ हे जगत्रय...॥

ॐ ह्रीं सिद्धमङ्गलधर्मेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥152॥

चूलिका

तीन काल तिहुँ लोक में, तुम गुण और न माहिं लखाने।
लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥153॥

लोकत्रय शिर छत्रमणि, लोकत्रय वर पूज्य प्रधाने।
लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥154॥

अमल अनूपम तेजघन, निरावरण निजरूप प्रमाणे।
लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥155॥

लोकालोक प्रकाश कर, लोकातीत प्रत्यक्ष प्रमाणे।
लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥156॥

सकल दर्शनावरण बिन, पूरन-दरशन जोति उगाने।
लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमदर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥157॥

अतुल अतीन्द्रिय वीर्यकर, भोगै नित शिवनारि अघाने।
लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमवीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥158॥

त्रोटक

बिन कारण ही सबके मितु हो, सर्वोत्तम लोक विषैं हितु हो।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत है॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥159॥

तुम रूप अनूपम ध्यान किये, निज रूप दिखावत स्वच्छ हिये।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत है॥

ॐ ह्रीं सिद्धस्वरूपशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥160॥

निरभेद अछेद विकासित हैं, सब लोक अलोक विभासित हैं।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत है॥

ॐ ह्रीं सिद्धदर्शनशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥161॥

निरबाध अगाध प्रकाशमई, निरद्वंद अबंध अभय अजई।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत है॥

ॐ ह्रीं सिद्धज्ञानशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥162॥

हितकारण तारण-तरण कहै, अप्रमाद-प्रमाद प्रकाशन है।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत है॥

ॐ ह्रीं सिद्धवीर्यशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥163॥

अविरुद्ध विशुद्ध प्रसिद्ध महा, निज आतम तत्त्व प्रबोध लहा।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत है॥

ॐ ह्रीं सिद्धसम्यक्त्वशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥164॥

जिनको पूर्वापर अंत नहीं, नित धार-प्रवाह बहै अति ही।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत है॥

ॐ ह्रीं सिद्धानन्तशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥165॥

कबहूँ नहीं अंत समावत है, सु अनंत-अनंत कहावत है।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत है॥

ॐ ह्रीं सिद्धानन्तानन्तशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥166॥

तिहुँ काल सु सिद्ध महा सुखदा, निजरूप विषैं थिर भाव सदा।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत है॥

ॐ ह्रीं सिद्धत्रिकालशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥167॥

तिहुँ लोक शिरोमणि पूज्य महा, तिहुँ लोक प्रकाशक तेज कहा।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत है॥

ॐ ह्रीं सिद्धत्रिलोकशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥168॥

गिनती परमाण जु लोक धरे, परदेश समूह प्रकाश करै।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत है॥

ॐ ह्रीं सिद्धसंख्यातलोकशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥169॥

पूर्वापर एकहि रूप लसे, नित लोक सिंहासन वास बसे।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत है॥

ॐ ह्रीं सिद्धध्रौव्यगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥170॥

जगवास पर्याय विनाश कियो, अब निश्चय रूप विशुद्ध भयो।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत है॥

ॐ ह्रीं सिद्धोत्पादगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥171॥

पर द्रव्य थकी रुष राग नहीं, निज भाव बिना कहुँ लाग नहीं।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत है॥

ॐ ह्रीं सिद्धसाम्यगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥172॥

बिन कर्म-कलंक विराजत हैं, अति स्वच्छ महागुण राजत हैं।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत है॥

ॐ ह्रीं सिद्धस्वच्छगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥173॥

मन इन्द्रिय आदि न व्याधि तहां, रुष-राग कलेश प्रवेश न ह्वां।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत है॥

ॐ ह्रीं सिद्धस्थितगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥174॥

निजरूप विषैं नित मगन रहैं, पर योग-वियोग न दाह लहैं।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत है॥

ॐ ह्रीं सिद्धसमाधिगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥175॥

श्रुतज्ञान तथा मतिज्ञान दऊ, परकाशत हैं यह व्यक्त सऊ।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत है॥

ॐ ह्रीं सिद्धव्यक्तगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥176॥

परतक्ष अतीन्द्रिय भाव महा, मन इन्द्रिय बोध न, गुह्य कहा।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत है॥

ॐ ह्रीं सिद्धाव्यक्तगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥177॥

मालिनी

निजगुणवर स्वामी शुद्धसंबोधनामी, परगुण नहिं लेशा एक ही भाव शेषा।
मन-वच-तन लाई पूजहों भक्ति भाई, भवि भव-भय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं॥

ॐ ह्रीं सिद्धगुणगणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥178॥

सब विधि-मल जारा बंध-संसार टारा, जगजिय हितकारी उच्चता पाय सारी।
मन-वच-तन लाई पूजहों भक्ति भाई, भवि भव-भय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं॥

ॐ ह्रीं सिद्धपरमात्मस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥179॥

पर-परिणति-खण्डं भेदबाधा-विहण्डं, शिवसदन निवासी नित्य स्वानन्दरासी।
मन-वच-तन लाई पूजहों भक्ति भाई, भवि भव-भय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं॥

ॐ ह्रीं सिद्धाखण्डस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥180॥

चित सुख विलसानं आकुलं भाव हानं, निज अनुभव सारं द्वैत संकल्प टारं।
मन-वच-तन लाई पूजहों भक्ति भाई, भवि भव-भय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं॥

ॐ ह्रीं सिद्धचिदानन्दस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥181॥

पर-करण-निवारं भाव संभाव धारं, निज अनुपम ज्ञानं सुक्खरूपं निधानं।
मन-वच-तन लाई पूजहों भक्ति भाई, भवि भव-भय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं॥

ॐ ह्रीं सिद्धसहजानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥182॥

विधिवश सब प्रानी हीन–आधिक्य ठानी, तिस करन निर्मूला पाप रूपाध रूला।
मन–वच–तन लाई पूजहों भक्ति भाई, भवि भव–भय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं॥
ॐ ह्रीं सिद्धाच्छेद्यरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥183॥
जब लग परजाया भेद नाना धराया, इक शिवपद माँहीं भेद आभास नाहीं।
मन–वच–तन लाई पूजहों भक्ति भाई, भवि भव–भय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं॥
ॐ ह्रीं सिद्धाभेदगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥184॥
अनुपम गुणधारी लोक समभाव टारी, सुर–नर–मुनि ध्यावैं सो नहीं पार पावैं।
मन–वच–तन लाई पूजहों भक्ति भाई, भवि भव–भय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं॥
ॐ ह्रीं सिद्धानुपमगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥185॥
जिस अनुभव सरसै धार आनंद बरसै, अनुपम रस सोई स्वाद जासो न कोई।
मन–वच–तन लाई पूजहों भक्ति भाई, भवि भव–भय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं॥
ॐ ह्रीं सिद्धामृततत्त्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥186॥
सब श्रुत विस्तारा जास माँहीं उजारा, यह निजपद जानो आत्म संभाव मानो।
मन–वच–तन लाई पूजहों भक्ति भाई, भवि भव–भय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं॥
ॐ ह्रीं सिद्धश्रुतप्राप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥187॥

दोधक

जीव–अजीव सबै प्रतिभासी, केवल जोति लहो तम नाशी।
सिद्ध–समूह नमूँ शिर नाई, पाप कलाप सबै खिर जाई॥
ॐ ह्रीं सिद्धकेवलप्राप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥188॥
चेतनरूप प्रदेश विराजै, आकृतिरूप अलिंग सु छाजै।
सिद्ध–समूह नमूँ शिर नाई, पाप कलाप सबै खिर जाई॥
ॐ ह्रीं सिद्धसाकारनिराकाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥189॥
नाहिं गहै पर आश्रित जानो, सो अवलंब बिना पद मानो।
सिद्ध–समूह नमूँ शिर नाई, पाप कलाप सबै खिर जाई॥
ॐ ह्रीं सिद्धनिरालम्बाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥190॥
राग–विषाद बसै नहिं जामें, जोग वियोग न भोग न तामें।
सिद्ध–समूह नमूँ शिर नाई, पाप कलाप सबै खिर जाई॥
ॐ ह्रीं सिद्धनिष्कलङ्काय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥191॥

ज्ञान प्रभाव प्रकाश भयो है, कर्म-समूह विनाश भयो है।
सिद्ध-समूह नमूँ शिर नाई, पाप कलाप सबै खिर जाई॥

ॐ ह्रीं सिद्धतेजःसम्पन्नाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥192॥

आतमलाभ निजाश्रित पाया, द्वैत विभाव समूल नसाया।
सिद्ध-समूह नमूँ शिर नाई, पाप कलाप सबै खिर जाई॥

ॐ ह्रीं सिद्धात्मसम्पन्नाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥193॥

मोतियादाम

चहूं गति काय-स्वरूप प्रत्यक्ष, शिवालय वास अनूप अलक्ष।
भजो मन आनंद सों शिवनाथ, धरों चरणाम्बुज को निज माथ॥

ॐ ह्रीं सिद्धगर्भवासाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥194॥

निजानंद श्रीयुत ज्ञान अथाह, सुशोभित तृप्त भयो सुख पाह।
भजो मन आनंद सों शिवनाथ, धरों चरणाम्बुज को निज माथ॥

ॐ ह्रीं सिद्धलक्ष्मीसन्तर्पकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥195॥

सुभाव निजातम अंतरलीन, विभाव परातम आपद कीन।
भजो मन आनंद सों शिवनाथ, धरों चरणाम्बुज को निज माथ॥

ॐ ह्रीं सिद्धान्तराकाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥196॥

जहाँ लग द्वेष प्रवेश न होय, तहां लग सार रसायन होय।
भजो मन आनंद सों शिवनाथ, धरों चरणाम्बुज को निज माथ॥

ॐ ह्रीं सिद्धसाररसाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥197॥

जिसो निरलेप हुए विषतुंब्य, तिसो जग अग्र निराश्रय लुब्य।
भजो मन आनंद सों शिवनाथ, धरों चरणाम्बुज को निज माथ॥

ॐ ह्रीं सिद्धशिखरमण्डनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥198॥

तिहूं जग शीस विराजत नित्य, शिरोमणि सर्व समाज अनित्य।
भजो मन आनंद सों शिवनाथ, धरों चरणाम्बुज को निज माथ॥

ॐ ह्रीं सिद्धत्रिलोकाग्रनिवासिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥199॥

अकाय अरूप अलक्ष अवेद, निजातम लीन सदा अविछेद।
भजो मन आनंद सों शिवनाथ, धरों चरणाम्बुज को निज माथ॥

ॐ ह्रीं सिद्धस्वरूपगुप्तेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥200॥

अडिल्ल

ऋषभ आदि चितधारि प्रथम दीक्षा धरी,
केवलज्ञान उपाय धर्म विधि उच्चरी।
निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार हैं,
परमारथ आचार्य-सिद्ध सुखकार हैं॥

ॐ ह्रीं सूरिभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥201॥

निज ही निज उर धार हेत सामर्थ्य है,
आत्मशक्ति कर व्यक्त करण विधि व्यर्थ है।
निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार हैं,
परमारथ आचार्य-सिद्ध सुखकार हैं॥

ॐ ह्रीं सूरिगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥202॥

साधन साधक साध्य भाव सब विध गयो।
भेद अगोचर रूप महा-सुख सम्भवो॥ निजस्वरूप....॥

ॐ ह्रीं सूरिस्वरूपगुप्तेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥203॥

तत्त्वप्रतीत निजातमरूप अनुभव कला।
पायो सत्यानन्द कुमारग दलमला ॥ निजस्वरूप....॥

ॐ ह्रीं सूरिसम्यक्त्वगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥204॥

वस्तु अनन्त धर्म प्रकाशक ज्ञान है।
एकपक्ष हठ सहित निपट असुहान है ॥ निजस्वरूप....॥

ॐ ह्रीं सूरिज्ञानगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥205॥

वस्तु धर्म सामान्य ताहि अवलोकना।
शुद्ध निजातमधर्म ताहि नहीं लोपना ॥ निजस्वरूप....॥

ॐ ह्रीं सूरिदर्शनगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥206॥

अतुल अकम्प अखेद शुद्ध परिणति धरैं।
जगत रूप व्यापार न इक छिन आदरैं ॥ निजस्वरूप....॥

ॐ ह्रीं सूरिवीर्यगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥207॥

षट्त्रिंशत् गुण सूरि मोक्षफल पाइयो।
तातैं हम इन गुण कर ही जस गाइयो ॥ निजस्वरूप....॥

ॐ ह्रीं सूरिषट्त्रिंशद्गुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥208॥

पञ्चाचार आचार्य साध शिवपद लियो।
वास्तव में ये गुण निजमें परगट कियो॥ निजस्वरूप....॥

ॐ ह्रीं सूरिपञ्चाचारगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥209॥

गुण समुदाय स्वरूप द्रव्य आतम महा,
परसों भिन्न अभेद निजातम पद लहा।
निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार हैं,
परमारथ आचार्य-सिद्ध सुखकार हैं॥

ॐ ह्रीं सूरिद्रव्यगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥210॥

वीतराग परणति रच ही हितकार जू।
परम शुद्ध स्व सिद्ध भयो अनिवार जू ॥ निजस्वरूप....॥

ॐ ह्रीं सूरिपर्यायगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥211॥

चञ्चला

आप सुक्खरूप हो सु और सौख्यकार होत,
ज्यूँ घटादि को प्रकाशकार है सुदीप जोत।
सूरि धर्म को प्रकाश सिद्ध धर्म-रूप जान,
मैं नमूँ त्रिकाल एक ही अभेद पक्ष मान॥

ॐ ह्रीं सूरिमङ्गलेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥212॥

संस अंश भान वस्तु भाव को प्रकाशमान।
ज्ञान इन्द्रिय अतिइन्द्रिया कहै उभय प्रमाण ॥ सूरि धर्म....॥

ॐ ह्रीं सूरिज्ञानमङ्गलेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥213॥

लोक उत्तमा सु वसु कर्म को प्रसङ्ग टार।
शुद्ध बुद्ध ऋद्धि पाय लोक वेदना निवार॥ सूरि धर्म....॥

ॐ ह्रीं सूरिलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥214॥

लोकभीत सो अतीत आदि अन्त एक रूप।
लोक में प्रसिद्ध सर्व भाव को अनूप भूप॥ सूरि धर्म....॥

ॐ ह्रीं सूरिज्ञानलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥215॥

बीच में न अन्तराय, आप ही सुखाय धाय,
या अबाध धर्म के प्रकाश में करै सहाय॥ सूरि धर्म....॥

ॐ ह्रीं सूरिदर्शनलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥216॥

मोहभार को निवार, शुद्ध चेतना सुधार,
येहि वीर्यता अपार लोक में प्रशंसकार।
सूरि धर्म को प्रकाश सिद्ध धर्म-रूप जान,
मैं नमूँ त्रिकाल एकही अभेद पक्ष मान॥

ॐ ह्रीं सूरिवीर्यलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥217॥

धर्म केवली महान, मोह अन्ध तेज भान।
सप्त तत्त्व को बखानि, मोक्षमार्ग को निधान॥ सूरि धर्म....॥

ॐ ह्रीं सूरिकेवलधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥218॥

शील आदि पूर भेद कर्म के कलाप छेद।
आत्म-शक्ति को प्रकाश शुद्ध चेतना विलास॥ सूरि धर्म....॥

ॐ ह्रीं सूरितप्ततपोभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥219॥

लोक चाह की न दाह, द्वेष को प्रवेश नाह।
शुद्ध चेतना प्रवाह, वृद्धता धरै अथाह॥ सूरि धर्म....॥

ॐ ह्रीं सूरिपरमतपोभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥220॥

मोह को न जोर जाय, घोर आपदा नसाय।
घोर तें तपो सु लोक, शीश जाय मुक्ति पाय॥ सूरि धर्म....॥

ॐ ह्रीं सूरितपोघोरगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥221॥

कामिनीमोहन

वृद्ध परवृद्ध गुण गहन नित हो जहाँ।
शाश्वतं पूर्णता सातिशय गुण तहाँ॥
सूरि सिद्धान्त के पारगामी भये,

मैं नमूँ जोर कर मोक्षधामी भये॥

ॐ ह्रीं सूरिघोरगुणपराक्रमेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥222॥

एक सम-भाव सम और नहिं ऋद्धि है।
सर्व ही ऋद्धि जाके भये सिद्ध है॥ सूरि सिद्धान्त ....॥

ॐ ह्रीं सूरिऋद्धिऋषिभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥223॥

जोग के रोक से कर्म का रोक हो।
गुप्ति साधन किये साध्य शिवलोक हो॥
सूरि सिद्धान्त के पारगामी भये,
मैं नमूँ जोर कर मोक्षधामी भये॥

ॐ ह्रीं सूरिसुयोगेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥224॥

ध्यान-बल कर्म के नाश को हेतु है,
कर्म को नाश शिववास ही देतु है॥ सूरि सिद्धान्त ....॥

ॐ ह्रीं सूरिध्यानेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥225॥

पञ्चधाचार में आत्म अधिकार है।
बाह्य आधार-आधेय सुविकार है॥ सूरि सिद्धान्त ....॥

ॐ ह्रीं सूरिधातृभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥226॥

सूर्य सम आप परतेज करतार है।
सूरि ही मोक्षनिधि पात्र सुखकार है॥ सूरि सिद्धान्त ....॥

ॐ ह्रीं सूरिपात्रेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥227॥

बाह्य छत्तीस अन्तर अभेदात्मा।
आप थिर रूप हैं सूर परमात्मा॥ सूरि सिद्धान्त ....॥

ॐ ह्रीं सूरिगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥228॥

ज्ञान उपयोग में स्वस्थिता शुद्धता।
पूर्ण चारित्रता पूर्ण ही बुद्धता॥ सूरि सिद्धान्त ....॥

ॐ ह्रीं सूरिधर्मगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥229॥

शरण, दुख हरण, पर आप ही शर्ण हैं।
आपने कार्य में आपही कर्ण हैं॥ सूरि सिद्धान्त ....॥

ॐ ह्रीं सूरिशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥230॥

दोहा

ज्यों कञ्चन बिन कालिमा, उज्ज्वल रूप सुहाय।
त्यों ही कर्म-कलङ्क बिन, निज स्वरूप दरसाय॥

ॐ ह्रीं सूरिस्वरूपशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 231॥

भेदाभेद सु नय थकी, एक ही धर्म विचार।
पायो सूरि सुबोध करि, भवदधि कर उद्धार॥

ॐ ह्रीं सूरिधर्मस्वरूपशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 232॥

अन्य समस्त विकल्प तजि, केवल निजपद लीन।
पूरण-ज्ञान स्वरूप यह, पायो सूरि-सुधीन॥

ॐ ह्रीं सूरिज्ञानस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ 233॥

सुखाभास इन्द्रिय-जनित, त्यागी सूरि महन्त।
पूरण सुख स्वाधीन निज, साध्य भये सुखवन्त॥

ॐ ह्रीं सूरिसुखस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥234॥

अनेकान्त तत्त्वार्थ के, ज्ञाता सूरि महान।
निरावर्ण निजरूप लखि, पायो पद निरवाण॥

ॐ ह्रीं सूरिदर्शनस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥235॥

मोहादिक रिपु नाश को, सूरि महा सामर्थ।
शिव भामिनि भरतार नित, रमै साध निज अर्थ॥

ॐ ह्रीं सूरिवीर्यस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥236॥

पद्धरि

जिन निज-आतम निष्पाप कीन, ते सन्त करैं पर पाप छीन।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनन्द पूर॥

ॐ ह्रीं सूरिमङ्गलशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥237॥

रत्नत्रय जीव स्वभाव भाय, भवि पतित उधारण हो सहाय।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनन्द पूर॥

ॐ ह्रीं सूरिधर्मशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥238॥

तपकर ज्यों कञ्चन अग्नि जोग, है शुद्ध निजातम पद मनोग्र।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनन्द पूर॥

ॐ ह्रीं सूरितपःशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥239॥

एकाग्र-चित्त चिन्ता निरोध, पावैं अबाध शिव आत्मबोध।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनन्द पूर॥

ॐ ह्रीं सूरिध्यानशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥240॥

केवलज्ञानादि विभूति पाय, है शुद्ध निरञ्जन पद सुखाय। शिवमग
प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनन्द पूर॥

ॐ ह्रीं सूरिसिद्धशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥241॥

तिहुँ लोकनाथ तिहुँ लोक माँहिं, या सम दूजो सुखदाय नाहिं।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनन्द पूर॥

ॐ ह्रीं सूरित्रिलोकशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥242॥

आगत अतीत अरु वर्तमान, तिहुँ काल भव्य पावैं निर्वाण।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनन्द पूर॥

ॐ ह्रीं सूरित्रिकालशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥243॥

मधि अधो ऊर्ध्व तिहुँ जगत माँहिं, सब जीवन सुखकर और नाहिं।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनन्द पूर॥

ॐ ह्रीं सूरित्रिजगन्मङ्गलशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥244॥

तिहुँ लोकमाहिं सुखकार आप, सत्यारथ मङ्गल हरण पाप।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनन्द पूर॥

ॐ ह्रीं सूरित्रिलोकमङ्गलशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥245॥

उत्तम मङ्गल परमार्थ रूप, जग दुख नासे शिवसुख-स्वरूप।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनन्द पूर॥

ॐ ह्रीं सूरित्रिजगन्मङ्गलोत्तमशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥246॥

शरणागत दुखनाशन महान, तिहुँ जग हितकारण सुखनिधान।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनन्द पूर॥

ॐ ह्रीं सूरित्रिजगन्मङ्गलशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥247॥

तिहुँ लोकनाथ तिहुँ लोक पूज, शरणागत प्रतिपालन अदूज।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनन्द पूर॥

ॐ ह्रीं सूरित्रिलोकमण्डलशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥248॥

अव्यय अपूर्व सामर्थ्य युक्त, संसारातीत विमोह मुक्त।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनन्द पूर॥

ॐ ह्रीं सूरिऋद्धिमङ्गलशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥249॥

त्रोटक

जिन रूप अनूप लखें सुख हो, जग में यह मन्त्र महान कहो।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूँ शिववास करैं सुखदा॥

ॐ ह्रीं सूरिमन्त्रस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥250॥

जिम नागदेव वश मन्त्र विधी, भव वास हरण तुम नाम निधी।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूँ शिववास करैं सुखदा॥

ॐ ह्रीं सूरिमन्त्रगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥251॥

जगमोहित जीव न पावत है, यह मन्त्र सु धर्म कहावत है।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूँ शिववास करैं सुखदा॥

ॐ ह्रीं सूरिधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥252॥

चिदरूप चिदातम भाव धरें, गुण सार यही अविरुद्ध वरैं।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूँ शिववास करैं सुखदा॥

ॐ ह्रीं सूरिचैतन्यगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥253॥

अविकार चिदातम आनन्द हो, परमातम हो परमानन्द हो।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूँ शिववास करैं सुखदा॥

ॐ ह्रीं सूरिचिदानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥254॥

निज ज्ञान प्रमाण प्रकाश करैं, सुखरूप निराकुलता सु धरैं।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूँ शिववास करैं सुखदा॥

ॐ ह्रीं सूरिज्ञानानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥255॥

धरि योग महा शमभाव गहैं, सुखराशि महा शिववास लहैं।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूँ शिववास करैं सुखदा॥

ॐ ह्रीं सूरिशमभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥256॥

सम भाव महा गुण धारत हैं, निज आनन्द भाव निहारत हैं।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूँ शिववास करैं सुखदा॥

ॐ ह्रीं सूरितपोगुणानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥257॥

शिवसाधन को विधिनाश कहा, विधिनाशन को तप कर्ण महा।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूँ शिववास करैं सुखदा॥

ॐ ह्रीं सूरितपोगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥258॥

निज आत्म विषैं नित मगन रहैं, जग के सुख मूल न भूल चहैं।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूँ शिववास करैं सुखदा॥

ॐ ह्रीं सूरिहंसाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥259॥

वनवास उदास सदा जग तैं, पर आस न खास विलास रतैं।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूँ शिववास करैं सुखदा॥

ॐ ह्रीं सूरिहंसगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥260॥

निज नाम महागुण मन्त्र धरैं, छिन मात्र जपे भवि आश वरैं।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूँ शिववास करैं सुखदा॥

ॐ ह्रीं सूरिमन्त्रगुणानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥261॥

परमोत्तम सिद्ध पर्याय कही, अति शुद्ध प्रसिद्ध सुखात्म मही।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूँ शिववास करैं सुखदा॥

ॐ ह्रीं सूरिसिद्धानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥262॥

माला

शशि सन्ताप कलाप निवारण ज्ञान कला सरसै,
मिथ्यातम हरि भवि आनन्द करि अनुभव भाव दरसै।
सूरि निज भेद कियो परसैं,
भये मुक्त मैं नमूँ शीश नित जोर युगल करसैं॥

ॐ ह्रीं सूरि-अमृतचन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥263॥

पूरणचन्द्र सरूप कलाधर ज्ञान-सुधा बरसै।
भवि चकोर चित चाहत नित मन चरण जोति परसै॥ सूरि ....॥

ॐ ह्रीं सूरिसुधाचन्द्रस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥264॥

जगजिय ताप निवारण कारण, विलसै अन्तर सै।
देव सुधासम गुण निवाहकर, सकल चराचर सै॥ सूरि ....॥

ॐ ह्रीं सूरिसुधागुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥265॥

जा धुनि सुनि संशय विनसै जिम ताप मेघ बरसै।
मनहुं कमल मकरन्द वृन्द अलि पाय सुधा सरसै॥
सूरि निज भेद कियो परसैं,
भये मुक्त मैं नमूँ शीश नित जोर युगल करसैं॥

ॐ ह्रीं सूरिसुधाध्वनये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥266॥

अजर अमर सुखदाय भाय मन ज्यों मयूर हरसै,
गाजत घन बाजत ध्वनि सुनि मनु भाजत भय उरसैं॥ सूरि ....॥

ॐ ह्रीं सूरि-अमृतध्वनिसुरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥267॥

चकोर

जो अपने गुण वा पर्याय, वरै निज धर्म न होत विनास,
द्रव्य कहावत है सु अनन्त, स्वभाव धरे निज आत्म विलास।
सूरि कहाय सु कर्म खपाय, निजातम पाय गये शिवधाम,
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुख काम नमूँ वसु जाम॥

ॐ ह्रीं सूरिद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥268॥

ज्यों शशि जोति रहै सियरा नित, ज्यों रवि जोति रहै नित ताप,
त्यों निज ज्ञानकला परिपूरण, राजत हो निज करण सु आप।
सूरि कहाय सु कर्म खपाय, निजातम पाय गये शिवधाम,
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुख काम नमूँ वसु जाम॥

ॐ ह्रीं सूरिगुणद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥269॥

हो अविनाश अनूपमरूप सु, ज्ञानमई नित केलि करान,
पै न तजै मरजाद रहै, जिम सिन्धु कलोल सदा परिमाण।
सूरि कहाय सु कर्म खपाय, निजातम पाय गये शिवधाम,
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुख काम नमूँ वसु जाम॥

ॐ ह्रीं सूरिपर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥270॥

जे कछु द्रव्य तनी गुण है, सु समस्त मिलै गुण आतम माँहिं,
ताकरि द्रव्य सरूप कहावत, है अविनाश नमैं हम ताहिं।
सूरि कहाय सु कर्म खपाय, निजातम पाय गये शिवधाम,
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुख काम नमूँ वसु जाम॥

ॐ ह्रीं सूरिद्रव्यस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥271॥

जा गुण में गुण और न हो, निज द्रव्य रहै नित और न ठौर,
सो गुण रूप सदा निवसैं, हम पूजत हैं करके कर जोर।
सूरि कहाय सु कर्म खपाय, निजातम पाय गये शिवधाम,
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुख काम नमूँ वसु जाम॥

ॐ ह्रीं सूरिगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥272॥

जो परिणाम धरैं तिनसों, तिनमें करहै वरतै तिस रूप,
सो पर्याय उपाय बिना नित, आप विराजत है सु अनूप।
सूरि कहाय सु कर्म खपाय, निजातम पाय गये शिवधाम,
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुख काम नमूँ वसु जाम॥

ॐ ह्रीं सूरिपर्यायस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥273॥

हो नित ही परिणाम समय प्रति, सो उत्पाद कहो भगवान,
सो तुम भाव प्रकाश कियो, निज यह गुण का उत्पाद महान।
सूरि कहाय सु कर्म खपाय, निजातम पाय गये शिवधाम,
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुख काम नमूँ वसु जाम॥

ॐ ह्रीं सूरिगुणोत्पादाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥274॥

ज्यों मृतिका निज रूप न छांड़त, है घट माँहिं अनेक प्रकारा,
सो तुम जीव स्वभाव धरो नित, मुक्त भये जगवास निवारा।
सूरि कहाय सु कर्म खपाय, निजातम पाय गये शिवधाम,
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुख काम नमूँ वसु जाम॥

ॐ ह्रीं सूरिध्रुवगुणोत्पादाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।275॥

जे जग में सब भाव विभाव, पराश्रित रूप अनेक प्रकार,
ते सब त्याग भये शिवरूप, अबन्ध अमन्द महा सुखकार।
सूरि कहाय सु कर्म खपाय, निजातम पाय गये शिवधाम,
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुख काम नमूँ वसु जाम॥

ॐ ह्रीं सूरिव्ययगुणोत्पादाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।276॥

जे जग में षट्-द्रव्य कहे, तिनमें इक जीव सुज्ञान स्वरूप,
और सभी बिन ज्ञान कहे, तुम राजत हो नित ज्ञान अनूप।
सूरि कहाय सु कर्म खपाय, निजातम पाय गये शिवधाम,
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुख काम नमूँ वसु जाम॥

ॐ ह्रीं सूरिजीवतत्त्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।277॥

ज्ञान सुभाव धरो नित ही, नहिं छांड़त हो कबहूँ निज वान,
ये ही विशेष भयो सबसों, नहीं औरन में गुण ये परधान।
सूरि कहाय सु कर्म खपाय, निजातम पाय गये शिवधाम,
सु आतमराम सदा अभिराम भये सुख काम नमूँ वसु जाम॥

ॐ ह्रीं सूरिजीवतत्त्वगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।278॥

हो कर्तादि अनेक सुभाव, निजातम में परमें अनिवार,
सो पर को न लगार रहो, निज ही निजकर्म रहो सुखकार।
सूरि कहाय सु कर्म खपाय, निजातम पाय गये शिवधाम,
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुख काम नमूँ वसु जाम॥

ॐ ह्रीं सूरिनिजस्वभावधारकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।279॥

द्रव्य तथापि विभाव दउ विधि, कर्म प्रवाह बहै बिन आदि,
ते सब रोक भये थिररूप, निजातम शुद्ध सुभाव प्रसाद।
सूरि कहाय सु कर्म खपाय, निजातम पाय गये शिवधाम,
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुख काम नमूँ वसु जाम॥

ॐ ह्रीं सूरि-आस्रवविनाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥280॥

मोदक

बन्ध दऊ विधि के दुख कारण, नाश कियो भवपार उतारण।
सूरि भये निज ज्ञान कलाकर, सिद्ध भये प्रणमूँ मैं मनधर॥

ॐ ह्रीं सूरिबन्धतत्त्वविनाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥281॥

संवर तत्त्व महासुख देतहिं, आस्रव रोकन को यह हेतहिं।
सूरि भये निज ज्ञान कलाकर, सिद्ध भये प्रणमूँ मैं मनधर॥

ॐ ह्रीं सूरिसंवरतत्त्वसहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥282॥

ज्यूँ मणि दीप अडोल अनूपहिं, संवर तत्त्व निराकुल रूपहिं।
सूरि भये निज ज्ञान कलाकर, सिद्ध भये प्रणमूँ मैं मनधर॥

ॐ ह्रीं सूरिसंवरतत्त्वस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥283॥

संवर के गुण ते मुनि पावत, जो मुनि शुद्ध सुभाव सु ध्यावत।
सूरि भये निज ज्ञान कलाकर, सिद्ध भये प्रणमूँ मैं मनधर॥

ॐ ह्रीं सूरिसंवरगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥284॥

संवर धर्मतनी शिव पावहिं, संवर धरम तहां दरशावहिं।
सूरि भये निज ज्ञान कलाकर, सिद्ध भये प्रणमूँ मैं मनधर॥

ॐ ह्रीं सूरिसंवरधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥285॥

दोहा

एक देश वा सर्व विधि, दोनों मुक्ति स्वरूप।
नमूँ निर्जरा तत्त्व सो, पायो सिद्ध अनूप॥

ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरातत्त्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥286॥

शुद्ध सुभाव जहाँ तहाँ, कहो कर्म को नाश।
एक निर्जरा तत्त्व का, रूप कियो परकाश॥

ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरातत्त्वस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥287॥

कोटि जन्म के विघन सब, सूखे तृण सम जान।
दहे निर्जरा अग्नि सों, यह गुण है परधान॥

ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरागुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥288॥

निज बल कर्म खपाइये, कहो निर्जरा धर्म।
धर्मी सोई आत्मा, एक हि रूप सुपर्म॥

ॐ ह्रीं सूरिनिर्जराधर्मस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥289॥

समय-समय गुणश्रेणि का, खिरै कर्म, बल ध्यान।
ये सम्बन्ध निवार कर, करै मुक्ति सुख पान॥

ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरानुबन्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥290॥

अतुल शक्ति थिर भाव की, सो प्रगटी तुम माँहिं।
यही निर्जरा रूप है, नमूँ भक्ति करि ताहिं॥

ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरास्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥291॥

सर्व कर्म के नाश बिन, लहै न शिव-सुखरास।
निश्चय तुम ही निर्जरा, कियो प्रतीत प्रकाश॥

ॐ ह्रीं सूरिनिर्जराप्रतीताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥292॥

सकल कर्ममल नाशतें, शुद्ध निरञ्जन रूप।
ज्यों कञ्चन बिन कालिमा, राजै मोक्ष अनूप॥

ॐ ह्रीं सूरिमोक्षाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥293॥

द्रव्य-भाव दोनों सु विधि, करैं जगत में वास।
द्वैविध बन्ध उखारिकैं, भये मुक्त सुखरास॥

ॐ ह्रीं सूरिबन्धमोक्षाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥294॥

पर विकल्प सुख-दुख नहीं, अनुभव निज आनन्द।
जन्म-मरण विधि नाश कर, राजत शिवसुख कन्द॥

ॐ ह्रीं सूरिमोक्षस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥295॥

जहाँ न दुख को लेश है, उदय कर्म अनुसार।
सो शिवपद पायो महा, नमूँ भक्ति उर धार॥

ॐ ह्रीं सूरिमोक्षगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥296॥

जो शिव सुगुण प्रसिद्ध हैं, तिन सों नित्य प्रबन्ध।
जे जगवास विलास दुख, तिनकूं नमूँ अबन्ध॥

ॐ ह्रीं सूरिमोक्षानुबन्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥297॥

जैसी निज तन आकृती, तज कीनो शिववास।
ते तैसें नित अचल हैं, ज्ञानानन्द प्रकाश॥

ॐ ह्रीं सूरिमोक्षानुप्रकाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥298॥

क्षयोपशम परिणाम कर, सधै न निज का रूप।
वा निजपद में लीनता, ये ही गुप्त-स्वरूप॥

ॐ ह्रीं सूरिस्वरूपगुप्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥299॥

इन्द्रियजनित न दुख जहाँ, सदा निजानन्दरूप।
निर-आकुल स्वाधीनता, वरतै शुद्ध स्वरूप॥

ॐ ह्रीं सूरिपरमात्म-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥300॥

रोला

सम्पूरण श्रुत-सार निजातम बोध लहानो,
निजअनुभव शिवमूल मानू उपदेश करानो।
शिष्यन के अज्ञान हरै ज्यूँ रवि अँधियारा,
पाठक गुण सम्भवै सिद्ध प्रति नमन हमारा॥

ॐ ह्रीं पाठकेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥301॥

मुक्ति मूल है आत्मज्ञान सोई श्रुतज्ञानी,
तत्त्व-ज्ञान सों लहै निजातम पद सुखदानी।
शिष्यन के अज्ञान हरै ज्यूँ रवि अँधियारा,
पाठक गुण सम्भवै सिद्ध प्रति नमन हमारा॥

ॐ ह्रीं पाठकमोक्षमण्डनेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥302॥

भवसागर तें भव्य जीव तारण अनिवारा,
तुममें यह गुण अधिक आप पायो तिस पारा।
शिष्यन के अज्ञान हरै ज्यूँ रवि अँधियारा,

पाठक गुण सम्भवै सिद्ध प्रति नमन हमारा॥

ॐ ह्रीं पाठकगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥303॥

दर्शन-ज्ञान स्वभाव धरो तद्रूप अनूपी,
हीनाधिक बिन अचल विराजत शुद्ध सरूपी।
शिष्यन के अज्ञान हरै ज्यूँ रवि अँधियारा,
पाठक गुण सम्भवै सिद्ध प्रति नमन हमारा॥

ॐ ह्रीं पाठकगुणस्वरूपेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥304॥

निज गुण वा परयाय अखण्डित नित्य धरै है,
तिहूँ काल प्रति अन्य भाव नहीं ग्रहण करै है।
शिष्यन के अज्ञान हरै ज्यूँ रवि अँधियारा,
पाठक गुण सम्भवै सिद्ध प्रति नमन हमारा॥

ॐ ह्रीं पाठकद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥305॥

सहभावी गुण सार जहाँ परभाव न लेशा,
अगुरुलघु परणाम वस्तु सद्भाव विशेषा।
शिष्यन के अज्ञान हरै ज्यूँ रवि अँधियारा,
पाठक गुण सम्भवै सिद्ध प्रति नमन हमारा॥

ॐ ह्रीं पाठकगुणपर्यायेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥306॥

गुण समुदायी द्रव्य याहि तें निरगुण नाहीं,
सो अनन्त गुण सदा विराजत तुम पद माँहीं।
शिष्यन के अज्ञान हरै ज्यूँ रवि अँधियारा,
पाठक गुण सम्भवै सिद्ध प्रति नमन हमारा॥

ॐ ह्रीं पाठकगुणद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥307॥

सत् सरूप सब द्रव्य सधै नीके अबाधकर,
सो तुम सत्य सरूप विराजो द्रव्य भावधर।
शिष्यन के अज्ञान हरै ज्यूँ रवि अँधियारा,
पाठक गुण सम्भवै सिद्ध प्रति नमन हमारा॥

ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।308 ।।

जे जे हैं परिनाम बिना परिणामी नाहीं,
परिणामी परिणाम एक ही हैं तुम माँहीं।
शिष्यन के अज्ञान हरै ज्यूँ रवि अँधियारा,
पाठक गुण सम्भवै सिद्ध प्रति नमन हमारा ॥

ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यपर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।309 ।।

अगुरुलघु पर्याय शुद्ध परिणाम बखानी,
निज सरूप में अन्तरगत श्रुतज्ञान प्रमानी।
शिष्यन के अज्ञान हरै ज्यूँ रवि अँधियारा,
पाठक गुण सम्भवै सिद्ध प्रति नमन हमारा ॥

ॐ ह्रीं पाठकपर्यायस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।310 ।।

जगतवास सब पापमूल जियको दुखदाई,
ताको नाशन हेतु कहो शिव मूल उपाई।
शिष्यन के अज्ञान हरै ज्यूँ रवि अँधियारा,
पाठक गुण सम्भवै सिद्ध प्रति नमन हमारा ॥

ॐ ह्रीं पाठकमङ्गलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।311 ।।

जहाँ न दुख को लेश सर्वथा सुख ही जानो,
सोई मङ्गल गुण तुममें प्रत्यक्ष लखानो।
शिष्यन के अज्ञान हरै ज्यूँ रवि अँधियारा,
पाठक गुण सम्भवै सिद्ध प्रति नमन हमारा ॥

ॐ ह्रीं पाठकमङ्गलगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।312 ।।

औरन मङ्गलकरन आप मङ्गलमय राजैं ,
दर्शन कर सुखसार मिलै सब ही अघ भाजैं।
शिष्यन के अज्ञान हरै ज्यूँ रवि अँधियारा,
पाठक गुण सम्भवै सिद्ध प्रति नमन हमारा ॥

ॐ ह्रीं पाठकमङ्गलगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।313 ।।

आदि अन्त अविरुद्ध शुद्ध मङ्गलमय मूरति,
निज सरूप में बसै सदा परभाव विदूरति।
शिष्यन के अज्ञान हरै ज्यूँ रवि अँधियारा,
पाठक गुण सम्भवै सिद्ध प्रति नमन हमारा॥

ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यमङ्गलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥314॥

जितनी परिणति धरौ सबहिं मङ्गलमय रूपी,
अन्य अवस्थित टार धार तद्रूप अनूपी।
शिष्यन के अज्ञान हरै ज्यूँ रवि अँधियारा,
पाठक गुण सम्भवै सिद्ध प्रति नमन हमारा॥

ॐ ह्रीं पाठकमङ्गलपर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥315॥

निश्चय वा व्यवहार सर्वथा मङ्गलकारी,
जग जीवन के विघन विनाशन सर्व प्रकारी।
शिष्यन के अज्ञान हरै ज्यूँ रवि अँधियारा,
पाठक गुण सम्भवै सिद्ध प्रति नमन हमारा॥

ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यमङ्गलपर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥316॥

भेदाभेद प्रमाण वस्तु सर्वस्व बखानो,
वचन अगोचर कहो तथा निर्दोष कहानो।
शिष्यन के अज्ञान हरै ज्यूँ रवि अँधियारा,
पाठक गुण सम्भवै सिद्ध प्रति नमन हमारा॥

ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यगुणपर्यायमङ्गलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥317॥

सब विशेष प्रतिभासमान मङ्गलमय भासे,
निर्विकल्प आनन्दरूप अनुभूति प्रकाशे।
शिष्यन के अज्ञान हरै ज्यूँ रवि अँधियारा,
पाठक गुण सम्भवै सिद्ध प्रति नमन हमारा॥

ॐ ह्रीं पाठकस्वरूपमङ्गलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥318॥

पायता

निर्विघ्न निराश्रय होई, लोकोत्तम मङ्गल सोई।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकमङ्गलोत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥319॥

जगजीवन को हम देखा, तुम ही गुणसार विशेखा।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकगुणलोकोत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥320॥

षट्द्रव्य रचित जग सारा, तुम उत्तम रूप निहारा।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यलोकोत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥321॥

निज ज्ञान शुद्धता पाई, जिस करि यह है प्रभुताई।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥322॥

जग जीव अपूरण ज्ञानी, तुम ही लोकोत्तम प्रानी।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकज्ञानलोकोत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥323॥

युगपत निरभेद निहारा, तुम दर्शन भेद उघारा।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥324॥

हम सोवत हैं नित मोही, निर्मोही लखें तुमको ही।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनलोकोत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥325॥

दृगवन्त महासुखकारा, तुम भाव महा अविकारा।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥326॥

निरशंस अनन्त अबाधा, निज बोधन भाव अराधा।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकसम्यक्त्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥327 ॥

सम्यक्त्व महासुखकारी, निज गुण स्वरूप अविकारी।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकसम्यक्त्वगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥328 ॥

निरखेद अछेद अभेदा, सुखरूप वीर्य निर्वेदा।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥329 ॥

निज भोग कलेस न लेशा, यह वीर्य अनन्त अशेषा।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥330 ॥

परिणाम सुथिर निज माँहीं, उपजै न कलेस कदाहीं।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यपर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥331 ॥

ध्रुव भाव नहिं तुम कैसो, पावै जगवासि न ऐसो।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥332 ॥

निज ज्ञान सुधारस पीवत, आनन्द सुभाव सु जीवत।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यगुणपर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥333 ॥

अविशेष अनन्त सुभावा, तुम दर्शन माहिं लखावा।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनपर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥334 ॥

इक बार लखे सबही को, तद्रूप निजातम ही को।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनपर्यायस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥335 ॥

सपरस आदिक गुण नाहीं, चिद्रूप निजातम माँहीं।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकज्ञानद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥336॥

शरणागत दीनदयाला, हम पूजत भाव विशाला।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥337॥

जिनशरण गही शिव पायो, इम शरण महागुण गायो।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥338॥

अनुभव निज बोध करावै, यह ज्ञान शरण कहलावै।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकज्ञानगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥339॥

दृग मात्र तथा सरधाना, निश्चय शिववास कराना।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥340॥

निरभेद स्वरूप अनूपा, ह्वै शर्ण तनी शिव भूपा।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनस्वरूपशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥341॥

निज आत्मस्वरूप लखाया, इम कारण शिवपद पाया।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकसम्यक्त्वशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥342॥

है आत्म-स्वरूप सरधाना, तुम शरण गहो भगवाना।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकसम्यक्त्वस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥343॥

निज आतम साधन माँहीं, पुरुषारथ छूटै नाहीं।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥344॥

जब आत्म शक्ति प्रगटावै, तब निज स्वरूप जिय पावै।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यस्वरूपशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥345॥

परमातम वीर्य महा है, पर निमित न लेश तहाँ है।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यपरमात्मशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥346॥

श्रुत द्वादशाङ्ग जिनवाणी, निश्चय शिववास करानी।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकद्वादशाङ्गशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥347॥

दश पूर्व महा जिनवाणी, निश्चय अघहर सुखदानी।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकदशपूर्वाङ्गाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥348॥

दश चार पूर्व जिनवानी, निश्चय शिववास करानी।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकचतुर्दशपूर्वाङ्गाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥349॥

निज आत्म चर्ण प्रकटावै, आचार अङ्ग कहलावै।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकाचाराङ्गाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥350॥

रेखता

विविध शंकादि तम टारी, निरन्तर ज्ञान आचारी।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकज्ञानाचाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥351॥

पराश्रित भाव विनशाया, सुथिर निजरूप दर्शाया।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकतपसाचाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥352॥

मुक्तपद देन अनिवारी, सर्व बुध चर्ण आचारी।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकरत्नत्रयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥353 ॥

शुद्ध रत्नत्रयधारी, निजातमरूप अविकारी।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकरत्नत्रयसहायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥354 ॥

ध्रौव्य पञ्चम-गती पाई, जन्म पुनि मर्ण छुटकाई।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकध्रुवासंसाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥355 ॥

अनूपम रूप अधिकाई, असाधारण स्वपद पाई।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकएकत्वस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥356 ॥

आन तुम सम न गुण होई, कहो एकत्व गुण सोई।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकएकत्वगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥357 ॥

निजानन्द पूर्ण पद पाया, सोई परमात्म कहलाया।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकएकत्वपरमात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥358 ॥

उच्चगत मोक्ष का दाता, एक निजधर्म विख्याता।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकएकत्वधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥359 ॥

जो तुम चेतनता परकासी, न पावैं ऐसी जगवासी।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकएकत्वचेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥360 ॥

ज्ञान दर्शन स्वरूपी हो, असाधारण अनूपी हो।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकएकत्वचेतनस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥361 ॥

गहैं नित निज चतुष्टय को, मिलैं कबहूँ नहीं परसों।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकएकत्वद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥362॥

स्वपद अनुभूत सुख रासी, चिदानन्द भाव परकासी।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकचिदानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥363॥

अन्त पुरुषार्थ साधक हो, जन्म-मरणादि बाधक हो।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकसिद्धसाधकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥364॥

स्व-आतम ज्ञान दरशाया, ये पूरण ऋद्धि पद पाया।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकऋद्धिपूर्णाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥365॥

सकल विधि मूरछा त्यागी, तुम्हीं निरग्रन्थ बड़भागी।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकनिर्ग्रन्थाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥366॥

निजाश्रित अर्थ जग नाहीं, अबाधित अर्थ तुम माँहीं।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकार्थविधानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥367॥

न फिर संसार पद पाया, अपूरब बन्ध विनसाया।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकसंसाराननुबन्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥368॥

आप कल्याणमय राजो, सकल जगवास दुख त्याजो।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठककल्याणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥369॥

स्वपर हितकार गुणधारी, परम कल्याण अविकारी।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठककल्याणगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥370॥

अहित परिहार पद जो है, परम कल्याण तासों है।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठककल्याणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥371॥

स्वसुख द्रव्याश्रये माँहीं, जहाँ कछु पर निमित नाहीं।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठककल्याणद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥372॥

जो है सो है अमित काला, अन्यथा भाव विधि टाला।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकतत्त्वगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥373॥

रहें नित चेतना माँहीं, कहैं चिद्रूप मुनि ताहीं।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकचिद्रूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥374॥

सर्वथा ज्ञान परिणामी, प्रकट है चेतना नामी।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकचेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥375॥

नहीं अन्यत्व भेदा है, गुणी गुण निर-विछेदा है।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकचेतनागुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥376॥

घटाघट वस्तु परकाशी, धरें हैं जोति प्रतिभासी।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकज्योतिःप्रकाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥377॥

वस्तु सामान्य अवलोका, है युगपत दर्श सिद्धों का।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनचेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥378॥

विशेषण युक्त साकारा, ज्ञान दुति में प्रगट सारा।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकज्ञानचेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥379॥

ज्ञान सों जीव नामी है, भेद समवाय स्वामी है।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥
ॐ ह्रीं पाठकजीवचिदानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥380॥
चराचर वस्तु स्वाधीना, समय-एकहि में लख लीना।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥
ॐ ह्रीं पाठकवीर्यचेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥381॥
सकल जीवों के सुख कारन, शरण तुम ही हो अनिवारन।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥
ॐ ह्रीं पाठकसकलशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥382॥
तुम्हीं त्रयलोक हितकारी, अद्वितीय शर्ण बलिहारी।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥
ॐ ह्रीं पाठकत्रैलोक्यशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥383॥
तुम्हारी शर्ण तिहुँ काला, करन जग जीव प्रतिपाला।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥
ॐ ह्रीं पाठकत्रिकालशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥384॥
शरण अनिवार सुखदाई, प्रगट सिद्धान्त में गाई।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥
ॐ ह्रीं पाठकमङ्गलशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥385॥
लोक में धर्म विख्याता, सो तुम ही में है सुखसाता।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥
ॐ ह्रीं पाठकलोकशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥386॥
जोग बिन आस्रवा नाहीं, भये निर आस्रवा ताहीं।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥
ॐ ह्रीं पाठकआस्रवअवेदाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥387॥
आस्रव कर्म का खोना, कार्य था आपना होना।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥
ॐ ह्रीं पाठकआस्रवविनाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥388॥

तत्त्व निर्बाध उपदेशा, विनाशे कर्म परवेशा।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकआस्त्रवउपदेशछेदकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥389॥

प्रकृति सब कर्म की चूरी, भाव मल नाश दुख पूरी।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकबन्धमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥390॥

न फिर संसार अवतारा, बन्ध-विधि अन्त कर डारा।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकबन्धअन्तकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥391॥

आस्त्रव कर्म दुखदाई, रुके संवर ये सुखदाई।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकसंवराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥392॥

सर्वथा जोग विनसाया, स्व-संवररूप दरशाया।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकसंवरस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥393॥

कलुषता भाव में नाहीं, भये संवर करण ताहीं।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकसंवरकरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥394॥

कुपरणति राग-रुष नाशन, निरजरा रूप प्रतिभासन।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकनिर्जरास्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥395॥

काम दव दाह जग सारा, आप तिस भस्म कर डारा।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठककन्दर्पच्छेदकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥396॥

चहूँ विधि बन्ध विधि चूरा, ये विस्फोटक कहो पूरा।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठककर्मविस्फोटकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥397॥

दऊ विधि कर्म का खोना, सोई है मोक्ष का होना।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकमोक्षाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥398॥

द्रव्य वा भाव मल टारा, नमूँ शिवरूप सुखकारा।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकमोक्षस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥399॥

अरति-रति पर-निमित खोई, आत्म-रति है प्रगट सोई।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकआत्मरतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥400॥

बड़ी चौपाई

अठाईस मूल सदा गुणधारी, सो सब साधु वरैं शिवनारी।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥

ॐ ह्रीं सर्वसाधुभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥401॥

मूल तथा सब उत्तर गाये, ये गुण पालत साधु कहाये।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥

ॐ ह्रीं सर्वसाधुगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥402॥

साधुन के गुण साधुहि जाने, होत गुणी गुण ही परमाने।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥

ॐ ह्रीं सर्वसाधुगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥403॥

नेम थकी शिववास करे जो, द्रव्य थकी शिवरूप कहे सो।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥

ॐ ह्रीं सर्वसाधुद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥404॥

जीव सदा चिद्भाव विलासी, आपहि आप सधै शिवराशी।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥

ॐ ह्रीं सर्वसाधुगुणद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥405॥

ज्ञानमई निज ज्योति प्रकाशी, भेद विशेष सबै प्रतिभासी।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥
ॐ ह्रीं साधुज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥406॥
एकहि बार लखाय अभेदा, दर्शन को सब रोक विछेदा।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥
ॐ ह्रीं साधुदर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥407॥
आपहिं साधन साध्य तुम्हीं हो, एक अनेक अबाध तुम्हीं हो।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥
ॐ ह्रीं साधुद्रव्यभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥408॥
चेतनता निजभाव न छारे, रूप स्पर्शन आदि न धारे।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥
ॐ ह्रीं साधुद्रव्यस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥409॥
जो उतपाद भये इक बारा, सो निरबाध रहै अविकारा।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥
ॐ ह्रीं साधुवीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥410॥
है परिणाम अभिन्न प्रणामी, सो तुम साधु भये शिवगामी।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥
ॐ ह्रीं साधुद्रव्यगुणपर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥411॥
जो गुण वा पर्याय धरो हो, सो निज माहिं अभिन्न वरो हो।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥
ॐ ह्रीं साधुद्रव्यगुणपर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥412॥
मङ्गलमय तुम नाम कहावै, लेतहिं नाम सु पाप नसावै।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥
ॐ ह्रीं साधुमङ्गलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥413॥
मङ्गल रूप अनूपम सोहै, ध्यान किये नित आनन्द होहै।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥
ॐ ह्रीं साधुमङ्गलस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥414॥

पाप मिटै तुम शरण गहैं तें, मङ्गल शरण कहाय तहैं तें।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥
ॐ ह्रीं साधुमङ्गलशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।415॥

देखत ही सब पाप नसे हैं, आनन्द मङ्गलरूप लसे हैं।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥
ॐ ह्रीं साधुदर्शनमङ्गलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।416॥

जानत हैं तुमको मुनि नीके, पाप कलाप मिटै तिनही के।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥
ॐ ह्रीं साधुज्ञानमङ्गलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।417॥

ज्ञानमई तुम हो गुणरासा, मङ्गल ज्योति धरो रवि कासा।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥
ॐ ह्रीं साधुज्ञानगुणमङ्गलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।418॥

मङ्गल वीर्य तुम्हीं दर्शाया, काल अनन्त न पाप गलाता।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥
ॐ ह्रीं साधुवीर्यमङ्गलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।419॥

वीर्य महा सुखरूप निहारा, पाप बिना नित ही अविकारा।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥
ॐ ह्रीं साधुवीर्यमङ्गलस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।420॥

मङ्गल वीर्य महा गुणधामी, निज पुरुषार्थहिं मोक्ष लहामी।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥
ॐ ह्रीं साधुवीर्यपरममङ्गलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।421॥

वीर्य स्वभाविक पूर्ण तिहारा, कर्म नशाय भये भवपारा।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥
ॐ ह्रीं साधुवीर्यद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।422॥

तीनहि लोक लखे सब जोई, आप समान न उत्तम कोई।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।423॥

लोक सभी विधि बन्धन माँहीं, तुम सम रूप धरे ते नाहीं।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥424॥

लोकन के गुण पाप कलेशा, उत्तम रूप नहीं तुम जैसा।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥425॥

लोक अलोक निहारक नामी, उत्तम द्रव्य तुम्हीं अभिरामी।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥426॥

लोक सभी षट्द्रव्य रचाया, उत्तम द्रव्य तुम्हीं हम पाया।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमद्रव्यस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥427॥

ज्ञानमई चित उत्तम सोहै, ऐसो लोक विषैं अरु को है।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥428॥

ज्ञान स्वरूप सुभाव तिहारा, उत्तम लोक कहै इम सारा।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमज्ञानस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥429॥

देखन में कछु आड़ न आवै, लोक तनी सब उत्तम गावै।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमदर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥430॥

देखन जानन भाव धरो हो, उत्तम लोक के हेतु गहै हो।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमज्ञानदर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥431॥

जाकर लोकशिखर पद धारा, उत्तम धर्म कहो जग सारा।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥432॥

धर्म स्वरूप निजातम माँहीं, उत्तम लोक विषैं ठहराई।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमधर्मस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥433 ॥

अन्य सहाय न चाहत जाको, उत्तम लोक कहै बल ताको।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमवीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥434 ॥

उत्तम वीर्य सरूप निहारा, साधन मोक्ष कियो अनिवारा।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमवीर्यस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥435 ॥

पूरण आत्मकला परकाशी, लोक विषैं अतिशय अविनाशी।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमातिशयसम्पन्नाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥436 ॥

राग-विरोध न चेतन माँहीं, ब्रह्म कहो जग उत्तम ताहीं।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमब्रह्मज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥437 ॥

ज्ञान-स्वरूप अकम्प अडोला, पूरण ब्रह्म प्रकाश अमोला।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमब्रह्मज्ञानस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥438 ॥

राग विरोध जयो शिवगामी, आत्म अनातम अन्तरजामी।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥439 ॥

भेद बिना गुण-भेद धरो हो, सांख्य कुवादिक पक्ष हरो हो।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमगुणसम्पन्नाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥440 ॥

साधत आतम पुरुष सखाई, उत्तम पुरुष कहो जग ताई।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमपुरुषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥441 ॥

साधु समान न दीनदयाला, शरण गहै सुख होत विशाला।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥442॥

जे जन साधु सु शरण गही है, ते शिव आनन्द लब्धि लही है।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥443॥

साधुन के गुण द्रव्य चितारे, होत महासुख शरण उभारे।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥

ॐ ह्रीं साधुगुणद्रव्यशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥444॥

लावनी

तुम चितवत वा अवलोकत वा सरधानी,
इम शरण गहै पावै निश्चय शिवरानी।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूँ साधु, सम सिद्ध अकम्प विराजै॥

ॐ ह्रीं साधुदर्शनशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥445॥

तुम अनुभव करि शुद्धोपयोग मन धारा।
यह ज्ञान शरण पायो निश्चै अविकारा॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुज्ञानशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥446॥

निज आत्मरूप में दृढ़ सरधा तुम पाई।
थिर रूप सदा निवसों शिववास कराई॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधु-आत्मशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥447॥

तुम निराकार निरभेद अछेद अनूपा।
तुम निरावरण निरद्वन्द स्वदर्श स्वरूपा॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुदर्शनस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥448॥

तुम परम पूज्य परमेश परमपद पाया।
हम शरण गही नित पूजैं मन-वच-काया॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुपरमात्मशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥449॥

तुम मन इन्द्री व्यापार जीत सु अभीता।
हम शरण गही मनु आज कर्मरिपु जीता॥
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूँ साधु, सम सिद्ध अकम्प विराजै॥

ॐ ह्रीं साधुजितात्मशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥450॥

भववास दुखी जे शरण गहैं तुम मन में,
तिनको अवलम्ब उभारो भय हर छिन में॥निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुवीर्यशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥451॥

दृग-बोध अनन्तानन्त धरो निरखेदा।
तुम बल अपार शरणागत विघन विछेदा॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुवीर्यात्मशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥452॥

निज ज्ञानानन्दी महालक्ष्मी सोहै।
सुर असुर नमें नित परम मुनी मन मोहै॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुलक्ष्म्यलङ्कृताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥453॥

भववास महादुखरास ताहि विनशाया।
अविच्छिन्न लीन स्वाधीन महासुख पाया॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुलक्ष्मीपरिणताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥454॥

त्रिभुवन का ईश्वरपना तुम्हीं में पाया।
त्रिभुवन के पातक हरे मनू रवि-छाया॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुलक्ष्मीरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥455॥

तुम काल अनन्तानन्त अबाध विराजो।
पर निमित्त विकार निवार सु नित्य सु छाजो॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुध्रुवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥456॥

तुम क्षायिक लब्धि प्रभाव परम गुणधारी।
निवसौ निज आनन्द माँहिं अचल अविकारी॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुगुणध्रुवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥457॥

तेरम चौदम गुणथान द्रव्य है जैसो।
रहै काल अनन्तानन्त शुद्धता तैसो॥
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूँ साधु, सम सिद्ध अकम्प विराजै॥

ॐ ह्रीं साधुद्रव्यध्रुवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥458॥

फिर जन्म-मर्ण नहीं होय जन्म वो पाया।
संसार-विलक्षण निज अपूर्व पद पाया॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुद्रव्योत्पादाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥459॥

सूक्षम अलब्धि पर्याप्त निगोद शरीरा।
ते तुच्छ द्रव्य कर नाश भये भवतीरा॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुद्रव्यव्ययाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥460॥

रागादि परिग्रह टारि तत्त्व सरधानी।
इम साधु जीव नित साधत शिवसुखदानी॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुजीवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥461॥

स्व-संवेदन विज्ञान परम अमलाना।
तज इष्ट-अनिष्ट विकल्प जाल दुखसाना॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुजीवगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥462॥

देखन-जानन चेतन सुरूप अविकारी।
गुण-गुणी भेद में अन्य भेद व्यभिचारी॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुचेतनगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥463॥

चेतन की परिणति रहै सदा चित माँहीं।
ज्यों सिन्धु लहर हो सिन्धु और कछु नाहीं॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुचेतनस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥464॥

चेतन विलास सुखरास नित्य परकाशी।
सो साधु दिगम्बर साध भये अविनाशी॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुचेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥465॥

तुम असाधार्ण परमातम पद परकाशा।
नहिं अन्य जीव यह लहै गहै भववासा॥
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूँ साधु, सम सिद्ध अकम्प विराजै॥

ॐ ह्रीं साधुपरमात्मप्रकाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।466।।

तुम मोह तिमिर बिन स्वयं सूर्य परकाशी,
गुण द्रव्य पर्य सब भिन्न-भिन्न प्रतिभासी।।निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुज्योतिःस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।467।।

ज्यों घटपटादि दीपक की ज्योति दिखावै।
त्यों ज्ञान ज्योति सब भिन्न-भिन्न दरशावै॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुज्योतिःप्रदीपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।468।।

सामान्यरूप अवलोकन युगपत सारा।
तुम दर्शन ज्योति प्रदीप हरै अँधियारा॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुदर्शनज्योतिःप्रदीपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।469।।

साकार रूप सु विशेष ज्ञानद्युति माँहीं।
युगपत कर प्रतिबिम्बित वस्तु प्रगटाई॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुज्ञानज्योतिःप्रदीपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।470।।

जे अर्थ जन्य कहे ज्ञान वो झूठे वादी।
है स्वपर-प्रकाशक आतम ज्योति अनादी॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधु आत्म ज्योतिषे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।471।।

है तारण-तरण जहाज अथित भवसागर।
हम शरण गही पावैं शिववास उजागर ॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।472।।

सामान्यरूप सब साधु मुक्ति-मग साधैं।
हम पावैं निज पद नेम रूप आराधैं॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुसर्वशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।473।।

त्रसनाड़ी ही में तत्त्वज्ञान सरधानी।
ताकर साधै निश्चय पावै शिवरानी॥
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूँ साधु, सम सिद्ध अकम्प विराजै॥

ॐ ह्रीं साधुलोकशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।474॥

तिहुँलोक करन हित वरते तिन उपदेशा,
हम शरण गही मेटो भववास कलेशा।।निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुत्रिलोकशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।475॥

संसार विषम दुखकार असार अपारा।
तिस छेदक वेदक स्वपद सुखद हितकारा॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुसंसारछेदकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।476॥

यद्यपि इक क्षेत्र अवगाह अभिन्न विराजैं।
तद्यपि निज सत्ता माहिं भिन्नता साजैं॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुएकत्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।477॥

यद्यपि सबहि सामान्य सु पूरणज्ञानी।
तद्यपि निज आश्रयभाव भिन्न परमाणी॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुएकत्वगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।478॥

है असाधार्ण एकत्व द्रव्य तुम माँही।
तुम सम संसार मंझार और कोउ नाहीं॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुएकत्वद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।479॥

यद्यपि सब ही हो असंख्यात परदेशी।
तद्यपि निजमें निजरूप स्वद्रव्य स्वदेशी॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुएकत्वस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।480॥

सामान्य रूप सब ब्रह्म कहावै ज्ञानी।
तिनमें तुम वृषभ सु परमब्रह्म परमानी॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुपरंब्रह्मणे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।481॥

सापेक्ष एक ही कहे सु नय विस्तारा।
तुम भाव प्रगट कर कहै सुनिश्चैकारा॥
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूँ साधु, सम सिद्ध अकम्प विराजै॥

ॐ ह्रीं साधुस्याद्वादाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।482॥

है ज्ञाननिमित यह वचन जाल परिमाणा,
है वाचक-वाच्य संयोग ब्रह्म कहलाना।।निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुशब्दब्रह्मणे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।483॥

षट्द्रव्य निरूपण करै सोई आगम हो।
तिसके तुम मूल निधान सु परमागम हो॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुपरमागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।484॥

तीर्थेश कहैं सर्वज्ञ दिव्यधुनि माँहीं।
तुम गुण अपार इम कहो जिनागम ताहीं॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुजिनागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।485॥

तुम नाम प्रसिद्ध अनेक अर्थ का वाची।
ताके प्रबोध सों हो प्रतीत मन सांची॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साध्वनेकार्थाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।486॥

लोभादिक मेटे बिन न शौचता होई।
है वृथा तीर्थ-स्नान करो भी कोई॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुशौचाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।487॥

है मिथ्या मोह प्रबल मल इनका खोना।
सो शुद्ध शौच गुण यही, न तन का धोना॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुशुचित्वगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।488॥

इक देश कर्ममल नाश पवित्र कहायो।
तुम सर्व कर्ममल नाश परम पद पायो॥ निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुपवित्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।489॥

तुम रहो बन्ध सों दूर एकान्त सुखाई।
ज्यों नभ अलिप्त सब द्रव्य रहो तिस माँहीं॥
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूँ साधु, सम सिद्ध अकम्प विराजै॥

ॐ ह्रीं साधुबन्धविविक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥490॥

सब द्रव्य-भाव-नोकर्म बन्ध छुटकाया,
तुम शुद्ध निरञ्जन निज सरूप थिर पाया॥निजरूप ...॥

ॐ ह्रीं साधुबन्धमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥491॥

अडिल्ल

भावास्त्रव बिन अतिशय सहित अबन्ध हो,
मेघपटल बिन ज्यों रवि-किरण अमन्द हो।
मोक्षमार्ग वा मोक्ष श्रेय सब साधु हैं,
नमत निरन्तर हम हूं कर्म रिपु को दहैं॥

ॐ ह्रीं साधुबन्धप्रतिबन्धकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥492॥

तुम स्वरूप में लीन परम संवर करैं।
यह कारण अनिवार कर्म आवन हरैं॥ मोक्षमार्ग.....॥

ॐ ह्रीं साधुसंवरकारणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥493॥

पुद्‌गलीक परिणाम आठ विध कर्म है।
तिनकी करत निर्जरा शुद्ध सु पर्म है॥ मोक्षमार्ग.....॥

ॐ ह्रीं साधुनिर्जराद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥494॥

परम शुद्ध उपयोग रूप वरते जहाँ।
छिन में नन्तानन्त कर्म खिर है तहाँ॥ मोक्षमार्ग.....॥

ॐ ह्रीं साधुनिर्जरानिमित्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥495॥

सकल विभाव अभाव निर्जरा करत है।
ज्यों रवि तेज प्रचण्ड सकल तम हरत है॥ मोक्षमार्ग.....॥

ॐ ह्रीं साधुनिर्जरागुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥496॥

जे संसार निमित ते सब दुख रूप हैं।
तुम निमित्त शिव कारण शुद्ध अनूप हैं॥
मोक्षमार्ग वा मोक्ष श्रेय सब साधु हैं,
नमत निरन्तर हमहूँ कर्म रिपु को दहैं॥

ॐ ह्रीं साधुनिमित्तमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥497॥

संशय रहित सुनिश्चिय सन्मति-दाय हो।
मिथ्या-भ्रम-तम नाशन सहज उपाय हो ॥मोक्षमार्ग.....॥

ॐ ह्रीं साधुबोधधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥498॥

अति विशुद्ध निजज्ञान स्वभाव सु धरत हो।
भव्यन के संशय आदिक तम हरत हो॥ मोक्षमार्ग.....॥

ॐ ह्रीं साधुबोधगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥499॥

अविनाशी अविकार परम शिवधाम हो।
पायो सो तुम सुगत महा अभिराम हो॥ मोक्षमार्ग.....॥

ॐ ह्रीं साधुसुगतिभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥500॥

जासो परे न और जन्म वा मरण है।
सो उत्तम उत्कृष्ट परम गति को लहै॥ मोक्षमार्ग.....॥

ॐ ह्रीं साधुपरमगतिभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥501॥

पर निमित्त रागादिक जे परिणाम हैं।
इन विभाव सों रहित साधु शुभ नाम हैं॥ मोक्षमार्ग.....॥

ॐ ह्रीं साधुविभावरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥502॥

निज सुभाव सामर्थ सु प्रभुता पाइयो।
इन्द्र-फणेन्द्र-नरेन्द्र शीश निज नाइयो॥ मोक्षमार्ग.....॥

ॐ ह्रीं साधुस्वभावरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥503॥

कर्मबन्ध सों रहित सोई शिवरूप हैं।
निवसें सदा अबन्ध स्वशुद्ध अनूप है॥ मोक्षमार्ग.....॥

ॐ ह्रीं साधुमोक्षस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥504॥

सकल द्रव्य पर्याय विषैं स्वज्ञान हो।

सत्यारथ निश्चल निश्चय परमाण हो॥

मोक्षमार्ग वा मोक्ष श्रेय सब साधु हैं,

नमत निरन्तर हमहूँ कर्म रिपु को दहैं॥

ॐ ह्रीं साधुप्रमाणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥505॥

तीन लोक के पूज्य यतीजन ध्यावहीं।

कर्म-शत्रु को जीत 'अर्हं' पद पावहीं॥मोक्षमार्ग.....॥

ॐ ह्रीं साधुअर्हत्स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥506॥

परम इष्ट शिव साधत सिद्ध कहाइयो।

तीन लोक परमेष्ठि परम पद पाइयो॥ मोक्षमार्ग.....॥

ॐ ह्रीं साधुसिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥507॥

शिव-मारग प्रकटावन कारण हो तुम्हीं।

भविजन पतित उधारन तारन हो तुम्हीं॥ मोक्षमार्ग.....॥

ॐ ह्रीं साधुसूरिप्रकाशिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥508॥

स्वपर स्वहित कर परम बुद्धि भरतार हो।

ध्यान धरत आनन्द-बोध दातार हो॥ मोक्षमार्ग.....॥

ॐ ह्रीं साधु उपाध्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥509॥

पञ्च परम गुरु प्रगट तुम्हारो नाम है।

भेदाभेद सुभाव सु आतमराम है॥ मोक्षमार्ग.....॥

ॐ ह्रीं साधु अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥510॥

लोकालोक सु व्यापक ज्ञान सुभाव तें।

तद्यपि निजपद लीन विहीन विभाव तें॥ मोक्षमार्ग.....॥

ॐ ह्रीं साधुआत्मरतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥511॥

रत्नत्रय निज भाव विशेष अनन्त हैं।

पञ्च परमगुरु भये नमें नित सन्त हैं॥ मोक्षमार्ग.....॥

ॐ ह्रीं साधु अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुरत्नत्रयात्मकानन्तगुणेभ्यो नमः॥512॥

पञ्च परम गुरु नाम विशेषण को धरैं,
तीन लोक में मङ्गलमय आनन्द करैं।
पूरणकर थुति नाम अन्त सुख कारणं,
पूजूँ हूँ युत भाव सु अर्घ उतारणं॥

ॐ ह्रीं अर्हं द्वादशाधिकपञ्चशतगुणयुतसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।513 ।।

जयमाला

रत्नत्रय भूषित महा, पञ्च सुगुरु शिवकार।
सकल सुरेन्द्र नमें नमूँ, पाऊँ सो गुण सार ।।1 ॥

पद्धरि

जय महा मोहदल दलन सूर, जय निर्विकल्प आनन्दपूर।
जय द्वैविध कर्म विमुक्त देव, जय निजानन्द स्वाधीन एव॥

जय संशयादि भ्रमतम निवार, जय स्वामि भक्ति द्युति युति अपार।
जय युगपत सकल प्रत्यक्ष लक्ष, जय निरावरण निर्मल अनक्ष॥

जय जय जय सुखसागर अगाध, निरद्वन्द निरामय निर-उपाधि।
जय मनवचतन व्यापार नाश, जय थिर सरूप निज पद प्रकाश॥

जय पर-निमित्त सुख-दुख निवार, निरलेप निराश्रय निर्विकार।
निज में पर को पर में न आप, परवेश न हो नित निर-मिलाप॥

तुम परम धरम आराध्य सार, निज सम करि कारण दुर्निवार।
तुम पञ्च परम आचार युक्त, नित भक्त वर्ग दातार मुक्त॥

एकादशाङ्ग सर्वाङ्ग पूर्व, स्वै अनुभव पायो फल अपूर्व।
अन्तर-बाहिर परिग्रह नशाय, परमारथ साधू पद लहाय॥

हम पूजत नित उर भक्ति ठान, पावें निश्चय शिवपद महान।
ज्यों शशि किरणावलि सियरपाय, मणि चन्द्रकान्ति द्रवता लहाय॥

घत्ता

जय भव-भयहारं, बन्धविडारं, सुखसारं शिव करतारं।
नित सन्त सु ध्यावत, पाप नशावत, पावत निज पद अविकारं॥

ॐ ह्रीं अर्हं द्वादशाधिकपञ्चशतदलोपरिस्थितसिद्धेभ्यो नमः पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

तुम गुण अमल अपार, अनुभवतें भव-भय नशै।
सन्त सदा चित धार, शान्ति करो भवतप हरो॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

जाप - ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा नमः। (108 बार)

अष्टम पूजा

ऊरध अधो सुरेफ सबिन्दु हकार विराजै,
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजै।
वर्ग्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व सन्धिधर,
अग्रभाग में मन्त्र अनाहत सोहत अतिवर॥
पुनि अन्त ह्रीं बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नाग को।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मङ्गल करो॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्त्रगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

सूक्ष्मादिक गुण सहित है, कर्म रहित नीरोग।
सिद्धचक्र सो थापहूँ, मिटै उपद्रव योग॥

इति यंत्रस्थापनार्थं पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

निज आत्मरूप सुतीर्थ मग नित सरस आनन्दधार हो।
नाशे त्रिविधि मल सकल दुखमय भव-जलधि के पार हो॥
यातैं उचित ही है जु तुम पद नीर सों पूजा करूँ।
इक सहस अरु चौबीस गुण-गण भावयुत मन में धरूँ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्त्र गुणसंयुक्ताय जलं निर्व. स्वाहा।

शीतल सुरूप सुगन्ध चन्दन एक भव तप नासही।
सो भव्य मधुकर प्रिय सु यह नहिं और ठौर सुवास ही॥
यातैं उचित ही है जु तुम पद मलय सों पूजा करूँ॥ इक..॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्त्र गुणसंयुक्ताय चन्दनं निर्व. स्वाहा।

अक्षय अबाधित आदि-अन्त समान स्वच्छ सुभाव हो।
ज्यों तुष बिना तन्दुल दिपै त्यूं निखिल अमल प्रभाव हो॥
यातैं उचित ही है जु तुम पद अक्षतं पूजा करूँ॥ इक..॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्त्र गुणसंयुक्ताय अक्षतान् निर्व. स्वाहा।

गुण पुष्पमाल विशाल तुम भवि कण्ठ पहिरैं भावसों।
जिनके मधुप मन रसिक लुब्धित रमत नितप्रति चावसों॥
यातैं उचित ही है जु तुम पद पुष्प सों पूजा करूँ॥
इक सहस अरु चौबीस गुण-गण भावयुत मन में धरूँ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्त्र गुणसंयुक्ताय पुष्पं निर्व. स्वाहा।

शुद्धात्म सुरस सुपाक मधुर समान और न रस कहीं।
ताके हो आस्वादी सो तुम सम और सन्तुष्टित नहीं॥
यातैं उचित ही है जु तुम पद चरुन सों पूजा करूँ॥ इक..॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्त्र गुणसंयुक्ताय नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

स्वपरप्रकाश स्वभावधर ज्यूँ निज-स्वरूप संभारते।
त्यूँ ही त्रिकाल अनन्त द्रव पर्याय प्रगट निहारते॥
यातैं उचित ही है जु तुम पद दीप सों पूजा करूँ॥ इक..॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्त्र गुणसंयुक्ताय दीपं निर्व. स्वाहा।

वर ध्यान अगनि जराय वसुविधि ऊर्ध्वगमन स्वभावतें।
राजै अचल शिव थान नित तिहँ धर्म द्रव्य अभाव तें॥
यातैं उचित ही है जु तुम पद धूप सों पूजा करूँ॥ इक..॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्त्र गुणसंयुक्ताय धूपं निर्व. स्वाहा।

सर्वोत्कृष्ट सु पुण्य फल तीर्थेश पद पायो महा।
तीर्थेश पद को स्वरुचिवर अव्यय अमर शिवफल लहा॥
यातैं उचित ही है जु तुम पद फूल सों पूजा करूँ॥ इक..॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्त्र गुणसंयुक्ताय फलं निर्व. स्वाहा।

अष्टाङ्ग मूल सु विधि हरो निज अष्ट गुण पायो सही।
अष्टार्द्ध गति संसार मेट सु अचल ह्वै अष्टम मही॥
यातैं उचित ही है जु अठविध अर्घ सों पूजा करूँ॥ इक..॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्त्र गुणसंयुक्ताय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

निर्मल सलिल शुभवास चन्दन धवल अक्षत युत अनी,
शुभ पुष्प मधुकर नित रमैं चरु प्रचुर-स्वाद सुविधि घनी।
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले,
करि अर्घ सिद्धसमूह पूजत कर्म-दल सब दलमले॥1॥
ते क्रमावर्त नशाय युगपत ज्ञान निर्मल रूप हैं,
दुख जन्म टार अपार गुण सूक्षम सरूप अनूप हैं।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज अदूज शिव कमलापती,
मुनि ध्येय सेय अमेय चहुँ गुण गेह द्यो हम शुभमती॥2॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्त्र गुणसंयुक्ताय पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दस सौ चौबीस नाम गुण सहित अर्घ

इन्द्रिय विषय-कषाय हैं, अन्तर शत्रु महान।
तिनको जीतत जिन भये, नमूँ सिद्ध भगवान॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥1॥

रागादिक जीते सु जिन, तिनमें तुम परधान।
तातें नाम जिनेन्द्र हैं, नमूँ सदा धरि ध्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥2॥

रागादिक लवलेश बिन शुद्ध निरञ्जन देव।
पूरण जिनपद तुम विषैं, राजत हो स्वयमेव॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनराजे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥3॥

बाह्य शत्रु उपचरित को, जीतत जिन नहिं होय।
अन्तर शत्रु प्रबल जये, उत्तम जिन है सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनोत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥4॥

इन्द्रादिक पूजत चरन सेवत हैं तिहुँ काल।
गणधरादि श्रुत केवली, जिन आज्ञा निज भाल॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनपृष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥5॥

गणधरादि सत-पुरुष जे, वीतराग निर्ग्रन्थ।
तुमको सेवत जिन भये, साधत हैं शिवपन्थ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधिपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥6॥

एक देश जिन सर्व मुनि, सर्व भाव अरहन्त।
द्रव्य भाव सर्वात्मा, नमूँ सिद्ध भगवन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधीशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥7॥

गणधरादि सेवत चरण, शुद्धातम लवलाय।
तीन लोक स्वामी भये, नमूँ सिद्ध अधिकाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनस्वामिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥8॥

नमत सुरासुर जिन चरन, तीन काल धरि ध्यान।
सिद्ध जिनेश्वर मैं नमूँ, पाऊँ शिवसुख थान॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥9॥

तीन लोक तारण-तरण, तीन लोक विख्यात।
सिद्ध महा जिननाथ हैं, सेवत पाप नशात॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिननाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥10॥

एकदेश श्रावक तथा, सर्वदेश मुनिराज।
तिन-प्रति रक्षक हो महा, सिद्ध सु पुण्यसमाज॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥11॥

त्रिभुवन शिखर-शिरोमणी, राजत सिद्ध अनन्त।
शिवमारग परसिद्ध कर, नमत भवोदधि अन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनप्रभवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥12॥

जिन आज्ञा त्रिभुवन विषैं, वरते सदा अखण्ड।
मिथ्यामति दुरपक्ष को, देत नीति सों दण्ड॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधिराजे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥13॥

तीन लोक परिपूर्ण है, लोकालोक प्रकाश।
राजत है विस्तीर्ण जिन, नमूँ हरो भववास॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनविभवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥14॥

आत्मज्ञ जिन नमत हैं, शुद्धातम के हेत।
स्वामी हो तिहुं लोक के, नमूँ बसें शिवखेत॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनभर्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥15॥

मिथ्यामति को नाश करि, तत्त्वज्ञान परकाश।
दीप्त रूप रवि सम सदा, करो सदा उरवास॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधिभुवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥16॥

कर्मशत्रु जीते सु जिन, तिनके स्वामी सार।
धर्ममार्ग प्रगटात है शुद्ध सुलभ सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं कर्मजिते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥17॥

अव्रत सम्यग्दृष्टि सों, यथाख्यात आचार।
तिन सबके स्वामी नमूँ, पायो शिवपद सार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥18॥

समवसरण आदिक विभव, तिसके तुम परधान।
शुद्धातम शिवपद लहो, नमूँ कर्म की हान॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिननायकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥19॥

सूरज सम तिहुं लोक में, मिथ्या तिमिर निवार।
सहज दिखायो मोक्षमग, मैं वन्दूँ हित धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥20॥

जन्म-मरण दुख जीतिकर, जिन 'जिन' नाम धराय।
नमूँ सिद्ध परमातमा, भव दुख सहज नशाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनजेत्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥21॥

अचल अबाधित पद लहो, निज स्वभाव दृढ़ भाय।
नमूँ सिद्ध कर जोरकर, भाव सहित उर लाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनपरिदृढाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥22॥

सर्व-व्यापि परमातमा, सर्व पूज्य विख्यात।
श्रीजिनदेव नमूँ त्रिविध, सर्व पाप नशि जात॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥23॥

श्रीजिनेश जिनराज हो, निजस्वभाव अनिवार।
पर-निमित्त विनशै सकल, वन्दूँ शिवसुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेशित्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥24॥

परम धर्म दातार हो, तीन लोक सुखदाय।
तीन लोक पालक महा, मैं वन्दूँ शिवराय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनपालकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥25॥

गणधरादि सेवत महा, तुम आज्ञा शिर धार।
अधिक अधिक जिनपद लहो, नमूँ करो भवपार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधिराजाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥26॥

परम धर्म उपदेश कर, प्रगटायो शिवराह।
श्रीजिन निज आनन्द विषै, वर्तै वन्दूँ ताह॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनशासनेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥27॥

पूरण पद पावत निपुण, सब देवन के देव।
मैं पूजूँ नित भाव सों, पाऊँ शिव स्वयमेव॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनदेवाधिदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥28॥

तीन लोक विख्यात हैं, तारण-तरण जिहाज।
तुम सम देव न और हैं, तुम सबके शिरताज॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाद्वितीयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥29॥

तीन लोक पूजत चरन, भाव सहित शिर नाय।
इन्द्रादिक थुति कर थके, मैं वन्दूँ तिस पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥30॥

तुम समान नहिं देव है, भविजन तारन हेत।
चरणाम्बुज सेवत सुभग, पावै शिवसुख खेत॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥31॥

भवि भव-तपकर तप्त हैं, तिनकी विपति निवार।
धर्मामृत कर पोषियो, वरते शशि उनहार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनचन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥32॥

मिथ्यातम कर अन्ध थे, तीन लोक के जीव।
तत्त्व मार्ग प्रगटाइयो, रवि सम दीप्त सदीव॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनादित्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥33॥

बिन कारण तारण–तरण, दीप्त रूप भगवान।
इन्द्रादिक पूजत चरण, करें कर्म की हान॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनदीप्तरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥34॥

जैसे कुञ्जर चक्र के, जाने दल को साज।
चार संघ नायक प्रभु, वन्दूँ सिद्ध समाज॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनकुञ्जराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥35॥

दीप्त रूप तिहुं लोक में, है प्रचण्ड परताप।
भक्तन को नित देत हैं, भोगैं शिवसुख आप॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनार्काय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥36॥

रत्नत्रय मग साध कर, सिद्ध भये भगवान।
पूरण निज सुख धरत हैं, निज में निज परिणाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनधौरेयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥37॥

तीन लोक के नाथ हो, ज्यूँ तारागण सूर्य।
शिवसुख पायो परमपद, वन्दों श्रीजिन धूर्य्य॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनधुर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥38॥

पराधीन बिन परमपद, तुम बिन लहै न और।
उत्तमात्मा मैं नमूँ, तीन लोक शिरमौर॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनोत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥39॥

जहाँ न दुख को लेश है, जहाँ न पर सों काम।
तुम बिन कहूँ न श्रेष्ठता, तीन लोक दुख ठाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनवर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥40॥

पूर्ण रूप निज लक्ष्मी, पाई श्री जिनराज।
परम श्रेय परमातमा, वन्दूँ शिवसुख काज॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनवराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥41॥

निर्भय हो निर आश्रयी, निःसङ्गी निर्बन्ध।
निजसाधन साधक सुगुन, पर सों नहिं सम्बन्ध॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिननिःसङ्गाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥42॥

अन्तराय विधि नाशके, निजानन्द भयो प्राप्त।
सन्त नमैं कर जोर जुग, भव-दुख करो समाप्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनोद्वहाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥43॥

शिवमारग में धरत हो, जग मारग तें काढ़।
धर्मधुरन्धर मैं नमूँ, पाऊँ भव वन वाढ़॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनवृषभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥44॥

धर्मनाथ धर्मेश हो, धर्म तीर्थ करतार।
रहो सुथिर निजधर्म में, मैं वन्दूँ सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनवृषधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥45॥

जगत जीव विधि धूलि सों, लिप्त न लहैं प्रभाव।
रत्नराशि सम तुम दिपो, निर्मल सहज सुभाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनरत्नाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥46॥

तीन लोक के शिखर पर, राजत हो विख्यात।
तुम सम और न जगत में, बड़ा कोई दिखलात॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनोरसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥47॥

इन्द्रिय मन व्यापार बहु, मोह शत्रु को जीत।
लहो जिनेश्वर सिद्धपद, तीन लोक के मीत॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥48॥

चारि घातिया कर्म को, नाश भये जिनराय।
घाति-अघाति विनाश जिन, अग्र भये सुखदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाग्र्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥49॥

निज पौरुष कर साधियो, निज पुरुषारथ सार।
अन्य सहाय नहीं चहैं, सिद्ध सु वीर्य अपार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनशार्दूलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥50॥

इन्द्रादिक नित ध्यावते, तुम सम और न कोय।
तीन लोक चूड़ामणि, नमूँ सिद्ध सुख होय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनपुङ्गवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥51॥

निजानन्द पद को लहो, अवरोधी मल नास।
समकित बिन तिहुं लोक में, और नहीं सुखरास॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनप्रवेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥52॥

जगत शत्रु को जीति के, कल्पित जिन कहलाय।
मोहशत्रु जीते सु जिन, उत्तम सिद्ध सुखाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनहंसाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥53॥

द्रव्य-भाव दोनों नहीं, उत्तम शिव सुख लीन।
मन-वच-तन करि मैं नमूँ, निजसम भविजन कीन॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिन सुख धारकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥54॥

चार संघ नायक प्रभू, शिवमग सुलभ कराय।
तारण-तरण जहान को, मैं वन्दूँ शिवराय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिननायकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥55॥

स्वयंबुद्ध शिवमार्ग में, आप चले अनिवार।
भविजन अग्रेश्वर भये, वन्दूँ भक्ति विचार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाग्रण्यै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥56॥

शिवमारग के चिह्न हो, सुखसागर की पाल।
शिवपुर के तुम हो धनी, धर्म नगर प्रतिपाल॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनग्रामण्यै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥57॥

तुम सम और न जगत में, उत्तम श्रेष्ठ कहाय।
आप तिरें भवि तारते, वन्दूँ तिनके पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनसत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥58॥

स्व-पर कल्याणक हो प्रभू, पञ्चकल्याणक ईश।
श्रीपति शिवशङ्कर नमूँ, चरणाम्बुज धरि शीश॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनप्रभवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥59॥

मोह महाबल दलमलो, विजय लक्ष्मीनाथ।
परम ज्योति शिवपद लहो, चरण नमूँ धरि माथ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥60॥

चहुँ गति दुःख विनाशिया, पूरा निज पुरुषार्थ।
नमूँ सिद्ध कर जोरि कैं, पाऊँ मैं सर्वार्थ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनचतुर्गतिदुःखान्तकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥61॥

जीते कर्म निकृष्ट को, श्रेष्ठ भये जिनदेव।
तुम सम और न जगत में, वन्दूँ मैं तिन भेव॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनश्रेष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥62॥

आप मोक्षमग साधियो, औरन सुलभ कराय।
आदि पुरुष तुम जगत में, धर्म रीत वरताय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनज्येष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥63॥

मुख पुरुषारथ मोक्ष है, साधत सुखिया होय।
मैं वन्दूँ तिन भक्ति करि, सिद्ध कहावे सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनमुख्य नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥64॥

सूरज सम अग्रेश हो, निज-पर-भासनहार।
आप तिरे भवि तारियो, वन्दूँ योग संभार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाग्रिमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥65॥

रागादिक रिपु जीत तुम, श्रीजिन नाम धराय।
सिद्ध भये कर जोरि कें, वन्दूँ तिनके पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥66॥

विषय कषाय न लेश है, दृष्टि ज्ञान परिपूर्ण।
उत्तम जिन शिवपद लियो, नमत कर्म को चूर्ण॥

ॐ ह्रीं अर्हं उत्तमजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥67॥

चहुँ प्रकार के देवता, नित्य नमावत शीश।
तुम देवन के देव हो, नमूँ सिद्ध जगदीश॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनवृन्दारकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥68॥

जो निज सुख होने न दे, साचा रिपु है सोय।
ऐसे रिपु को जीत के, नमूँ सिद्ध जो होय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अरिजिते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥69॥

अविनाशी अविकार हो, अचलरूप विख्यात।
जामें विघ्न न लेश है, नमूँ सिद्ध कहलात॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्विघ्नाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥70॥

राग-दोष मद-मोह अरु, ज्ञानावरण नशाय।
शुद्ध निरञ्जन सिद्ध हैं, वन्दूँ तिनके पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं विरजसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥71॥

मत्सर भाव दुखी करे, निजानन्द को घात।
सो तुम नाशो छिनक में, शम सुखिया कहलात॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरस्तमस्काय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥72॥

परकृत भाव न लेश है, भेद कह्यो नहिं जाय।
वचन अगोचर शुद्ध हैं, सिद्ध महा सुखदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥73॥

रागादिक मल बिन दिपो, शुद्ध सुवर्ण समान।
शुद्ध निरञ्जन पद लियो, नमूँ चरण धरि ध्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरञ्जनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥74॥

द्रव्य भाव दो विधि करम, नाशि भये शिवराय।
वन्दूँ मन वच काय कर, भविजन को सुखदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं कर्मविनाशनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥75॥

ज्ञानावर्णी आदि ले, चार घातिया कर्म।
तिनको अन्त खिपाइके, लियो मोक्षपद पर्म॥

ॐ ह्रीं अर्हं घातिकर्मान्तकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥76॥

ज्ञानावरणी पटल बिन, ज्ञान दीप्त परकाश।
शुद्ध सिद्ध परमातमा, वन्दित भवदुख नाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनदीप्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥77॥

कर्म रुलावे आत्मा, रागादिक उपजाय।
तिनको मर्म विनाशकैं, सिद्ध भये सुखदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं कर्ममर्मभिधे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥78॥

पाप कलाप न लेश है, शुद्धाशुद्ध विख्यात।
मुनिमन मोहन रूप हैं, नमूँ जोरि जुग हाथ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनुदयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥79॥

राग नहीं थुतिकार सों, निन्दक सों नहीं द्वेष।
शम सुखिया आनन्दघन, वन्दूँ सिद्ध हमेश॥

ॐ ह्रीं अर्हं वीतरागाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥80॥

क्षुधावेदनी नाशकर, स्व-सुख भुञ्जनहार।
निजानन्द सन्तुष्ट हैं, वन्दूँ भाव विचार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षुधे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥81॥

एक दृष्टि सबको लखें, इष्ट-अनिष्ट न कोय।
द्वेष अंश व्यापै नहीं, सिद्ध कहावे सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अद्वेषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥82॥

भवसागर के तीर हैं, शिवपुर के हैं राहि।
मिथ्यातम-हर सूर्य हैं, मैं वन्दूँ हूँ ताहि॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्मोहाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥83॥

जगजन में यह दोष है, सुखी-दुखी बहु भेव।
ते सब दोष निवारियो, उत्तम हो स्वयमेव॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्दोषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥84॥

जन्म-मरण यह रोग है, तिनको कठिन इलाज।
परमौषध इस रोग की, वन्दूँ मेटन काज॥

ॐ ह्रीं अर्हं अगदाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥85॥

राग कहो ममता कहो, मोह कर्म सो होय।
सो जिन मोह विनाशियो, नमूँ सिद्ध है सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्ममत्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥86॥

तृष्णा दुख को मूल है, सुखी भये तिस नाश।
मन-वच-तन करि मैं नमूँ, है आनन्दविलास॥

ॐ ह्रीं अर्हं वितृष्णाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥87॥

अन्तर बाह्य निरिच्छ है, एकीरूप अनूप।
निस्पृह परमेश्वर नमूँ, निजानन्द शिवभूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं असङ्गाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥88॥

क्षायिक समकित को धरैं, निर्भय थिरता रूप।
निजानन्द सों नहिं चिगें, मैं वन्दूँ शिवभूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्भयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥89॥

स्वप्न प्रमादी जीव के, अल्प-शक्ति सो होय।
निज बल अतुल महा धरैं, सिद्ध कहावैं सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अस्वप्नाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥90॥

दर्श-ज्ञान-सुख-भोग तैं, खेद न रञ्चक होय।
सो अनन्त बल के धनी, सिद्ध नमामी सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं निःश्रमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥91॥

युगपत सब प्रापत भये, जानत हैं सब भेव।
संशय बिन आश्चर्य नहीं, नमूँ सिद्ध स्वयमेव॥

ॐ ह्रीं अर्हं वीतविस्मयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥92॥

सिद्ध सनातन काल तें, जग में हैं परसिद्ध।
तथा जन्म फिर नहीं धरैं, नमूँ जोर कर सिद्ध॥

ॐ ह्रीं अर्हं अजन्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥93॥

भ्रम बिन ज्ञान प्रकाश में, भासैं जीवाजीव।
संशय बिन निश्चल सुखी, वन्दूँ सिद्ध सदीव॥

ॐ ह्रीं अर्हं निःसंशयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥94॥

तुम पूरण परमातमा, सदा रहो इक सार।
जरा न व्यापै तुम विषैं, नमूँ सिद्ध अविकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्जराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥95॥

तुम पूरण परमातमा, अन्त कभी नहीं होय।
मरण रहित वन्दूँ सदा, देउ अमर पद सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अमराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥96॥

निजानन्द के भोग में, कभी न आरत आय।
यातें तुम अरतीत हो, वन्दूँ सिद्ध सुहाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अरत्यतीताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥97॥

होत नहीं सोचन कभूँ, ज्ञान धरैं परतक्ष।
नमूँ सिद्ध परमात्मा, पाऊँ ज्ञान अलक्ष॥

ॐ ह्रीं अर्हं निश्चिन्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥98॥

जानत हैं सब ज्ञेय को, पर ज्ञेयन तैं भिन्न।
यातें निर्विषयी कहे, लेश न भोगैं अन्य॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्विषयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥99॥

अहङ्कार आदिक त्रिषट्, तुम पद निवसैं नाहिं।
सिद्ध भये परमात्मा, मैं वन्दूँ हूँ ताहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिषष्ठिजिते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥100॥

जेते गुण पर्याय हैं, द्रव्य अनन्त सु काल।
तिनको तुम जानो प्रभू, वन्दूँ मैं नमूँ भाल॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वज्ञाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥101॥

ज्ञान-आरसी तुम विषैं, झलकैं ज्ञेय अनन्त।
सिद्ध भये तिनको नमें, तीनों काल सु सन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वविदे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥102॥

चक्षु अचक्षु न भेद हैं, समदर्शी भगवान।
नमूँ सिद्ध परमात्मा, तीनों जोग प्रधान॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वदर्शिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥103॥

देखन कछु बाकी नहीं, तीनों काल मंझार।
सर्वावलोकी सिद्ध हैं, नमूँ त्रियोग सम्हार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वावलोकनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥104॥

तुम सम प्राक्रम और सब, जगवासी में नाहिं।
निज बल शिवपद साधियो, मैं वन्दूँ हूँ ताहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तविक्रमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥105॥

निजसुख भोगत नहिं चिगें, वीर्य अनन्त धराय।
तुम अनन्त बल के धनी, वन्दूँ मनवचकाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तवीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥106॥

सुखाभास जग जीव के, पर-निमित्त से होय।
निज आश्रय पूरण सुखी, सिद्ध कहावै सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तसुखात्मकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥107॥

निज-सुख में सुख होत है, पर-सुख में सुख नाहिं।
सो तुम निज-सुख के धनी, मैं वन्दूँ हूँ ताहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तसौख्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥108॥

तीन लोक तिहुं काल के, गुण-पर्यय कछु नाहिं।
जाको तुम जानो नहीं, ज्ञान-भानु के माँहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वज्ञाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥109॥

द्रव्य तथा गुण पर्य को, देखै एकी बार।
विश्वदर्श तुम नाम है, वन्दों भक्ति विचार॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वदर्शिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥110॥

सम्पूरण अवलोक तें, दर्शन धरो अपार।
नमूँ सिद्ध कर जोरिके, करो जगत से पार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अखिलार्थदर्शिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥111॥

इन्द्रिय ज्ञान परोक्ष है, क्रमवर्ती कहलाय।
बिन इन्द्रिय प्रत्यक्ष है, धरो ज्ञान सुखदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं निष्पक्ष दर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥112॥

विश्व माँहिं तुम अर्थ सब, देखो एकीबार।
विश्वचक्षु तुम नाम है, वन्दूँ भक्ति विचार॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वचक्षुषे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥113॥

तीन लोक के अर्थ जे, बाकी रहो न शेष।
युगपत तुम सब जानियो, गुण-पर्याय विशेष॥

ॐ ह्रीं अर्हं अशेषविदे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥114॥

पराधीन अरु विघन बिन, है सांचा आनन्द।
सो शिवगति में तुम लियो, मैं वन्दूँ सुखकन्द॥

ॐ ह्रीं अर्हं आनन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥115॥

सत प्रशंसता नित्य है, या सद्भाव सरूप।
सो तुम में आनन्द है, वन्दत हूँ शिवभूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं सदानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥116॥

उदय महा सत्रूप है, जामें असत् न होय।
अन्तराय अरु विघन बिन, सत्य उदै है सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं सदोदयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥117॥

नित्यानन्द महासुखी, हीनाधिक नहिं होय।
नहीं गत्यन्तर रूप हो, शिवगति में है सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं नित्यानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥118॥

जासों परे न और सुख, अहमिन्द्रन में नाहिं।
सोई श्रेष्ठ सुख भोगते मैं वन्दूँ हूँ ताहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं परानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥119॥

पूरण सुख की हद धरैं, सो महान आनन्द।
सो तुम पायो शिव-धनी, वन्दूँ पद अरविन्द॥

ॐ ह्रीं अर्हं महानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥120॥

उत्तम सुख स्वाधीन है, परम नाम कहलाय।
चारों गति में सो नहीं, तुम पायो सुखदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥121॥

जामें विघन न लेश हैं, उदय तेज विज्ञान।
जाको हम जानत नहीं, सुलभरूप विधि ठान॥

ॐ ह्रीं अर्हं परोदयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥122॥

परम शक्ति परमातमा, पर सहाय बिन आप।
स्वयं वीर्य आनन्द के, नमत कटैं सब पाप॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमोजसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥123॥

महातेज के पुञ्ज हो, अविनाशी अविकार।
झलकत ज्ञानाकार सब, दर्पणवत आधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमतेजसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥124॥

परम धाम उत्कृष्ट पद, मोक्ष नाम कहलाय।
जासों फिर आवत नहीं, जन्म-मरण नशि जाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं परंधाम्ने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥125॥

जगगुरु सिद्ध परमात्मा, जगत सूर्य शिव नाम।
परमहंस योगीश हैं, लियो मोक्ष अभिराम॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमहंसाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥126॥

दिव्य ज्योति स्व-ज्ञान में, तीन लोक प्रतिभास।
शङ्का बिन विश्वास कर, निजपर कियो प्रकाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रत्यक्षज्योतिषे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥127॥

निज विज्ञान सु ज्योति में, संशय आदिक नाहिं।
सो तुम सहज प्रकाशियो, मैं वन्दूँ हूँ ताहि॥

ॐ ह्रीं अर्हं परंज्योतिषे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥128॥

शुद्ध-बुद्ध परमातमा, परम ब्रह्म कहलाय।
सर्व-लोक उत्कृष्ट पद, पायो वन्दूँ ताय॥

ॐ ह्रीं अर्हं परंब्रह्मणे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥129॥

चार ज्ञान नहिं जासमें, शुद्ध सरूप अनूप।
परको नाहिं प्रवेश है, एकाकी शिवरूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं परंरहसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥130॥

निज गुण द्रव पर्याय में, भिन्न-भिन्न सब रूप।
एक क्षेत्र अवगाह करि, राजत हैं चिद्रूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रत्याक्षात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥131॥

शुद्ध–बुद्ध परमातमा, निज विज्ञान प्रकाश।
स्वै–आतम के बोधतें, कियो कर्म को नास॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रबुद्धात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥132॥

कर्म मैल से लिप्त है, जगत आत्म दिन–रैन।
कर्म नाश महापद लियो, वन्दूँ हूँ सुख दैन॥

ॐ ह्रीं अर्हं महात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥133॥

आतम को गुण ज्ञान है, यही यथारथ होय।
ज्ञानानन्द ऐश्वर्यता, उदय भयो है सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं आत्ममहोदयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥134॥

दर्श–ज्ञान–सुख वीर्य को, पाय परम पद होय।
सो परमातम तुम भये, नमूँ जोर कर दोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥135॥

मोह कर्म के नाशतैं, शान्त भये सुख देन।
क्षोभ रहित प्रशान्त हो, सन्त नमूँ सुख लेन॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रशान्तात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥136॥

पूरण पद तुम पाइयो, यातैं परे न कोय।
तुम समान नहिं और हैं, वन्दूँ हूँ पद दोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं परात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥137॥

पुद्गल कृत तन छारकैं, निज आतम में वास।
स्व–प्रदेश गृहके विषैं, नित ही करत विलास॥

ॐ ह्रीं अर्हं आत्मनिकेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥138॥

औरन को नित देत हैं, शिवसुख भोगें आप।
परम इष्ट तुम हो सदा, निजसम करत मिलाप॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥139॥

मोक्ष–लक्ष्मी नाथ हो, भक्तन प्रति नित देत।
महा इष्ट कहलात हो, वन्दूँ शिवसुख हेत॥

ॐ ह्रीं अर्हं महित आत्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥140॥

रागादिक मल नाशिकैं, श्रेष्ठ भये जगमाँहिं।
सो उपासना करण को, तुम सम कोई नाहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रेष्ठात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥141॥

पर में ममत विनाशकैं, स्वै आतम थिर धार।
पर-विकल्प संकल्प बिन, तिष्ठो सुख-आधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वात्मनिष्ठिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥142॥

स्वै आतम में मग्न हैं, स्वै आतम लवलीन।
परमें भ्रमण करैं नहीं, सन्त चरण सिर दीन॥

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मनिष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥143॥

तीन लोक के नाथ हो, इन्द्रादिक कर पूज।
तुम सम और महानता, नहिं धारत है दूज॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाज्येष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥144॥

तीन लोक परसिद्ध हो, सिद्ध तुम्हारा नाम।
सर्व सिद्धता ईश हो, पूरो सबके काम॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरूढात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥145॥

स्वै आतम थिरता धरैं, नहीं चलाचल होय।
निश्चल परम सुभाव में, भये प्रकृति को खोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं दृढात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥146॥

क्षयोपशम नानाविधै, क्षायक एक प्रकार।
सो तुममें नहिं और मैं, वन्दूँ भाव लगार॥

ॐ ह्रीं अर्हं एकविद्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥147॥

कर्म पटल के नाशतें, निर्मल ज्ञान उदार।
तुम महान विद्या धरो, वन्दूँ योग संभार॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाविद्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥148॥

परम पूज्य परमेश पद, पूरण ब्रह्म कहाय।
पायो सहज महान पद, वन्दूँ तिनके पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाब्रह्मपदेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥149॥

पञ्च परम-पद पाइयो, ब्रह्म नाम है एक।
पूजूँ मन-वच-काय करि, नाशै विघन अनेक॥

ॐ ह्रीं अर्हं पञ्चब्रह्ममयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥150॥

निज विभूति सर्वस्व तुम, पायो सहज सुभाय।
हीनाधिक बिन विलसते, वन्दूँ ध्यान लगाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं सार्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥151॥

पूरण पण्डित ईश हो, बुद्ध धाम अभिराम।
वन्दूँ मन-वच-काय करि, पाऊँ मोक्ष सुधाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वविद्येश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥152॥

मोह कर्म चकचूरतें, स्वाभाविक शुभ चाल।
शुद्ध परिणाम धरैं सदा, वन्दूँ नित नमि भाल॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुचये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥153॥

ज्ञान-दर्श आवर्ण बिन, दिपो अनन्तानन्त।
सकल ज्ञेय प्रतिभास है, तुम्हें नमैं नित सन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तदीप्त्ये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥154॥

इक-इक गुण प्रतिछेद को, पार न पायो जाय।
सो गुण रास अनन्त हैं, वन्दूँ तिनके पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥155॥

अहमिन्द्रन की शक्ति को, करो अनन्ती रास।
सो तुम शक्ति अनन्त गुण, करै अनन्त प्रकाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तशक्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥156॥

क्षायक दर्शन जोति में, निरावरण परकास।
सो अनन्त दृग तुम धरो, नमैं चरण नित दास॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तदृशे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥157॥

जाकी शक्ति अपार है, हेतु-अहेतु प्रसिद्ध।
गणधरादि जानत नहीं, मैं वन्दूँ नित सिद्ध॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तानन्तधीशक्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥158॥

चेतन शक्ति अनन्त है, निरावरण जो होय।
सो तुम पायी सहज ही, कर्मपुञ्ज को खोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तचिदे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥159॥

जो सुख है निज आश्रये, सो सुख परमें नाहिं।
निजानन्द रसलीन है, मैं वन्दूँ हूँ ताहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तमुदे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥160॥

जाके कर्म लिपै न फिर, दिपै सदा निरधार।
सदा प्रकाश जु सहित हैं, वन्दूँ योग सम्हार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सदाप्रकाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥161॥

निजानन्द के माँहिं हैं, सर्व अर्थ परसिद्ध।
सो तुम पायो सहज ही, नमत मिले नवनिद्ध॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वार्थसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥162॥

अति सूक्षम जे अर्थ हैं, काय अकाय कहाय।
साक्षात् सबको लखो, वन्दूँ तिनके पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं साक्षात्कारिणे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥163॥

सकल गुणनमय द्रव्य हो, शुद्ध सुभाव प्रकाश।
तुम समान नहिं दूसरो, वन्दत पूरै आश॥

ॐ ह्रीं अर्हं समग्रधिये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥164॥

कर्म पुञ्ज को क्षीण कर, जरी जेवरी सार।
सो तुम धूलि उड़ाइयो, वन्दूँ भक्ति विचार॥

ॐ ह्रीं अर्हं कर्मक्षीणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥165॥

चहुँ गति जगत कहात है, ताको करि विध्वंस।
अमर अचल शिवपुर बसैं, भर्म न राखो अंश॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगद्विध्वंसिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥166॥

इन्द्री मन व्यापार में, जाको नहिं अधिकार।
सो अलक्ष आतम प्रभू, होउ सुमति दातार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अलक्ष्यात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥167॥

नहीं चलाचल अचल हैं, नहीं भ्रमण थिर धार।
सो शिवपुर में बसत हैं, वन्दूँ भक्ति विचार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अचलस्थितये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥168॥

परकृत निमित बिगाड़ हैं, सोई दुविधा जान।
सो तुममें नहीं लेश हैं, निराबाध परमाण॥

ॐ ह्रीं अर्हं निराबाधाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥169॥

जैसे हो तुम आदि में, सोई हो तुम अन्त।
एक भांति निवसो सदा, वन्दत हैं नित सन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं अप्रतर्क्यात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥170॥

धर्मनाथ जगदीश हो, सुर-मुनि मानैं आन।
मिथ्यामत नहीं चलत है, तुम आगे परमाण॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मचक्रिणे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥171॥

ज्ञान शक्ति उत्कृष्ट है, धर्म सर्व तिस माँहिं।
श्रेष्ठ ज्ञान तुम पुञ्ज हो, परनिमित्त कछु नाहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं विदांवराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥172॥

निज अभाव से मुक्त हो, कहैं कुवादी लोग।
भूतात्मा सो मुक्त हैं, सो तुम पायो जोग॥

ॐ ह्रीं अर्हं भूतात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥173॥

सहज सुभाव प्रकाशियो, पर निमित्त कछु नाहिं।
सो तुम पायो सुलभ तें, स्व सुभाव के माँहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं सहजज्योतिषे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥174॥

विश्व नाम तिहुँ लोक में, तिस में करत प्रकाश।
विश्व ज्योति कहलात हैं, नमत मोहतम नाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वज्योतिषे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥175॥

फरश आदि पन इन्द्रियाँ, द्वार ज्ञान कछु नाहिं।
यातें अतिइन्द्रिय कहो, जिन सिद्धान्त के माँहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं अतीन्द्रियाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥176॥

एक मात्र असहाय हो, शुद्ध बुद्ध निर अंश।
केवल तुमको धर्म है, नमें चरण नित सन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं केवलिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥177॥

लौकिक जन या लोक में, तुम सारूँ गुण नाहिं।
केवल तुम ही में बसैं, मैं वन्दूँ हूँ ताहि॥

ॐ ह्रीं अर्हं केवलालोकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥178॥

लोक अनन्त कहो सही, तातैं नन्तानन्त।
है अलोक अवलोकियो, तुम्हें नमें नित सन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकालोकविलोकनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥179॥

ज्ञान द्वार निज शक्ति हो, फैलो लोकालोक।
भिन्न-भिन्न सब जानियों, नमूँ चरण दे धोक॥

ॐ ह्रीं अर्हं विविक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥180॥

बिन सहाय निज शक्ति हो, प्रगटो आपो आप।
स्वयंबुद्ध स्वै-सिद्ध हो, नमत नसै सब पाप॥

ॐ ह्रीं अर्हं केवलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥181॥

सूक्षम शुद्ध सुभावतें, मन इन्द्रिय नहिं ज्ञात।
वचन अगोचर गुण धरैं, नमूँ चरन दिन-रात॥

ॐ ह्रीं अर्हं अव्यक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥182॥

कर्म उदय दुख भोगवैं, सर्व जीव संसार।
तिन सबको तुमही शरण, देहो सुक्ख अपार॥

ॐ ह्रीं अर्हं शरण्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥183॥

चितवन में आवै नहीं, पार न पावे कोय।
महाविभव के हो धनी, नमूँ जोर कर दोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अचिन्त्यवैभवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥184॥

छहों काय के वास को, विश्व कहें सब लोक।
तिनके थम्भनहार हो, राज काज के जोग॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वभृते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥185॥

घट-घट में राजो सदा, ज्ञान द्वार सब ठौर।
विश्वरूप जीवात्म हो, तीन लोक सिरमौर॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वरूपात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥186॥

घट-घट में नित-व्याप्त हो, ज्यों घर दीपक जोत।
विश्वनाथ तुम नाम है, पूजत शिव सुख होत॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥187॥

इन्द्रादिक जे विश्वपति, तुम पद पूजैं आन।
यातैं मुखिया हो सही, मैं पूजूँ धरि ध्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वतोमुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥188॥

ज्ञान द्वार सब जगत में, व्याप रहे भगवान।
विश्वव्यापि मुनि कहत हैं, ज्यूँ नभ में शशि भान॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वव्यापिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥189॥

निरावरण निरलेप हैं, तेज रूप विख्यात।
ज्ञान कला पूरण धरैं, मैं वन्दूँ दिन-रात॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंज्योतिषे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥190॥

चितवन में आवैं नहीं, धारैं सुगुण अपार।
मन-वच-काय नमूँ सदा, मिटै सकल संसार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अचिन्त्यात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥191॥

नय प्रमाण को गमन नहीं, स्वयं ज्योति परकास।
अद्भुत गुण पर्याय में, सुख सूँ करै विलास॥

ॐ ह्रीं अर्हं अमितप्रभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥192॥

मती आदि क्रमवर्ति बिन, केवल लक्ष्मीनाथ।
महाबोध तुम नाम है, नमूँ पांय धरि माथ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाबोधाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥193॥

कर्मयोग तें जगत में, जीव शक्ति को नाश।
स्वयं वीर्य अद्भुत धरैं, नमूँ चरण सुखरास॥

ॐ ह्रीं अर्हं महावीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥194॥

छायक लब्धि महान है, ताको लाभ लहाय।
महालाभ यातैं कहैं, वन्दूँ तिनके पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं महालाभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥195॥

ज्ञानावरणादिक पटल, छायो आतम ज्योति।
ताको नाश भये विमल, दीप्त रूप उद्योत॥

ॐ ह्रीं अर्हं महोदयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥196॥

ज्ञानानन्द स्व लक्ष्मी, भोगैं बाधा हीन।
पञ्चम गति में वास है, नमूँ जोग पद लीन॥

ॐ ह्रीं अर्हं महोपभोगसुगतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥197॥

पर निमित्त जामें नहीं, स्व-आनन्द अपार।
सोई परमानन्द हैं, भोगैं निज आधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाभोगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥198॥

दर्श-ज्ञान-सुख भोगते, नेक न बाधा होय।
अतुलवीर्य तुम धरत हो, मैं वन्दूँ हूँ सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अतुलवीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥199॥

शिवस्वरूप आनन्दमय, क्रीड़ा करत विलास।
महादेव कहलात हैं, वन्दत रिपु गण नाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं यज्ञार्हाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥200॥

महाभाग शिवगति लहो, ता सम भान न और।
सोई भगवत हैं प्रभू, नमूँ पदाम्बुज ठौर॥

ॐ ह्रीं अर्हं भगवते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥201॥

तीन लोक के पूज्य हैं, तीन लोक के स्वामि।
कर्म-शत्रु को छय कियो, तातैं अरहत नाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं अर्हते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥202॥

सुरनर पूजत चरण युग, द्रव्य अर्थ युत भाव।
महा-अर्घ तुम नाम है, पूजत कर्म अभाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं महार्घ्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥203॥

शत इन्द्रन करि पूज्य हो, अहमिन्द्रन के ध्येय।
द्रव्य-भाव करि पूज्य हो, पूजक पूज्य अभेय॥

ॐ ह्रीं अर्हं मघवार्चिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥204॥

छहों द्रव्य गुण पर्य को, जानत भेद अनन्त।
महापुरुष त्रिभुवन धनी, पूजत हैं नित सन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं भूतार्थयज्ञपुरुषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥205॥

तुमसों कछु छाना नहीं, तीन लोक का भेद।
दर्पण तल सम भास है, नमत कर्ममल छेद॥

ॐ ह्रीं अर्हं भूतार्थयज्ञाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥206॥

सकल ज्ञेय के ज्ञानतें, हो सबके सिरमौर।
पुरुषोत्तम तुम नाम है, तुम लग सबकी दौर॥

ॐ ह्रीं अर्हं भूतार्थक्रतुपुरुषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥207॥

स्वयंबुद्ध शिवमग चरित, स्वयं शुद्ध अविरुद्ध।
शिवमगचारी नित जजैं, पावैं आतम शुद्ध॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूज्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥208॥

सब देवन के देव हो, तीन लोक के पूज्य।
मिथ्या तिमिर निवारने, सूरज और न दूज॥

ॐ ह्रीं अर्हं भट्टारकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥209॥

सुर-नर-मुनि के पूज्य हो, तुमसे श्रेष्ठ न कोय।
तीन लोक के स्वामि हो, पूजत शिवसुख होय॥

ॐ ह्रीं अर्हं तत्रभवते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥210॥

महापूज्य महामान्य हो, स्वयंबुद्ध अविकार।
मन-वच-तन से ध्यावते, सुर-नर भक्ति विचार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अत्रभवते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥211॥

महाज्ञान केवल कहो, सो दीखे तुम माँहिं।
महा नाम सों पूजिए, संसारी दुख नाहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं महते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥212॥

पूज्यपना नहीं और में, इक तुम ही में जान।
महा अर्ह तुम गुण प्रभू, पूजत हो कल्याण॥
ॐ ह्रीं अर्हं महार्हाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥213 ॥
अचल शिवालय के विषैं, अमित काल रहैं राज।
चिरजीवी कहलात हो, वन्दूँ शिवसुख काज॥
ॐ ह्रीं अर्हं तत्रायुषे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥214 ॥
मरण रहित शिवपद लसै, काल अनन्तानन्त।
दीर्घायू तुम नाम है, वन्दत नित प्रति सन्त॥
ॐ ह्रीं अर्हं दीर्घायुषे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥215 ॥
सकल तत्त्व के अर्थ कहि, निराबाध निरशंस।
धर्म मार्ग प्रगटाइयो, नमत मिटै दुख अंश॥
ॐ ह्रीं अर्हं अर्थवाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥216 ॥
मुनिजन नितप्रति ध्यावतैं, पावैं निज कल्याण।
सज्जन जन आराध्य हो, मैं ध्याऊँ धरि ध्यान॥
ॐ ह्रीं अर्हं आराध्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥217 ॥
शिवसुख जाको ध्यावतैं, पावैं सन्त मुनीन्द्र।
परमाराध्य कहात हो, पायो नाम अतीन्द्र॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमाराध्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥218 ॥
पञ्चकल्याण प्रसिद्ध हैं, गर्भ आदि निर्वाण।
देवन करि पूजित भये, पायो शिव सुख थान॥
ॐ ह्रीं अर्हं पञ्चकल्याणपूजिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥219 ॥
देखो लोकालोक को, हस्त-रेख की सार।
इत्यादिक गुण तुम विषैं, दीखे उदय अपार॥
ॐ ह्रीं अर्हं दर्शनविशुद्धिगुणोदयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥220 ॥
छायक समकित को धरैं, सौधर्मादिक इन्द्र।
तुम पूजन परभावतें, अन्तिम होय जिनेन्द्र॥
ॐ ह्रीं अर्हं सुरार्चिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥221 ॥

निर्विकल्प शुभ चिह्न है, वीतराग सो होय।
सो तुम पायो सहज ही, नमूँ जोर कर दोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुखदात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥222॥

स्वर्ग आदि सुख थान के, हो परकाशन हार।
दीप्त रूप बलवान है, तुम मारग सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं दिव्यौजसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥223॥

गर्भ कल्याणक के विषैं, तुम माता सुखकार।
षट् कुमारिका सेवती, पावें भवदधि पार॥

ॐ ह्रीं अर्हं शचीसेवितमातृकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥224॥

अति उत्तम तुम गर्भ है, भवदुख जन्म निवार।
रत्नराशि दिवलोक तें, बरसे मूसलधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं रत्नगर्भाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥225॥

सुर शोधन तें गर्भ में, दर्पण सम आकार।
यों पवित्र तुम गर्भ हैं, पावैं शिव सुख सार॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपूतगर्भाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥226॥

जाके गर्भागमन तें, पहले उत्सव ठान।
दिव्य नारि मङ्गल सहित, पूजत श्री भगवान॥

ॐ ह्रीं अर्हं गर्भोत्सवोच्छ्रिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥227॥

नित-नित आनन्द उपचरैं, सुर-सुरीय हरषात।
मङ्गल साज समाज सब, उपजावैं दिन-रात॥

ॐ ह्रीं अर्हं नित्योपचारोपचिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥228॥

केवलज्ञान सु लक्ष्मी, धरत महा विस्तार।
चरणकमल सुर-मुनि जजैं, हम पूजत हितधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं पद्मभुवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥229॥

तिहुँ विध विधिमल धोयकर, उज्ज्वल निर्मल होय।
शिव आलय में बसत हैं, शुद्ध सिद्ध हैं सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं निष्कलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥230॥

असंख्यात परदेश में, अन्य प्रदेश न होय।
स्वयं स्वभाव स्वजात हैं, मैं प्रणमामी सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयस्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥231॥

पूज्य यज्ञ आराधना, जो कछु भक्ति प्रमाण।
तुम ही सबके मूल हो, नमत अमङ्गल हान॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वीयजन्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥232॥

सूर्य सुमेरु समान हो, या सुरतरु की ठौर।
महा पुण्य की राशि हो, सिद्ध नमूँ कर जोर॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्याङ्गाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥233॥

ज्यूँ सूरज मध्याह्न में, दिपै अनन्त प्रभाव।
त्यों तुम ज्ञानकला दिपैं, मिथ्या तिमिर अभाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं भास्वते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥234॥

चहुँविध देवन में सदा, तुम सम देव न आन।
निजानन्द में केलिकर, पूजत हूँ धरि ध्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हं अद्भुतदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥235॥

विश्व ज्ञात युगपत धरै, ज्यूँ दर्पण आकार।
स्वपर प्रकाशक हो सही, नमूँ भक्ति उरधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वज्ञातृसम्भृते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥236॥

सत-स्वरूप सत-ज्ञान है, तुम ही पूज्य प्रधान।
पूजत हैं नित विश्वजन, देव मान परमान॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥237॥

सृष्टि को सुख करत हो, हरत दुक्ख भववास।
मोक्ष लक्ष्मी देत हो, जन्म-जरा-मृत नास॥

ॐ ह्रीं अर्हं सृष्टिनिर्वृत्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥238॥

इन्द्र सहस लोचन किये, निरखत रूप अपार।
मोक्ष लहे सो नेम तें, मैं पूजूँ मन धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सहस्त्राक्षदृगुत्सवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥239॥

सम्पूरण निज शक्ति के, है परताप अनन्त।
सो तुम विस्तीरण करो, नमें चरण नित सन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वशक्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥240॥

ऐरावत पर रूढ़ हैं, देव-नृत्यता माँड।
पूजत है सो भक्ति सों, मेटि भवार्णव हाँड॥

ॐ ह्रीं अर्हं दवैरातासीनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥241॥

सुर-नर-चारण-मुनि जजैं, सुलभ गमन आकाश।
परिपूरण हर्षात हैं, पूरै मन की आश॥

ॐ ह्रीं अर्हं हर्षाकुलामरखगचारणर्षिमतोत्सवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥242॥

रक्षक हो षट् काय के, शरणागत प्रतिपाल।
सर्वव्यापि निज ज्ञान तें, पूजत होय निहाल॥

ॐ ह्रीं अर्हं विष्णवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥243॥

महा उच्च आसन प्रभू, है सुमेरु विख्यात।
जन्माभिषेक सुरेन्द्र करि, पूजत मन उमगात॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्नानपीठायिताद्रिसराजे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥244॥

जाकरि तरिये तीर्थ सो, माने मुनिगण मान्य।
तुम सम कौन जु श्रेष्ठ है, असत्यार्थ है आन्य॥

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थसामान्यदुग्धाब्धये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥245॥

लोकस्नान गिलानता, मेटै मैल शरीर।
आतम प्रक्षालित कियो, तुम्हीं ज्ञान सुनीर॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्नानाम्बुस्नातवासवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥246॥

तारण-तरण सुभाव हैं, तीन लोक विख्यात।
ज्यूं सुगन्ध चम्पाकली, गन्ध मई कहलात॥

ॐ ह्रीं अर्हं गन्धाम्बुपूतत्रैलोक्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥247॥

सूक्ष्म तथा स्थूल में, ज्ञान करै परवेश।
जाको तुम जानो नहीं, खाली रहो न देश॥

ॐ ह्रीं अर्हं वज्रसूचये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥248॥

औरन प्रति आनन्द करि, निर्मल शुचि आचार।
आप पवित्र भये प्रभू, कर्म-धूलि को टार॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुचिश्रवसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥249॥

कर्मों करि कृतार्थ हो, कृत फल उत्तम पाय।
कर पर कर राजत प्रभू, वन्दूँ हूँ युग पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं कृतार्थकृतहस्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥250॥

दरसत इन्द्र न अघात हैं, इष्ट मान उर माँहिं।
कर्म नाशि शिवपुर बसे, मैं वन्दूँ हूँ ताहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं शक्रेष्टाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥251॥

मघवा जाके नृत्य करि, ताकै पितृ महान।
सो उनको मैं जजत हूँ, होय कर्म की हान॥

ॐ ह्रीं अर्हं इन्द्रनृत्यन्तपितृकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥252॥

शची इन्द्र अरु काम ये, जिनके दास नु दास।
निश्चय मन में नमन कर, नित वन्दित पद जास॥

ॐ ह्रीं अर्हं शचीविस्मापिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥253॥

जिनके सनमुख नृत्य करि, इन्द्र हर्ष उपजाय।
जन्म सुफल मानैं सदा, हम पर होय सहाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं शक्रारब्धानन्दनृत्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥254॥

धन सुवर्ण तें लोक में, पूरण इच्छा होय।
चक्रवर्ती पद पाइये, तुम पूजत हैं सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं रैदपूर्णमनोरथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥255॥

तुम आज्ञा में हैं सदा, आप मनोरथ मान।
इन्द्र सदा सेवन करैं, पाप विनाशक जान॥

ॐ ह्रीं अर्हं आज्ञार्थीन्द्रकृतासेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥256॥

सब देवन में श्रेष्ठ हो, सब देवन सिरताज।
सब देवन के इष्ट हो, वन्दत सुलभ स्वकाज॥

ॐ ह्रीं अर्हं देवश्रेष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥257॥

तीन लोक में उच्च हो, तीन लोक परशंस।
सो शिवगति पायो प्रभू, जजत कर्म विध्वंस॥

ॐ ह्रीं अर्हं शिवोद्यमानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥258 ॥

जगत्पूज्य शिवनाथ हो, तुम ही द्रव्य विशिष्ट।
हित उपदेशक परमगुरु, मुनिजन माने इष्ट॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्पूज्यशिवनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥259 ॥

मति-श्रुत-अवधि अवर्ण को, नाश कियो स्वयमेव।
केवलज्ञान स्वतः लियो, आप स्वयंभू देव॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंभुवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥260 ॥

समवसरण अद्भुत महा, और लहै नहीं कोय।
धनपति रचो उछाह सों, मैं पूजूँ हूँ सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं कुबेररचितस्थानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥261 ॥

जाको अन्त न हो कभी, ज्ञानलक्ष्मी नाथ।
सोई शिवपुर के धनी, नमूँ भाव धरि माथ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तश्रीयुजे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥262 ॥

गणधरादि नित ध्यावते, पावैं शिवपुर वास।
परम ध्येय तुम नाम है, पूरो मन की आश॥

ॐ ह्रीं अर्हं योगीश्वरार्चिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥263 ॥

परमब्रह्म का लाभ हो, तुम पद पायो सार।
त्रिभुवन ज्ञाता हो सही, नय निश्चय-व्यवहार॥

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मविदे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥264 ॥

सर्वतत्त्व के आदि में, ब्रह्म तत्त्व परधान।
तिसके ज्ञाता हो प्रभु, मैं वन्दूँ धरि ध्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मतत्त्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥265 ॥

द्रव्य भाव द्वै विधि कही, यज्ञ यजन की रीति।
सो सब तुम ही हेत हैं, रचत नशै सब भीति॥

ॐ ह्रीं अर्हं यज्ञपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥266 ॥

महादेव शिवनाथ हो, तुमको पूजत लोक।
मैं पूजूँ हूँ भाव सौं, मेटो मन को शोक॥

ॐ ह्रीं अर्हं शिवनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥267॥

कृत्य भये निज भाव में, सिद्ध भये सब काज।
पायो निज पुरुषार्थ को, वन्दूँ सिद्ध समाज॥

ॐ ह्रीं अर्हं कृतकृत्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥268॥

यज्ञविधान के अङ्ग हो, मुख नामी परधान।
तुम बिन यज्ञ न हो कभी, पूजत हो कल्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हं यज्ञाङ्गाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥269॥

मरण रोग के हरण से, अमर भये हो आप।
शरणागत को अमर कर, अमृत हो निष्पाप॥

ॐ ह्रीं अर्हं अमृताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥270॥

पूजन विधि स्थान हो, पूजत शिवसुख होय।
सुर-नर नित पूजन करैं, मिथ्यामति को खोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं यज्ञाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥271॥

जो हो सो सामान्य कर, धरत विशेष अनेक।
वस्तु सुभाव यही कहो, वन्दूँ सिद्ध प्रत्येक॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्तुत्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥272॥

इन्द्र सदा तुम थुति करैं, मन में भक्ति उपाय।
सर्वशास्त्र में तुम थुति, गणधरादि करि गाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्तुतीश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥273॥

मगन रहो निज तत्त्व में, द्रव्य भाव विधि नाश।
जो है सो है विविध विध, नमूँ अचल अविनाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं भावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥274॥

तीन लोक सिरताज हैं, इन्द्रादि करि पूज।
धर्मनाथ प्रतिपाल जग, और नहीं है दूज॥

ॐ ह्रीं अर्हं महामहपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥275॥

महाभाग सरधान तें, तुम अनुभव करि जीव।
सो पुनि सेवत पाप तज, निजसुख लहैं सदीव॥

ॐ ह्रीं अर्हं महायज्ञाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥276॥

यज्ञ-विधि उपदेश में, तुम अग्रेश्वर जान।
यज्ञ रचावनहार तुम, तुम ही हो यजमान॥

ॐ ह्रीं अर्हं अग्रयाजकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥277॥

तीन लोक के पूज्य हो, भक्तिभाव उर धान।
धर्म-अर्थ अरु मोक्ष के, दाता तुमको जान॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्पूज्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥278॥

दया मोह पर्याय तें, दूर भये स्वतन्त्र।
ब्रह्मज्ञान में लय सदा, जपूँ नाम तुम मन्त्र॥

ॐ ह्रीं अर्हं दयापराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥279॥

तुम ही पूजन योग्य हो, तुम ही हो आराध्य।
महा साधु तुम हेतु तें, साधे हैं निज साध्य॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूज्यार्हाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥280॥

निज पुरुषारथ सधन को, तुमको अर्चत जक्त।
मनवांछित दातार हो, शिव सुख पावै भक्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगदर्च्चिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥281॥

ध्यावत हैं नितप्रति तुम्हें, देव चार परकार।
तुम देवन के देव हो, नमूँ भक्ति उर धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं देवाधिदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥282॥

इन्द्र समान न भक्त हैं, तुम समान नहीं देव।
ध्यावत हैं नित भावसों, मोक्ष लहैं स्वयमेव॥

ॐ ह्रीं अर्हं शक्रार्च्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥283॥

तुम देवन के देव हो, सदा पूजने योग्य।
जे पूजत हैं भावसों, भोगैं शिवसुख भोग॥

ॐ ह्रीं अर्हं देवदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥284॥

तीन लोक सरताज हो, तुम से बड़ा न कोय।
सुर-नर-पशु-खग ध्यावते, दुविधा मन की खोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगद्गुरवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥285॥

जो हो सो हो तुम सही, नहीं समझ में आय।
सुर-नर-मुनि सब ध्यावते, तुम वाणी को पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं देवसंघाचार्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥286॥

ज्ञानानन्द स्वलक्ष्मी, ताके हो भरतार।
स्वसुगन्ध वासित रहो, कमल गन्ध की सार॥

ॐ ह्रीं अर्हं पद्मनन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥287॥

सब कुवाद वादी हते, वज्र शैल उनहार।
विजयध्वजा फहरात हैं, वन्दूँ भक्ति विचार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जयध्वजिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥288॥

दशों दिशा परकाश हैं, तिनकी ज्योति अमन्द।
भविजन कुमुद विकास हो, वन्दूँ पूरणचन्द॥

ॐ ह्रीं अर्हं भामण्डलिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥289॥

चमरन कर भक्ति करैं, देव चार परकार।
यह विभूति तुम ही विषैं, वन्दूँ पाप निवार॥

ॐ ह्रीं अर्हं चतु:षष्टीचामराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥290॥

देव दुन्दुभी शब्द कर, सदा करैं जयकार।
तथा आप परसिद्ध हो, ढोल शब्द उनहार॥

ॐ ह्रीं अर्हं देवदुन्दुभये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥291॥

तुम वाणी सब मनन कर, समझत हैं इकसार।
अक्षरार्थ नहीं भ्रम पड़े, संशय मोह निवार॥

ॐ ह्रीं अर्हं वाङ्स्पष्टाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥292॥

धनपति रचि तुम आसनं, महा प्रभूता जान।
तथा स्व-आसन पाइयो, अचल रहो शिवथान॥

ॐ ह्रीं अर्हं लब्धासनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥293॥

तीन लोक के नाथ हो, तीन छत्र विख्यात।
भव्य-जीव तुम छाँह में, सदा स्व-आनन्द पात॥

ॐ ह्रीं अर्हं छत्रत्रयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥294॥

पुष्पवृष्टि सुर करत हैं, तीनों काल मँझार।
तुम सुगन्ध दशदिश रमी, भविजन भ्रमर निहार॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुष्पवृष्टिये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥295॥

देव रचित अशोक है, वृक्ष महा रमणीक।
समवसरण शोभा प्रभू, शोक निवारण ठीक॥

ॐ ह्रीं अर्हं दिव्याशोकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥296॥

मानस्तम्भ निहार के, कुमतिन मान गलाय।
समवसरण प्रभुता कहै, नमूँ भक्ति उर लाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं मानस्तंभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥297॥

सुरदेवी संगीत कर, गावैं शुभ गुणगान।
भक्ति भाव उर में जगो, वन्दत श्री भगवान॥

ॐ ह्रीं अर्हं संगीतार्हाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥298॥

मङ्गल सूचक चिह्न हैं, कहे अष्ट परकार।
तुम समीप राजत सदा, नमूँ अमङ्गल टार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अष्टमङ्गलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥299॥

भविजन तरिये तीर्थ सो, तुम हो श्रीभगवान।
कोइ न भङ्गे आन जिन, तीर्थचक्र सो जान॥

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थकृते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥300॥

सम्यग्दर्शन धरत हो, निश्चै परमावगाढ़।
संशय आदिक मेटि के, नासो सकल विगाढ़॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुदर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥301॥

कर्त्ता हो शिव काज के, ब्रह्मा जग की रीति।
वर्णाश्रम को थापकें, प्रकटायी शुभ नीति॥

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थकर्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥302॥

सत्य धर्म प्रतिपाल के, पोषत हो संसार।
यति श्रावक दो धर्म के, भये नाथ सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थभर्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।303 ।।

धर्मतीर्थ मुनिराज हैं, तिनके हो तुम स्वामि।
धर्मनाथ तुम जानके, नितप्रति करूँ प्रणाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।304 ।।

लोक तीर्थ में गिनत हैं, धर्मतीर्थ परधान।
सो तुम राजत हो सदा, मैं वन्दूँ धरि ध्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थकराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।305 ।।

तुम बिन धर्म न हो कभी, ढूंड़ो सकल जहान।
दश-लक्षण स्वैधर्म के, तीरथ हो परधान॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मतीर्थनायकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।306 ।।

धर्मतीर्थ करतार हो, श्रावक या मुनिराज।
दोनों विधि उत्तम कहो, स्वर्ग मोक्ष के काज॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मतीर्थङ्कराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।307 ।।

तुमसे धर्म चले सदा, तुम्हीं धर्म के मूल।
सुर-नर-मुनि पूजैं सदा, छिदें कर्म के शूल॥

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थप्रवर्त्तकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।308 ।।

धर्मनाथ जग में प्रगट, तारण-तरण जहाज।
तीन लोक अधिपति कहो, वन्दूँ सुख के काज॥

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थवेधसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।309 ।।

श्रावक या मुनि धर्म के, हो दिखलावनहार।
अन्य लिङ्ग नहीं धर्म के, बुधजन लखो विचार॥

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थविधायकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।310 ।।

स्वर्ग मोक्ष दातार हो, तुम्हीं मार्ग सुखदान।
अन्य कुभेषन में नहीं, धर्म यथारथ ज्ञान॥

ॐ ह्रीं अर्हं सत्यतीर्थकराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।311 ।।

सेवन योग्य सु जगत में, तुम्हीं तीर्थ हो सार।
सुर-नर-मुनि सेवन करैं, मैं वन्दूँ सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थसेव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥312॥

भवि समुद्र भव से तिरैं, सो तुम तीर्थ कहाय।
हो तारण तिहुं लोक के, सेवत हूँ तुम पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थतारकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥313॥

सर्व अर्थ परकाश करि, निर इच्छा तुम बैन।
धर्म सुमार्ग प्रवर्त्त को, तुम राजत हो ऐन॥

ॐ ह्रीं अर्हं सत्यवाक्याधिपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥314॥

धर्म मार्ग परगट करै, सो शासन कहलाय।
सो उपदेशक आप हो, तिस सङ्केत कराय॥

ॐ ह्रीं अर्हं सत्यशासनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥315॥

अतिशय करि सर्वज्ञ हो, ज्ञानावरण विनाश।
नेमरूप भवि सुनत ही, शिवसुख करत प्रकाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं अप्रतिशासनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥316॥

कहैं कथञ्चित धर्म को, स्यात् वचन सुखकार।
सो प्रमाण तें साधियो, नय निश्चय-व्यवहार॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्याद्वादिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥317॥

निर अक्षर वाणी खिरै, दिव्य मेघ की गर्ज्ज।
अक्षरार्थ हो परिणवै, सुन भव्यन मन अर्ज्ज॥

ॐ ह्रीं अर्हं दिव्यध्वनये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥318॥

नय प्रमाण नहीं हतत हैं, तुम परकाशे अर्थ।
शिवसुख के साधन विषैं, नहीं गिने हैं व्यर्थ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अव्याहतार्थवाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥319॥

करै पवित्र स्व आत्मा, अशुभ कर्ममल खोय।
पहुँचावै ऊँची सुगति, तुम दिखलायो सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यवाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥320॥

तत्त्वारथ तुम भासियो, सम्यक् विषैं प्रधान।
मिथ्या जहर निवारणं, अमृत पान समान॥

ॐ ह्रीं अर्हं अर्थ्यवाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥321॥

देव अतिशय सों खिरत ही, अक्षरार्थमय होय।
दिव्यध्वनि निश्चय करै, संशय तम को खोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अर्द्धमागधीयोक्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥322॥

सब जीवन को इष्ट है, मोक्ष निजानन्द वास।
सो तुमने दिखलाईया, संशय मोह विनाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं इष्टवाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥323॥

नय प्रमाण ही कहत हैं, द्रव पर्याय सु भेद।
अनेकान्त साधे सही, वस्तु भेद निरखेद॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनेकान्तदर्शिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥324॥

दुर्नय कहत एकान्त को, ताको अन्त कराय।
सम्यक् मत प्रकटाइयो, पूजूँ तिनके पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं दुर्नयान्तकृते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥325॥

एक पक्ष मिथ्यात्व है, ताको तिमिर निवार।
स्याद्वाद सम न्याय तें, भविजन तारे पार॥

ॐ ह्रीं अर्हं एकान्तध्वान्तभिदे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥326॥

जो है सो निज भाव में, रहै सदा निर्बाध।
मोक्ष साध्य में सार है, सम्यक् विषैं अपार॥

ॐ ह्रीं अर्हं तत्त्ववाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥327॥

निज गुण निज पर्याय में, सदा रहो निर्भेद।
शुद्ध द्रव्य अव्यक्त हो, पूजूँ हूँ निर्खेद॥

ॐ ह्रीं अर्हं पृथक्कृते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥328॥

स्यात्कार उद्योतकर, वस्तु धर्म निरशंस।
तासु ध्वजा निर्विघ्न को, भाषो विधि विध्वंस॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्यात्कारध्वजवाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥329॥

परम्परा इह धर्म को, उपदेशो श्रुत द्वार।
भवि भव सागर-तीर लह, पायो शिव सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं ईहापेतवाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥330॥

द्रव्य दृष्टि नहिं पुरुषकृत, है अनादि परमान।
सो तुम भाष्यो है सही, यह पर्याय सुजान॥

ॐ ह्रीं अर्हं अपौरुषेयवाक्छास्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥331॥

नहीं चलाचल होठ हों, जिस वाणी के होत।
सो मैं वन्दूँ हो किया, मोक्षमार्ग उद्योत॥

ॐ ह्रीं अर्हं अचलौष्ठवाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥332॥

तुम सन्तान अनादि है, शाश्वत नित्य स्वरूप।
तुमको वन्दूँ भाव सों, पाऊँ शिव-सुख कूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥333॥

हीनाधिक वा और विधि, नहिं विरुद्धता जान।
एक रूप सामान्य है, सब ही सुख की खान॥

ॐ ह्रीं अर्हं अविरुद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥334॥

नय विपक्षतें सधत है, सप्त भङ्ग निरबाध।
सो तुम भाषों नमत हूँ, वस्तु रूप को साध॥

ॐ ह्रीं अर्हं सप्तभङ्गिवाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥335॥

अक्षर बिन वाणी खिरे, सर्व अर्थ करि युक्त।
भविजन मति सरधान तें, पावैं जगतें मुक्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं अवर्णगिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥336॥

क्षुद्र तथा अक्षुद्रमय, सब भाषा परकाश।
तुम मुखतें खिरकैं करै, भर्म तिमिर को नाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वभाषामयगिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥337॥

कहने योग्य समर्थ सब, अर्थ करै परकाश।
तुम वाणी मुखतें खिरे, करै भरम-तम नाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं व्यक्तवर्णगिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥338॥

तुम वाणी नहीं व्यर्थ है, भङ्ग कभी नहीं होय।
लगातार मुखतें खिरे, संशय तम को खोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अमोघवाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥339॥

वस्तु अनन्त पर्याय है, वचन अगोचर जान।
तुम दिखलायो सहज ही, हर कुमतन मतवान॥

ॐ ह्रीं अर्हं अवाच्यानन्तवाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥340॥

वचन अगोचर गुण धरो, लहैं न गणधर पार।
तुम महिमा तुमहीं विषैं, मुझ तारो भवपार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अवाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥341॥

तुम सम वचन न कहि सकै, असतमति छद्मस्थ।
धर्म मार्ग प्रकटाइयो, मेटो कुमति समस्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं अद्वैतगिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥342॥

सत्य प्रिय तुम बैन हैं, हित-मित भविजन हेत।
सो मुनिजन तुम ध्यावतैं, पावैं शिवपुर खेत॥

ॐ ह्रीं अर्हं सूनृतगिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥343॥

नहीं सांच नहीं झूठ है, अनुभय वचन कहात।
सो तीर्थङ्कर ध्वनि कही, सत्यारथ सत बात॥

ॐ ह्रीं अर्हं सत्यानुभयगिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥344॥

मिथ्या अर्थ प्रकाश करि, कुगिरा ताको नाम।
सत्यारथ उद्योत कर, सुगिरा तुम अभिराम॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुगिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥345॥

योजन एक चहूँ दिशा, हो वाणी विस्तार।
श्रवण सुनत भविजन लहैं, आनन्द हिये अपार॥

ॐ ह्रीं अर्हं योजनव्यापिगिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥346॥

निर्मल क्षीर समान हैं, गौर श्वेत तुम बैन।
पाप मलिनता रहित हैं, सत्य प्रकाशक ऐन॥

ॐ ह्रीं अर्हं क्षीरगौरगिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥347॥

तीर्थ तत्त्व जो नहीं तजैं, तारण भविजन वान।
यातें तीर्थङ्कर प्रभू, नमत पाप मल हान॥

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थङ्करतत्त्वगिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥348॥

उत्तमार्थ पर्याय करि, आत्मतत्त्व को जान।
सो तुम सत्यारथ कहो, मुनिजन उत्तम मान॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमार्थगवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥349॥

भव्यनि को श्रवणनि सुखद, तुम वाणी सुख देन।
मैं वन्दूँ हूँ भाव सों, धर्म बतायो ऐन॥

ॐ ह्रीं अर्हं भव्यैकश्रव्यगवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥350॥

संशय विभ्रम मोह को, नाश करो निर्मूल।
सत्य वचन परिमाण तुम, छेदत मिथ्या शूल॥

ॐ ह्रीं अर्हं सद्गवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥351॥

तुम वाणी में प्रकट है, सब सामान्य विशेष।
नानाविधि सुन तर्क में, संशय रहै न शेष॥

ॐ ह्रीं अर्हं चित्रगवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥352॥

परम कहै उत्कृष्ट को, अर्थ होय गम्भीर।
सो तुम वाणी में खिरै, वन्दत भवदधि तीर॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमार्थगवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥353॥

मोह-क्षोभ परशान्त हो, तुम वाणी उरधार।
भविजन को सन्तुष्ट कर, भव आताप निवार॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रशान्तगवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥354॥

बारह-सभा सु प्रश्न कर, समाधान करतार।
मिथ्यामत विध्वंस करि, वन्दूँ मन में धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्राश्निकगवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥355॥

महापुरुष महादेव हो, सुर-नर पूजन योग।
वाणी सुन मिथ्यात तज, पावैं शिवसुख भोग॥

ॐ ह्रीं अर्हं याज्यश्रुतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।356 ।।

शिवमग उपदेशै सो सुश्रुत, मन में अर्थ विचार।
साक्षात् उपदेश तुम, तारे भविजन पार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुश्रुते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।357 ।।

तुम समान तिहुँ लोक में, नहीं अर्थ परकाश।
भविजन सम्बोधे सदा, मिथ्यातम को नाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाश्रुतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।358 ।।

जो निजात्म-कल्याण में, वरतै सो उपदेश।
धर्म नाम तिस जानियो, वन्दूँ चरण हमेश॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मश्रुतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।359 ।।

जिनशासन के अधिपति, शिवमारग बतलाय।
वा भविजन सन्तुष्ट कर, वन्दूँ तिनके पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रुतपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।360 ।।

धारक हो उपदेश के, केवलज्ञान संयुक्त।
शिवमारग दिखलात हो, तुमको वन्दन युक्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रुतघृताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।361 ।।

जैसो है तैसो कहो, परम्परा सो रीत।
सत्यारथ उपदेश तैं, धर्म मार्ग की नीत॥

ॐ ह्रीं अर्हं ध्रुवश्रुतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।362 ।।

मोक्ष मार्ग को देखियो, औरन को दिखलाय।
तुम सम हितकारक नहीं, वन्दूँ हूँ तिन पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्वाणमार्गदिशे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।363 ।।

स्वर्ग मोक्ष मारग कहो, यति श्रावक को धर्म।
तुमको वन्दत सुख महा, लहै ब्रह्म पद पर्म॥

ॐ ह्रीं अर्हं मार्गदेशकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।364 ।।

तत्त्व अतत्त्व सु जानियो, तुम सब ही परतक्ष।
निज-आतम सन्तुष्ट हो, देखो लक्ष-अलक्ष॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वमार्गदृशे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।365 ।।

सार तत्त्व वर्णन कियो, अयथार्थ मत नाश।
स्वपर-प्रकाशक हो महा, वन्दूँ तिनको दास॥

ॐ ह्रीं अर्हं सारस्वत-पथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।366 ।।

आप तीर्थ औरन प्रति, सर्व तीर्थ करतार।
उत्तम शिवपुर पहुँचना, यही विशेषण सार॥

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थपरमोत्तमतीर्थकृते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।367 ।।

दृष्टा लोकालोक के, रेखा हस्त समान।
युगपत सबको देखियो, कियो भर्म तम हान॥

ॐ ह्रीं अर्हं दृष्ट्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।368 ।।

जिनवाणी के रसिक हो, तासों रति दिन-रैन।
भोगोपभोग करो सदा, वन्दत हो सुख चैन॥

ॐ ह्रीं अर्हं वाग्मीश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।369 ।।

जो संसार समुद्र से, पार करे सो धर्म।
तुम उपदेश्या धर्म को, नमत मिटै भव भर्म॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मशासकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।370 ।।

धर्म रूप उपदेश है, भवि जीवन हितकार।
मैं वन्दूँ तिनको सदा, करौ भवार्णव पार॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मदेशकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।371 ।।

सब विद्या के ईश हो, पूरण ज्ञान सुजान।
तिनको वन्दूँ भाव से, पाऊँ ज्ञान महान॥

ॐ ह्रीं अर्हं वागीश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।372 ।।

सुमति नार भरतार हो, कुमति कुसौत विडार।
मैं पूजूँ हूँ भाव सों, पाऊँ सुमति सु सार॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रयीनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।373 ।।

धर्म अर्थ अरु मोक्ष के, हो दाता भगवान।
मैं नित-प्रति पायन परूँ, देहु परम कल्याण॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभङ्गीशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।374 ।।

गिरा कहै जिन वचन को, तिसका अन्त सु धर्म।
मोक्ष करै भवि-जनन को, नाशै मिथ्या भर्म॥

ॐ ह्रीं अर्हं गिरांपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥375॥

जाकी सीमा मोक्ष है, पूरण सुख स्थान।
शरणागत को सिद्ध है, नमूँ सिद्ध धर ध्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धाज्ञाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥376॥

नय-प्रमाण सों सिद्ध है, तुम वाणी रवि सार।
मिथ्या तिमिर निवार कैं, करै भव्य जन पार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धवाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥377॥

निज पुरुषारथ साधकैं, सिद्ध भये सुखकार।
मन-वच-तन करि मैं नमूँ, करो जगत से पार॥

ॐ ह्रीं अर्हं आज्ञासिद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥378॥

सिद्ध करै निज अर्थ को, तुम शासन हितकार।
भविजन मानै सरदहै, करै कर्म-रज जार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धैकशासनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥379॥

तीन लोक में सिद्ध है, तुम प्रसिद्ध सिद्धान्त।
अनेकान्त परकाश कर, नाशै मिथ्या ध्वान्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगद्प्रसिद्धसिद्धान्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥380॥

ओंकार यह मन्त्र है, तीन लोक परसिद्ध।
तुम साधक कहलात हो, जपत मिलै नवनिद्ध॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धमन्त्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥381॥

सिद्ध यज्ञ को कहत हो, संशय विभ्रम नाश।
मोक्षमार्ग में ले धरै, निजानन्द परकाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुसिद्धवाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥382॥

मोहरूप मल सों धुली, वाणी कही पवित्र।
भव्य स्वच्छता धारिके, लहै मोक्ष पद तत्र॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुचिवाचिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥383॥

कर्ण विषय में होत ही, करै आत्म-कल्याण।
तुम वाणी शुचिता धरै, नमें सन्त धरि ध्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुचिश्रवसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥384॥

वचन अगोचर पद धरो, कहते पण्डित लोग।
तुम महिमा तुमहीं विषैं, सदा वन्दने योग्य॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरुक्तोक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥385॥

सुर-नर मानें आन सब, तुम आज्ञा सिर धार।
मानों तन्त्र विधान करि, बाँधे एक लगार॥

ॐ ह्रीं अर्हं तन्त्रकृते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥386॥

जाकरि निश्चय कीजिए, वस्तु प्रमेय अपार।
सो तुमसे परगट भयो, न्यायशास्त्र रुचि धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं न्यायशास्त्रकृते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥387॥

गुण अनन्त पर्याय युत, द्रव्य अनन्तानन्त।
युगपत जानो श्रेष्ठयुत, धरो महा सुखवन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाज्येष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥388॥

तुम पद पावै सो महा, तुम गुण पार लहाय।
शिवलक्ष्मी के नाथ हैं, पूजूँ तिनके पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं महानंदाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥389॥

तुम सम कविता जगत में, और न दूजी कोय।
गणधर से श्रुतकारनी, अर्थ लहैं हैं सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं कवीन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥390॥

हित कर्ता षट् काय के, महा इष्ट तुम बैन।
तुमको वन्दूँ भाव सों, मोक्ष महासुख दैन॥

ॐ ह्रीं अर्हं महिष्ठवाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥391॥

मोक्ष दान दातार हो, तुम सम कौन महान।
तीन लोक तुमको जजैं, मन में आनन्द ठान॥

ॐ ह्रीं अर्हं महानन्ददात्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥392॥

द्वादशाङ्ग श्रुत को रचैं, गणधर से कविराज।
तुम आज्ञा शिर धारके, नमूँ निजातम काज॥

ॐ ह्रीं अर्हं कवीश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥393॥

देव महाध्वनि करत हैं, तुम सन्मुख धर भाव।
केवल अतिशय कहत हैं, मैं पूजूँ युत चाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं दुन्दुभीश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥394॥

इन्द्रादिक नित पूजते, भक्ति पूर्व शिर नाय।
त्रिभुवन नाथ कहात हो, हम पूजत नित पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं नाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥395॥

गणी मुनीश फणीशपति, कल्पेन्द्रन के नाथ।
अहमिन्द्रन के नाथ हो, तुमहिं नमूँ धरि माथ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महानाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥396॥

भिन्न-भिन्न देख्यो सकल, लोकालोक अनन्त।
तुम सम दृष्टि न और की, तुमैं नमें नित सन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं परदृष्ट्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥397॥

सब जग के भरतार हो, मुनिगण में परधान।
तुमको पूजैं भाव सों, होत सकल कल्याण॥

ॐ ह्रीं अर्हं पतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥398॥

श्रावक या मुनिराज हो, तुम आज्ञा शिर धार।
वरतैं धर्म पुरुषार्थ में, पूजत हूँ सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वामिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥399॥

धर्म कार्य करता सही, हो ब्रह्मा परमार्थ।
मालिक हो तिहुं लोक के, पूजनीक सत्यार्थ॥

ॐ ह्रीं अर्हं कर्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥400॥

तीन लोक के नाथ हो, शरणागत प्रतिपाल।
चार संघ के अधिपती, पूजूँ हूँ नमि भाल॥

ॐ ह्रीं अर्हं भर्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥401॥

तुम सम और विभव नहीं, धरो चतुष्टय नन्त।
क्यों न करो उद्धार अब, दास कहावै सन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं विभवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥402॥

जामें विघ्न न हो कभी, ऐसी श्रेष्ठ विभूत।
पाई निज पुरुषार्थ कर, पूजत शुभ करतूत॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रभवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥403॥

तुम सम शक्ति न और की, शिवलक्ष्मी को पाय।
भोगै सुख स्वाधीन कर, वन्दूँ जिनके पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अद्वितीयशक्तिधारकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥404॥

तुमसे अधिक न और में, पुरुषारथ कहुँ पाय।
हो अधीश सब जगत के, वन्दूँ तिनके पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अधीश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥405॥

अग्रेश्वर चउ संघ के, शिवनायक सिरमौर।
पूजत हूँ नित भाव सों, शीश दोऊ कर जोर॥

ॐ ह्रीं अर्हं अधीशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥406॥

सहज सुभाव प्रयत्न बिन, तीन लोक आधीश।
शुद्ध सुभाव विराजते, वन्दूँ पद धर शीश॥

ॐ ह्रीं अर्हं अधीशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥407॥

क्षायिक सुमति सुहावनी, बीजभूत तिस जान।
तुमसें शिवमारग चलै, मैं वन्दूँ धरि ध्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हं अधीशित्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥408॥

स्वयंबुद्ध शिवनाथ हो, धर्म तीर्थ करतार।
तुम सम सुमति न को धरै, मैं वन्दूँ निरधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मतीर्थकर्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥409॥

पूरण शक्ति सुभाव धर, पूरण ब्रह्म प्रकाश।
पूरण पद पायो प्रभू, पूजत पाप विनाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं ईशानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥410॥

तुमसे अधिक न और है, त्रिभुवन ईश कहाय।
तीन लोक अत्यन्त सुख, पायो वन्दूँ पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अधिपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥411॥

तीन लोक पूजत चरण, ईश्वर तुमको जान।
मैं पूजों हों भाव सों, सबसे बड़े महान॥

ॐ ह्रीं अर्हं ईश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥412॥

सूरज सम परकाश कर, मिथ्यातम परिहार।
भविजन अम्बुज बोध को, पायो निज हितकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं ईशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥413॥

क्रीड़ा करि शिवमार्ग में, पाय परमपद आप।
आज्ञा भङ्ग न हो कभूँ, वन्दत नाशे पाप॥

ॐ ह्रीं अर्हं इन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥414॥

उत्तम हो तिहुँ लोक में, सबके हो सिरताज।
शरणागत प्रतिपाल हो, पूजूँ आतम काज॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकोत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥415॥

अधिक भूति के हो धनी, सुखी सर्व निरधार।
सुर-नर तुम पद को लहैं, पूजत हूँ सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अधिभुवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥416॥

तीन लोक कल्याणकर, धर्म मार्ग बतलाय।
सब देवन के देव हो, महादेव सुखदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं महेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥417॥

महा ईश महाराज हो, महा प्रताप धराय।
महा जीव पूजें चरण, सब जन शरण सहाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं महेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥418॥

परम कहो उत्कृष्ट को, धर्म तीर्थ वरताय।
परमेश्वर यातें भये, वन्दूँ तिनके पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥419॥

तुम समान कोई नहीं, जग ईश्वर जगनाथ।
महा विभव ऐश्वर्य को, धरो नमूँ निज माथ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महेशानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥420॥

चार प्रकार नमै सदा, देव तुम्हैं शिर नाय।
सब देवन में श्रेष्ठ हो, नमूँ युगल तुम पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अधिदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥421॥

तुम समान नहिं देव अरु, तुम देवन के देव।
यों महान पदवी धरौ, तुम पूजत हूँ एव॥

ॐ ह्रीं अर्हं महादेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥422॥

शिवमारग तुमसे सही, देव पूजने योग।
तुम गुण है सहचारणी, और कुदेव अयोग॥

ॐ ह्रीं अर्हं देवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥423॥

तीन लोक पूजत चरण, तुम आज्ञा शिर धार।
त्रिभुवन ईश्वर हो सही, मैं पूजूँ निरधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभुवनेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥424॥

विश्वपती तुमको नमैं, निज कल्याण विचार।
सर्व विश्व के तुम पती, मैं पूजूँ उर धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥425॥

जगत जीव कल्याण कर, लोकालोक अनन्द।
षट्कायिक आह्लादकर, जिम कुमोदनी चन्द॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वभूतेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥426॥

इन्द्रादिक जे विश्वपति, तुमको पूजत आन।
यातें तुम विश्वेश हो, साँच नमूँ धर ध्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वेशे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥427॥

विश्व बन्ध दृढ़ तोड़के, विश्व शिखर ठहराय।
चरण कमल तल जगत है, यूं सब पूजत पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥428॥

शिवमारग की रीति तुम, वरतायो शुभ योग।
तिहूँ काल तिहुँ लोक में, और कुनीति अयोग॥

ॐ ह्रीं अर्हं अधिराजे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥429॥

लोक तिमिर हर सूर्य हो, तारण लोक जिहाज।
लोक शिखर राजत प्रभू, मैं वन्दूँ हित काज॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥430॥

तीन लोक प्रतीपाल हो, तीन लोक हितकार।
तीन लोक तारण-तरण, तीन लोक सरदार॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥431॥

लोक-पूज्य सुखकार हो, पूजत हैं हित धार।
मैं पूजों नित भाव सों, करो भवार्णव पार॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥432॥

पूजनीक जग में सही, तुम्हैं कहैं सब लोग।
धर्म मार्ग प्रगटित कियो, यातें पूजन योग॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्पतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥433॥

ऊरध अधो सु मध्य है, तीन भाग यह लोक।
तिनमें तुम उत्कृष्ट हो, तुम्हैं देत नित धोक॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रैलोक्यनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥434॥

तुम समान समरथ नहीं, तीन लोक में और।
स्वयं शिवालय राजते, स्वामी हो शिरमौर॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥435॥

जगतनाथ जग ईश हो, जगपति पूजें पांय।
मैं पूजूँ नित भाव युत, तारण-तरण सहाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगन्नाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥436॥

महाभूति इस जगत में, धारत हो निरभङ्ग।
सब विभूति जग जीत कै, पायो सुख सरवङ्ग॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्प्रभवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥437॥

मुनिमन करण पवित्र हो, सब विभाव को नाश।
तुम को अंजुलि जोरकर, नमूँ होत अघ नाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं पवित्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥438॥

मोक्ष रूप परधान हो, ब्रह्म ज्ञान परवीन।
बन्धरहित शिवसुख सहित, नमैं सन्त आधीन॥

ॐ ह्रीं अर्हं पराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥439॥

जामें जन्म-मरण नहीं, लोकोत्तर कियो वास।
अचल सुथिर राजै सदा, निजानन्द परकाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं परतराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥440॥

मोहादिक रिपु जीत के, विजयवन्त कहलाय।
जेत्र नाम प्रसिद्ध है, वन्दूँ तिनके पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जेत्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥441॥

रक्षक हो षट्काय के, कर्म शत्रु क्षयकार।
विजयलक्ष्मी नाथ हो, मैं पूजूँ सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिष्णवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥442॥

करता हो विधि कर्म के, हरता पाप विशेष।
पुण्यपाप सु विभाग कर, भ्रम नहिं राखो शेष॥

ॐ ह्रीं अर्हं कर्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥443॥

स्वानन्द-ज्ञान विनाश बिन, अचल सुथिर रहै राज।
अविनाशी अविकार हो, वन्दूँ निज हित काज॥

ॐ ह्रीं अर्हं अविनश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥444॥

इन्द्रादिक पूजत चरन, महा भक्ति उर धार।
तुम महान ऐश्वर्य को, धारत हो अविकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रभविष्णवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥445॥

गुण समूह गुरुता धरो, महा भाग सुखरूप।
तीन लोक कल्याण कर, पूजूँ हो शिव भूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं भ्राजिष्णवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥446॥

महाविभव को धरत हो, हितकारण मितकार।
धर्म-नाथ परमेश हो, पूजत हूँ सुखकार॥
ॐ ह्रीं अर्हं प्रभूष्णवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥447॥
बिन कारण असहाय हो, स्वयंप्रभा अविरुद्ध।
तुमको वन्दूँ भाव सों, निज आतम कर शुद्ध॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंप्रभवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥448॥
लोकवास को नाशकर, लोक सम्बन्ध निवार।
अचल विराजैं शिवपुरी, पूजत हूँ उर धार॥
ॐ ह्रीं अर्हं लोकजिते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥449॥
विश्व नाम संसार है, जन्म-मरण से होय।
सोई व्याधि विनासियो, जजूँ जोर कर दोय॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वजिते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥450॥
विषय कषाय निवार के, जग सम्बन्ध विनाश।
जनम-मरण बिन ध्रुव लसै, नमूँ ज्ञान प्रकाश॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वविजेत्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥451॥
विश्व-वास तुम जीतियो, विश्व नमावै शीश।
पूजत हैं हम भक्ति सों, जयवन्तो जगदीश॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वजिते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥452॥
इन्द्रादिक जिनको नमें, ते तुम शीश नवाय।
विश्वजीत तुम नाम है, शरणागत सुखदाय॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वजित्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥453॥
तीन लोक की लक्ष्मी, तुम चरणाम्बुज ठौर।
यातैं सब जग जीत के, राजत हो जगमौर॥
ॐ ह्रीं अर्हं जगज्जेत्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥454॥
तीन लोक कल्याण कर, कर्म शत्रु को जीत।
भव्यन प्रति आनन्द कर, मेटत तिनकी भीति॥
ॐ ह्रीं अर्हं जगज्जिष्णवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥455॥

जग जीवन को अन्ध कर, फैलो मिथ्या घोर।
धर्म मार्ग प्रकटाय कर, पहुँचायो शिव ठौर॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगन्नेत्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥456॥

मोहादिक जिन जीतियो, सोई जग जय नाम।
सो तुम पद पायो महा, तुम पद करूँ प्रणाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगज्जयिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥457॥

जो तुम धर्म प्रकट करि, जिय आनन्दित होय।
अग्र भये कल्याण कर, तुम पद प्रणमूँ सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अग्रण्यै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥458॥

रक्षा करि षट् काय की, विषय-कषाय न लेश।
त्रास हरो जमराज के, जयवन्तो गुण शेष॥

ॐ ह्रीं अर्हं दयामूर्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥459॥

सत्य असत्य लखन करै, सोई नेत्र कहाय।
पुद्गल नेत्र न नेत्र हो, साँचे नेत्र सुखाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं नेत्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥460॥

सुर-नर-मुनि तुम ज्ञानतैं, जानैं निज कल्याण।
ईश्वर हो सब जगत के, आनन्द सम्पति खान॥

ॐ ह्रीं अर्हं अधीश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥461॥

धर्म्माभास मनोक्त को, मूल नाशकर दीन।
सत्यमार्ग बतलाइयो, कियो भव्य सुख लीन॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मनायकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥462॥

ऋद्धिन में परसिद्ध है, केवल ऋद्धि महान।
सो तुम पायो सहज ही, योगीश्वर मुनिमान॥

ॐ ह्रीं अर्हं ऋद्धीशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥463॥

जो प्राणी संसार में, तिन सबके हितकार।
आनन्द सों सब नमत हैं, पावैं भवदधि पार॥

ॐ ह्रीं अर्हं भूतनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥464॥

प्राणिन के भरतार हो, दुख टारन सुखकार।
तुम आश्रय कर जीव सब, आनन्द लहैं अपार॥

ॐ ह्रीं अर्हं भूतभर्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥465॥

सत्य धर्म के मार्ग हो, ज्ञान मात्र निरशंश।
तुम ही आश्रय पाय के, रहै न अघ को अंश॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्पात्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥466॥

अतुलवीर्य स्वशक्ति हो, जीते कर्म जरार।
तुम सम बल नहीं और में, होउ सहाय अबार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अतुलबलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥467॥

धर्ममूर्ति धर्मात्मा, धर्म-तीर्थ वरताय।
स्व सुभाव सो धर्म है, पायो सहज उपाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं वृषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥468॥

हिंसा को वर्जित कियो, जे अपराध महान।
परिग्रह अर आरम्भ के, त्यागी श्री भगवान॥

ॐ ह्रीं अर्हं परिग्रहत्यागीजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥469॥

सर्व सिद्ध तुम सुलभकर, पायो स्वयं उपाय।
सांचे हो वश करण को, जग में मन्त्र कराय॥

ॐ ह्रीं अर्हं मन्त्रकृते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥470॥

जितने कछु शुभ चिह्न हैं, दीप्त अनोख स्वरूप।
शुभ लक्षण सोहित अति, सहजे तुम शिवभूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुभलक्षणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥471॥

लोक विषैं तुम मार्ग को, मानत हैं बुधवन्त।
तर्क-हेतु कर ना लिये, यातें माने सन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकाध्यक्षाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥472॥

काहू के वश में नहीं, काहू नमत न शीश।
कठिन रीति धारैं प्रभू, नमूँ सदा जगदीश॥

ॐ ह्रीं अर्हं दुराधर्षाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥473॥

दासनि को प्रतिपाल कर, शरणागत हितकार।
भवि दुखियन को पोष कर, दियो अखै पद सार॥

ॐ ह्रीं अर्हं भव्यबन्धवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥474॥

निराकरण कर कर्म को, सरल सिद्धगति धार।
शिवथल जाय सु वास लहि, धर्मद्रव्य सहकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरस्तकर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥475॥

मुनि ध्यावत पावत सुपद, निकट भव्य धरि ध्यान।
पावें निज कल्याण नित, ध्यान योग तुम मान॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमध्येयजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥476॥

रक्षक हो जग के सदा, धर्म दान दातार।
पोषक हो सब जीव के, वन्दूँ भाव लगार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगततापहराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥477॥

मोह प्रचण्ड बली जयो, अतुल वीर्य भगवान।
शीघ्र गमन करि शिव गये, नमूँ हेत कल्याण॥

ॐ ह्रीं अर्हं मोहारिजिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥478॥

तीन लोक शिरमौर तुम, सब पूजत हरषाय।
परमेश्वर हो जगत के, वन्दूँ हूँ नित पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिजगत्परमेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥479॥

लोकशिखर पर अचल नित, राजत हैं तिहुँ काल।
सर्वोत्तम आसन लियो, लोक शिरोमणि भाल॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वासिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥480॥

विश्वभूति प्राणीन के, ईश्वर हैं भगवान।
सब के शिर पर पग धरैं, सर्व आन तिन मान॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वभूतेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥481॥

मोक्षसम्पदा होत ही, नित अक्षय ऐश्वर्य।
कौन मूढ़ कौड़ी लहै, सर्वोत्तम धन वर्ज॥

ॐ ह्रीं अर्हं विभवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥482॥

त्रिभुवन ईश्वर हो तुम्हीं, और जीव हैं रङ्क।
तुमको तज चह और को, ऐसो को बुध बङ्क॥

ॐ ह्रीं अर्हं भुवनेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥483॥

उत्तोत्तर तिहुँ लोक में, दुर्लभ लब्धि कराय।
तुम पद दुर्लभ कठिन है, महा भाग सों पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिजगद्दुर्लभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥484॥

बढ़वारी परिणाम से, पूर्ण अभ्युदय पाय।
भई अनन्त विशुद्धता, भये विशुद्ध अथाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अभ्युदयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥485॥

तीन लोक मङ्गलकरण, दुखहारण सुखकार।
हम को मङ्गल दो महा, पूजों बारम्बार॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिजगन्मङ्गलोदयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥486॥

आप धर्म के सामने, और धर्म लुप जाय।
धर्मचक्र आयुध धरो, शत्रु नाश तब पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मचक्रायुधाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥487॥

सत्य शक्ति तुम ही सही, सत्य पराक्रम जोर।
है प्रसिद्ध इस जगत में, कर्म शत्रु शिरमौर॥

ॐ ह्रीं अर्हं सद्योजाताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥488॥

मङ्गलमय मङ्गलकरण, तीन लोक विख्यात।
सुमरण ध्यान सु करत ही, सकल पाप नशि जात॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रैलोक्यमङ्गलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥489॥

द्रव्य भाव दऊ वेद बिन, स्वातम रति सुख मान।
पर आलिङ्गन रतिकरण, निरइच्छुक भगवान॥

ॐ ह्रीं अर्हं अवेदाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥490॥

घातरहित स्वै पर दया, निजानन्द रसलीन।
सुख सों अवगाहन करैं, सन्त चरण आधीन॥

ॐ ह्रीं अर्हं अप्रतिघाताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥491॥

निजानन्द स्वदेश में, खण्ड-खण्ड नहिं होय।
पूरण अविनाशी सुखी, पूजत हूँ भ्रम खोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अच्छेद्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥492॥

सिद्ध समान सु शुभ नहीं, और नाम विख्यात।
कभूँ न जग में जन्म फिर, सोई दृढ़ कहलात॥

ॐ ह्रीं अर्हं दृढीयसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥493॥

जन्म-मरण के कष्ट से, सर्व लोक भयवन्त।
ताको नाश अभय करण, तुम्हैं नमें जिय सन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं अभयङ्कराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥494॥

ज्ञानानन्द स्व-लक्ष्मी, भोगत हो निरछेद।
महाभोग यातें भये, हैं स्वाधीन अखेद॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाभोगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥495॥

असाधारण असमान हो, सर्वोत्तम उत्कृष्ट।
परसों भिन्न अखिन्न हो, पायो पद अविनष्ट॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरौपम्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥496॥

दशलक्षण शुभ धर्म के, राज सम्पदा भोग।
नायक हो निज धर्म के, पूजि नमैं तिहुँ योग॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मसाम्राज्यनायकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥497॥

अधिपति स्वामि स्वभाव निज, परकृत भावविडार।
तिहुँ वेद रति मान बिन, सम्पूरन सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रव्यक्तनिर्वेदाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥498॥

यथायोग पद पाइयो, तथायोग सम्पूर्ण।
नमूँ त्रियोग संभारिके, करूँ पापमल चूर्ण॥

ॐ ह्रीं अर्हं योगिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥499॥

सब इन्द्रिय मन रोककें, आरोहण तिस भाव।
श्रेणी उच्च चढ़ाव में, तत्पर अन्त सु पाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं समारोहणतत्पराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥500॥

एकाश्रय निज धर्म में, परसों भिन्न सदीव।
सहज स्वभाव विराजते, सिद्धराज सब जीव॥

ॐ ह्रीं अर्हं सामयिकिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥501॥

राग-द्वेष बिन सहज ही, राजत शुद्ध स्वभाव।
मन विकल्प नहीं भाव में, पूजत हों धरि चाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं सामयिकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥502॥

निजानन्द स्वै-लक्ष्मी, भोगत ग्लानि न होय।
अतुलवीर्य पर भाव तैं, परमादी नहीं सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं निष्प्रमादाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥503॥

है अनादि सन्तान करि, कभी भयो नहीं आदि।
नित्य शिवालय पूर्णता, बसै जगत अघ वादि॥

ॐ ह्रीं अर्हं अप्रतिक्रमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥504॥

पर-पदार्थ नहीं इष्ट हैं, स्व-पद में लवलीन।
विघ्नहरण मङ्गलकरण, तुम पद मस्तक दीन॥

ॐ ह्रीं अर्हं यमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥505॥

नित्य शौच संतोषमय, पर-पदार्थ सों रोक।
निश्चय सम्यक् भावमय, है प्रधान दूँ धोक॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रधाननियमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥506॥

ज्ञान ज्योति स्व धरत हो, निश्चल परम सुठाम।
लोकालोक प्रकाश कर, मैं वन्दूँ सुख धाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वभावपरभासनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥507॥

एक स्थान सुथिर सदा, निश्चय चारितभूप।
शुद्ध उपयोग प्रभावतें, कर्म खिपावन रूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्राणायामचरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥508॥

विषय स्वाद सों हट रहैं, इन्द्री मन थिर होय।
निज आतम लवलीन हैं, शुद्ध कहावै सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धप्रत्याहाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥509॥

इन्द्री विषय न वश रहो, स्वै आतम लवलाय।
सो जिनेन्द्र स्वाधीन हैं, वन्दूँ तिनके पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जितेन्द्रियाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥510॥

ध्यान विशेष सु धारणा, निज आतम थिर धार।
ताके अधिपति हो महा, भये भवार्णव पार॥

ॐ ह्रीं अर्हं धारणाधीश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥511॥

रागादिक मल नाशिके, ध्यान स्वधर्म लहाय।
अचल रूप राजै सदा, वन्दूँ मन-वच-काय॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मध्याननिष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥512॥

निजानन्द में मगन हैं, पर पद राग निवार।
समदृष्टी राजत सदा, हमें करो भव पार॥

ॐ ह्रीं अर्हं समाधिराजे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥513॥

वीतराग निर्विकल्प है, ज्ञान उदय निरशंस।
समरसभाव परम सुखी, नमत मिटैं दुख अंश॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्फुरत्समरसीभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥514॥

एकै रूप विराजते, नय विकल्प नहिं ठौर।
वचन अगोचर शुद्धता, पाप विनाशो मोर॥

ॐ ह्रीं अर्हं एकीभावनयरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥515॥

परम दिगम्बर मुनि महा, समदृष्टी मुनिनाथ।
ध्यावै पावै परम पद, नमूँ जोर जुग हाथ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्ग्रन्थनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥516॥

योग साध योगी भये, तिनके इन्द्र महान।
ध्यावत पावत परम पद, पूजत निज कल्याण॥

ॐ ह्रीं अर्हं योगीन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥517॥

शिवमारग सिद्धान्त के, पार भये मुनि ईश।
तारण-तरण जहाज हो, तुम्हें नमूँ नित शीश॥

ॐ ह्रीं अर्हं ऋषये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥518॥

निज स्वरूप को साधकर, साधु भये जग माँहिं।
निज पर हितकर गुण धरैं, तीन लोक नमि ताहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं साधवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥519॥

रागादिक रिपु जीत के, भये यती शुभ नाम।
धर्म धुरन्धर परम गुरु, जुगपद करूँ प्रणाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं यतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥520॥

पर सम्पति सूं विमुख हो, निजपद रुचि करि नेम।
मुनिमन रञ्जन पद महा, तुम धारत हो एम॥

ॐ ह्रीं अर्हं मुनये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥521॥

महा-श्रेष्ठ मुनिराज हो, स्वैपद पायो सार।
महा परम निर्ग्रन्थ हो, पूजत हूँ मन धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं महर्षये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥522॥

साधु भार दुरगमन है, ताहि उठावन हार।
शिव-मन्दिर पहुँचात हो, महाबली सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं साधुधौरेयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥523॥

इन्द्री मन जित जे जती, तिनके हो तुम नाथ।
परम्परा मरजाद धर, देहु हमें निज साथ॥

ॐ ह्रीं अर्हं यतिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥524॥

चार संघ मुनिराज के, ईश्वर हो परधान।
पर हितकर सामर्थ्य हो, निज सम कर भगवान॥

ॐ ह्रीं अर्हं मुनीश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥525॥

गणधरादि सेवक जहाँ, तिन आज्ञा शिरधार।
समकित ज्ञान स्व लक्ष्मी, पावत हैं निरधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं महामुनये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥526॥

महामुनि सर्वस्व हो, धर्म मूर्ति सर्वाङ्ग।
तिनको वन्दूँ भाव युत, पाऊँ मैं धर्माङ्ग॥

ॐ ह्रीं अर्हं महामौनिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥527॥

इष्टानिष्ट विभाव बिन, समदृष्टी स्व ध्यान।
मगन रहें निज पद विषैं, ध्यान रूप भगवान॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाध्यानिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥528॥

स्व सुभाव नहीं त्याग है, नहीं ग्रहण पर माँहिं।
पाप कलाप न आप में, परम शुद्ध नमूँ ताहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाव्रतिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥529॥

क्रोध प्रकृति विनाश के, धरैं क्षमा निज भाव।
समरस स्वाद सु लहत हैं, वन्दूँ शुद्ध स्वभाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाक्षमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥530॥

मोहरूप सन्ताप बिन, शीतल महा स्वभाव।
पूरण सुख आकुल नहीं, वन्दूँ मन धर चाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाशीतलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥531॥

मन इन्द्रिय के क्षोभ बिन, महाशान्ति सुखरूप।
स्वै पद रमण स्वभाव नित, मैं वन्दूँ शिव भूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाशान्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥532॥

मन इन्द्रिय को दमन कर, पायो ज्ञान अतीन्द्र।
स्वाभाविक स्वैशक्ति कर, वन्दूँ भये जितेन्द्र॥

ॐ ह्रीं अर्हं महादमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥533॥

पर पदार्थ को क्लेश तज, व्यापैं निजपद माँहिं।
स्वच्छ स्वभाव विराजते, पूजत हूँ नित ताहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्लेपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥534॥

संशयादि दृष्टि नहीं, सम्यग्ज्ञान मँझार।
सब पदार्थ प्रत्यक्ष लख, महातुष्ट सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्भ्रान्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥535॥

शान्त रूप निज शान्त गुण, सो तुमही में पाय।
निज मन शान्त सुभाव धर, पूजत हूँ युग पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रशान्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥536॥

मुनि श्रावक द्वै धर्म के, तुम अधिपति शिवनाथ।
भविजन को आनन्द करि, तुम्हैं नवाऊं माथ॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्माध्यक्षाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥537॥

दया नीति वरताइयो, सुखी किये जगजीव।
कल्पित राग ग्रसत नहीं, जानत मार्ग सदीव॥

ॐ ह्रीं अर्हं दयाध्वजाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥538॥

केवल ब्रह्म स्वरूप हो, अन्तर-बाह्य अदेह।
ज्ञान ज्योति घन नमत हूँ, मन-वच-तन धरि नेह॥

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मयोनये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥539॥

स्वयंबुद्ध अविरुद्ध हो, स्वयं ज्ञान परकाश।
स्वैपर भाव दिखात हो, दीपक सम प्रतिभास॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंबुद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥540॥

रागादिक मल नाशियो, महा पवित्र सुखाय।
शुद्ध स्वभाव धरैं करैं, सुर-नर थुति न अघाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूतात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥541॥

वीतराग-श्रद्धानता, सम्पूरण वैराग।
द्वेषरहित शुभगुण सहित, रहूँ सदा पगलाग॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्नातकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥542॥

माया मद आदिक हरे, भये शुद्ध सुख खान।
निर्मल भाव थकी जजूँ, होत पाप की हान॥

ॐ ह्रीं अर्हं अमदभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥543॥

अतुल वीर्य श्री ज्ञान में, सूर्य समान प्रकाश।
मोक्षनाथ स्व धर्म जुत, स्व-ऐश्वर्य विलास॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमैश्वर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥544॥

मत्सर क्रोध व ईर्ष्या, पर में द्वेष सुभाव।
सो तुम नाशो सहज ही, निन्दित दुखित विभाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं वीतमत्सराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥545॥

धरम भार सिर धारकर, समाधान परकाज।
तुम सम श्रेष्ठ न धर्म अरु, तारण-तरण जिहाज॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥546॥

क्रोध कर्म जड़ से नसो, भयो क्षोभ सब दूर।
महाशान्त सुखरूप हो, पूजत सब अघ चूर॥

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षोभ्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥547॥

इष्टमिष्ट बादरझरी, विद्युत विधि कर खण्ड।
जिष्णु महाकल्याण कर, शिवमग भाग प्रचण्ड॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाविधिखण्डाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥548॥

अमृतमय तुम जन्म है, लोक तुष्टताकार।
जन्मकल्याणक इन्द्र कर, क्षीर नीर कर धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अमृतोद्भवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥549॥

इन्द्री विषय सुविषहरण, काम पिशाच विडार।
मूर्तीक शुभ मन्त्र हो, देव जजैं हित धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं मन्त्रमूर्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥550॥

सौम्य दशा प्रकटी घनी, जाति विरोधी जीव।
बैर छाँड़ समभाव धर, सेवत चरण सदीव॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्वैरसौम्यभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥551॥

पराधीन इन्द्री बिना, राग-विरोध निवार।
हो स्वाधीन न कर्ण पर, स्वयं सिद्ध सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वतन्त्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥552॥

ब्रह्म रूप नहिं बाह्य तन, सम्भव ज्ञान स्वरूप।
स्वयं प्रकाश विलास धर, राजत अमल अनूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मसम्भवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥553॥

आनन्दधार सु मगन है, सब विकल्प दुख टार।
पर आश्रित नहिं भाव हैं, पूजूँ आनन्द धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुप्रसन्नाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥554॥

परिपूरण गुण सीम है, सर्व शक्ति भण्डार।
तुम से सुगुण न शेष हैं, जो न होय सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं गुणाम्बुधये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥555॥

ग्रहण-त्याग को भाव तज, शुभ वा अशुभ अभेद।
व्याधिकार है वस्तु में, तुम्हें नमूँ निरखेद॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यापुण्यनिरोधकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥556॥

सूक्षम रूप अलक्ष हैं, गणधर आदि अगम्य।
आप गुप्त परमातमा, इन्द्रिय द्वार अरम्य॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुसंवृताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥557॥

अन्तरगूढ स्व-आत्मरस, ताको पान करात।
पर प्रवेश नहीं रंच है, केवल मग्न स्वजात॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुगुप्तात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥558॥

स्वै कारक स्वै कर्णकर, स्वै पद स्वै आधार।
सिद्ध कियो स्वै रस लियो, पूजत हूँ हितकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥559॥

नित्य उदै बिन अस्त हो, पूरण दुति घन आप।
ग्रहै न राहू जास शशि, सो हो हर सन्ताप॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरुपप्लवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥560॥

लियो अपूरव लाभ को, अचल भये सुखधाम।
पूज रचैं जे भाव सों, पूरण हो सब काम॥

ॐ ह्रीं अर्हं महोदर्काय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥561॥

है प्रशंस तिहुँ लोक में, तुम पुरुषार्थ उपाय।
पायो धर्म सुधाम को, पूजों तिनके पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं महोपायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥562॥

गणधरादि जे जगतपितु, तथा सुरेन्द्र सुरीश।
तुमको पूजत भक्ति करि, चरण धरैं निज शीश॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगदेकपितामहाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥563॥

तुम ही सों भवि सुख लहै, तुम बिन दुख ही पाय।
नेमरूप यह हेतु है, महानाम हम गाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाकारणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥564॥

महा सुगुण की रास हो, राजत हो गुणरूप।
लौकिक गुण औगुण सही, सब ही द्वेष सरूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥565॥

जन्म-मरण आदिक महा, क्लेश ताहि निरवार।
परम सुखी तुमको नमूँ, पाऊँ भवदधि पार॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाक्लेशांकुशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥566॥

रागादिक नहीं भाव है, द्रव्य देह नहीं धार।
दोउ मलिनता छाँड़ि के, स्वच्छ भये निरधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुचये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥567॥

आधि व्याधि नहीं रोग हैं, नित प्रसन्न निज भाव।
आकुलता बिन शान्ति-सुख, धारत सहज सुभाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं अरुजे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥568॥

यथायोग्य पद थिर सदा, तथायोग्य निज लीन।
अविनाशी अविकार हैं, नमैं सन्त नित दीन॥

ॐ ह्रीं अर्हं सदायोगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥569॥

स्वामृत रस को पान करि, भोगत हैं निज स्वाद।
पर निमित्त चाहैं नहीं, करैं न तिनको याद॥

ॐ ह्रीं अर्हं सदाभोगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥570॥

निर उपाधि निज धर्म में, सदा रहैं सुखकार।
रत्नत्रय की मूरती, अनागार-आगार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सदाधृतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥571॥

राग-द्वेष नहिं मूल है, है मध्यस्थ स्वभाव।
ज्ञाता दृष्टा जगत के, पर सों नहीं लगाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमौदासीनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥572॥

आदि अन्त बिन बहत है, परम धाम निरधार।
अन्तर परत न एक छिन, निज सुख परमाधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥573॥

मूल देह आकृति रहे, हो नहिं अन्य प्रकार।
सत्यासन इम नाम है, पूजूँ भक्ति लगार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सत्यासनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥574॥

परम शान्ति सुखमय सदा, क्षोभ रहित तिस स्वामि।
तीन लोक प्रति शान्तिकर, तुम पद करूँ प्रणाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं शान्तनायकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥575॥

काल अनन्तानन्त करि, रुल्यो जीव जग माँहिं।
आत्मज्ञान नहीं पाइयो, तुम पायो है ताहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं अपूर्वविद्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥576॥

यथाख्यात चारित्र को, जानो मानो भेद।
आत्मज्ञान केवल थकी, पायो पद निरभेद॥

ॐ ह्रीं अर्हं योगज्ञाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥577॥

धर्मरूप सर्वस्व हो, राजत शुद्ध स्वभाव।
धर्ममूर्ति तुमको नमूँ, पाऊँ मोक्ष उपाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्ममूर्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥578॥

स्वै-आतम परदेश में, अन्य मिलाप न होय।
आकृति है निजधर्म की, निज विभाव को खोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मदेहाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥579॥

स्वामी हो निज-आत्म के, अन्य सहाय न पाय।
स्वयं-सिद्ध परमातमा, हम पर होउ सहाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥580॥

निज पुरुषारथ करि लियो, मोक्ष परम सुखकार।
करना था सो करि चुके, तिष्ठो सुख आधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं कृतकृत्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥581॥

असाधारण गुण धरत हो, इन्द्रादिक नहीं पाय।
लोकोत्तम बहुमान्य हो, वन्दूँ हूँ युग-पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं गुणाकराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥582॥

तुम गुण परम प्रकाशकर, तीन लोक विख्यात।
सूर्य समान प्रताप धर, निरावरण उघरात॥

ॐ ह्रीं अर्हं गुणोच्छेदिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥583॥

समय मात्र नहिं आदि हैं, बहैं अनादि अनन्त।
तुम प्रवाह इस जगत में, तुम्हैं नमैं नित सन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्निमेषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥584॥

योग द्वार बिन करम रज, चढ़ै न निज परदेश।
ज्यों बिन छिद्र न जल गहै, नवका शुद्ध हमेश॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरास्रवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥585॥

परम ब्रह्म पद पाइयो, पूरण ज्ञान प्रकाश।
तीन लोक के जीव सब, पूजें चरण निवास॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाब्रह्मपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥586॥

द्रव्य पर्यार्थिक नय दउ, साधत वस्तु स्वरूप।
गुण अनन्त अविरोधकर, कहत सरूप अनूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुनयतत्त्वज्ञाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥587॥

सूर्य समान प्रकाश कर, कर्म दुष्ट हनि सूर।
शरण गही तुम चरण की, करो ज्ञान दुति पूरि॥

ॐ ह्रीं अर्हं सूरये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥588॥

तुम सम और न जगत में, सत्यारथ तत्त्वज्ञ।
सम्यग्ज्ञान प्रभाव तें, हो अदोष सर्वज्ञ॥

ॐ ह्रीं अर्हं तत्त्वज्ञाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥589॥

तीन लोक हितकार हो, शरणागत प्रतिपाल।
भव्यनि मन आनन्द करि, वन्दूँ दीनदयाल॥

ॐ ह्रीं अर्हं महामैत्रीमयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥590॥

समता सुख में मगन हैं, राग-द्वेष संक्लेश।
ताको नाश सुखी भये, युग-युग जयो जिनेश॥

ॐ ह्रीं अर्हं साम्यभावधारकजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥591॥

निरावरण निज ज्ञान में, संशय विभ्रम नाह।
सम्यग्ज्ञान प्रकाशतें, वस्तु प्रमाण दिखाह॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रक्षीणबन्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥592॥

एक रूप परकाश कर, दुविधि भाव विनशाय।
पर निमित्त लवलेश नहीं, वन्दूँ तिनके पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्द्वन्द्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥593॥

मुनि विशेष स्नातक कहें, परमातम परमेश।
तुम ध्यावत निर्वाण पद, पावें भविक हमेश॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्नातकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥594॥

पञ्च प्रकार शरीर बिन, दीप्त रूप निजरूप।
सुर-मुनिमन रमणीय हैं, पूजत हूँ शिवभूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनङ्गाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥595॥

द्वय प्रकार बन्धन रहित, नित हो मोक्ष सरूप।
भविजन बन्ध विनाश कर, देहो मोक्ष अनूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्वाणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥596॥

सुगुण रत्न की राश के, आप महा भण्डार।
अगम अथाह विराजते, वन्दूँ भाव विचार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सागराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥597॥

मुनिजन ध्यावें भावयुत, महा मोक्षपद साध।
सिद्ध भये मैं नमत हूँ, चहूँ संघ आराध॥

ॐ ह्रीं अर्हं महासाधवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥598॥

ज्ञान ज्योति प्रतिभास में, रागादिक मल नाह।
विशद अनूपम लसत हो, दीप्त ज्योति शिवराह॥

ॐ ह्रीं अर्हं विमलाभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥599॥

द्रव्य-भाव मल नाशकर, शुद्ध निरञ्जन देव।
निज-आतम में रमत हो, आश्रय बिन स्वयमेव॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धाभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥600॥

शुद्ध अनन्त चतुष्ट गुण, धरत तथा शिवनाथ।
श्रीधर नाम कहात हो, हरि-हर नावत माथ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीधराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥601॥

मरणादिक भय से सदा, रक्षित हैं भगवान।
स्वयं प्रकाश विलास में, राजत सुख की खान॥

ॐ ह्रीं अर्हं दत्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥602॥

राग-द्वेष नहीं भाव में, शुद्ध-निरञ्जन आप।
ज्यों के त्यों तुम थिर रहो, तनक न व्यापै पाप॥

ॐ ह्रीं अर्हं अमलाभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥603॥

भवसागर से पार हो, पहुँचे शिव-पद तीर।
भावसहित तिन नमत हूँ, लहूँ न पुनि भवपीर॥

ॐ ह्रीं अर्हं उद्धराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥603॥

अग्निदेव या अग्नि दिश, ताके देव विशेष।
ध्यावत हैं तुम चरणयुग, इन्द्रादिक सुर शेष॥

ॐ ह्रीं अर्हं अग्निदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥605॥

विषय-कषाय न रंच हैं, निरावरण निरमोहि।
इन्द्री मन को दमन कर, वन्दूँ सुन्दर सोहि॥

ॐ ह्रीं अर्हं संयमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥606॥

मोक्षरूप कल्याण कर, सुख-सागर के पार।
महादेव स्वशक्ति धर, विद्या तिय भरतार॥

ॐ ह्रीं अर्हं शिवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥607॥

पुष्प भेंट धर जजत सुर, निज कर अञ्जलि जोड़।
कमलापति कर-कमल में, धरै लक्ष्मी होड़॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुष्पाञ्जलये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥608॥

पूरण ज्ञानानन्दमय, अजर–अमर–अमलान।
अविनाशी ध्रुव निखिल पद, अविकारी सब मान॥

ॐ ह्रीं अर्हं शिवगणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥609॥

रोग शोक भय आदि बिन, राजत निज आनन्द।
खेद रहित रति–अरति बिन, विकसत पूरणचन्द॥

ॐ ह्रीं अर्हं उत्साहाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥610॥

जो गुण शक्ति अनन्त है, ते सब ज्ञान मँझार।
एक मिष्ट आकृति विविध, सोहत हैं अविकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥611॥

परम पूज्य परधान हैं, परम शक्ति आधार।
परम पुरुष परमातमा, परमेश्वर सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥612॥

दोष अकोष अरोष हो, सम सन्तोष अलोष।
पञ्च परम पद धारियत, भविजन को परिपोष॥

ॐ ह्रीं अर्हं विमलेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥613॥

पञ्च कल्याणक युक्त हैं, समवसरण ले आद।
इन्द्रादिक नित करत हैं, तुम गुणगण अनुवाद॥

ॐ ह्रीं अर्हं यशोधराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥614॥

कृष्ण नाम तीर्थेश हैं, भावी काल कहाय।
सुमति गोपियन संग रमत, निजलीला दर्शाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं कृष्णाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥615॥

सम्यग्ज्ञान जु सुमतिधर, मिथ्या मोह निवार।
पर हितकर उपदेश है, निश्चय वा व्यवहार॥

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानमतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥616॥

वीतराग सर्वज्ञ हैं, उपदेशक हितकार।
सत्यारथ परमाण कर, अन्य सुमति दातार॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धमतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥617॥

मायाचार न शल्य है, शुद्ध सरल परिणाम।
ज्ञानानन्द स्वलक्ष्मी, भोगत हैं अभिराम॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीभद्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥618॥

शील स्वभाव सुजन्म लै, अन्त समय निरवाण।
भविजन आनन्दकार है, सर्व कलुषता हान॥

ॐ ह्रीं अर्हं शान्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥619॥

धर्म रूप अवतार हो, लोक पाप को भार।
मृतक स्थल पहुँचाइयो, सुलभ कियो सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं वृषभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥620॥

अन्तर बाहिर शत्रु को, निमिष परै नहिं जोर।
विजय लक्ष्मी नाथ हो, पूजूँ द्वय कर जोर॥

ॐ ह्रीं अर्हं अजिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥621॥

तीन लोक आनन्द हो, श्रेष्ठ जन्म तुम होत।
स्वर्ग-मोक्ष दातार हो, पावत नहीं कुमोत॥

ॐ ह्रीं अर्हं सम्भवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥622॥

परम सुखी तुम आप हो, पर आनन्द कराय।
तुमको पूजत भाव सों, मोक्ष लक्ष्मी पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अभिनन्दनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥623॥

सब कुवादि एकान्त को, नाश कियो छिन माँहिं।
भविजन मन संशयहरण, और लोक में नाहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुमतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥624॥

भविजन मधुकर कमल हो, धरत सुगन्ध अपार।
तीन लोक में विस्तरी, सुयश नाम की धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं पद्मप्रभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥625॥

पारस लोहा हेम कर, तुम भव बन्ध निवार।
मोक्ष हेतु तुम श्रेष्ठ गुण, धारत हो हितकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुपार्श्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥626॥

तीन लोक आताप हर, मुनि–मन–मोदन चन्द।
लोकप्रिय अवतार हो, पाऊँ सुख तुम वन्द॥

ॐ ह्रीं अर्हं चन्द्रप्रभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥627॥

मनमोहन सोहन महा, धारैं रूप अनूप।
दरशत मन आनन्द हो, पायो निज रस कूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुष्पदन्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥628॥

भव–भव दाह निवार कर, शीतल भये जिनेश।
मानो अमृत सींचियो, पूजत सदा सुरेश॥

ॐ ह्रीं अर्हं शीतलनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥629॥

तीर्थङ्कर श्रेयांस हम, देहो श्री शुभ भाग।
श्री सु अनन्त चतुष्ट हो, हरो सकल दुरभाग॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रेयोनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥630॥

त्रस नाड़ी या लोक में, तुम ही पूज्य प्रधान।
तुमको पूजत भाव सों, पाऊँ सुख निरवाण॥

ॐ ह्रीं अर्हं वासुपूज्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥631॥

द्रव्य–भाव मल रहित हैं, महामुनिन के नाथ।
इन्द्रादिक पूजत सदा, नमूँ पदाम्बुज माथ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विमलनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥632॥

जाको पार न पाइयो, गणधर और सुरेश।
थकित रहैं असमर्थ करि प्रणमें सन्त हमेश॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥633॥

अनागार–आगार के, उद्धारक–जिनराज।
धर्मनाथ प्रणमूँ सदा, पाऊँ शिवसुख साज॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥634॥

शान्तरूप पर शान्तिकर, कर्म दाह निर्वार।
शान्ति हेतु वन्दूँ सदा, पाऊँ भवदधि पार॥

ॐ ह्रीं अर्हं शान्तिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥635॥

क्षुद्र वीर्य सब जीव के, रक्षक हैं तीर्थेश।
शरणागत प्रतिपालकर, ध्यावैं सदा सुरेश॥

ॐ ह्रीं अर्हं कुन्थुनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥636॥

पूजनीक सब जगत के, मङ्गलकारक देव।
पूजत हैं हम भाव सों, विनशै अघ स्वयमेव॥

ॐ ह्रीं अर्हं अरनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥637॥

मोह काम भट जीतियो, जिन जीतो सब लोक।
लोकोत्तम जिनराज के, नमूँ चरण दे धोक॥

ॐ ह्रीं अर्हं मल्लिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥638॥

पञ्च पाप को त्याग करि, भव्य जीव आनन्द।
भये जासु उपदेश तें, पूजत हूँ पद वृन्द॥

ॐ ह्रीं अर्हं मुनिसुव्रताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥639॥

सुर-नर-मुनि नित नमन करि, जान धरम अवतार।
तिनको पूजूँ भाव युत, लहूँ भवार्णव पार॥

ॐ ह्रीं अर्हं नमिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥640॥

नेम धर्म में नित रमें, धर्मधुरा भगवान।
धर्मचक्र जग में फिरे, पहुँचावे शिव थान॥

ॐ ह्रीं अर्हं नेमिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥641॥

शरणागत निज पास दो, पाप फाँस दुख राश।
तिसको छेदो मूल सों, देहु उच्चगति वास॥

ॐ ह्रीं अर्हं पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥642॥

वृद्ध भाव से उच्चपद, लोक शिखर आरूढ़।
केवल लक्ष्मी वर्द्धता, भई सु अन्तर गूढ़॥

ॐ ह्रीं अर्हं वर्द्धमानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥643॥

अतुलवीर्य तन धरत हैं, अतुल धीर्य मन बीच।
कामिनि वश नहिं रंच भी, जैसे जग विच नीच॥

ॐ ह्रीं अर्हं महावीराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥644॥

मोह सुभट कूँ पटकियो, तीन लोक परशंस।
श्रेष्ठ पुरुष तुम जगत में, कियो कर्म विध्वंस॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुवीराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥645॥

मिथ्या-मोह निवार करि, महा सुमति भण्डार।
शुभ मारग दरशाइयो, शुभ अरु अशुभ विचार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सन्मतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥646॥

निज आश्रय निर्विघ्न नित, निज लक्ष्मी भण्डार।
चरणाम्बुज नित नमत हम, पुष्पाञ्जलि शुभ धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं महापद्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥647॥

हो देवाधिदेव तुम, नमत देव चउ भेद।
धरो अनन्त चतुष्टपद, परमानन्द अभेव॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुरदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥648॥

निरावरण आभास है, ज्यों बिन पटल दिनेन्द्र।
लोकालोक प्रकाश करि, सुन्दर प्रभा जिनेन्द्र॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुप्रभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥649॥

आतमीक निज गुण लिए, दीप्ति सरूप अनूप।
स्वयं ज्योति परकाशमय, वन्दित हूँ शिवभूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंप्रभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥650॥

स्वैशक्ती स्वैकरण हैं, साधन बाह्य अनेक।
मोह सुभट क्षय करन को, आयुध राशि विवेक॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वायुधाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥651॥

जय-जय सुरध्वनि करत हैं, तथा विजय निधिदेव।
तुम पद जे नर नमत हैं, पावै सुख स्वयमेव॥

ॐ ह्रीं अर्हं जयदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥652॥

तुम सम प्रभा न और में, धरो ज्ञान परकाश।
नाथ प्रभा जग में भये, नमत मोहतम नाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रभादेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥653॥

रक्षक हो षट्काय के, दया सिन्धु भगवान।
शशिसम जिय आह्लाद करि, पूजनीक धरि ध्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हं उदङ्काय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥654॥

समाधान सबके करैं, द्वादश सभा मँझार।
सर्व अर्थ परकाशकर, दिव्य ध्वनि सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रश्नकीर्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥655॥

काहू विधि बाधा नहीं, कबहुँ नहीं व्यय होय।
उन्नति रूप विराजते, जयवन्तो जग सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥656॥

केवलज्ञान स्वभाव में, लोकत्रय इक भाग।
पूरणता को पाइयो, छांड़ि सकल अनुराग॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूर्णबुद्धये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥657॥

पर आलिङ्गन भाव तज, इच्छा क्लेश विडार।
निज संतोष सुखी सदा, पर सम्बन्ध निवार॥

ॐ ह्रीं अर्हं निजानंदसन्तुष्टाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥658॥

मोहादिक मल नाशकर, अतिशय करि अमलान।
विमल जिनेश्वर मैं नमूँ, तीन लोक परधान॥

ॐ ह्रीं अर्हं विमलप्रभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥659॥

स्वैपद में नित रमत हैं, कभी न आरत होय।
अतुलवीर्य विधि जीतियो, नमूँ जोर कर दोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाबलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥660॥

द्रव्य-भाव मल कर्म हैं, ताको नाश करान।
शुद्ध निरञ्जन हो रहै, ज्यों बिन बादल भान॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्मलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥661॥

तुम चित्राम अरूप हैं, सुर-नर-साधु अगम्य।
निराकार निर्लेप है, धारत भाव असम्य॥

ॐ ह्रीं अर्हं चित्रगुप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥662॥

मग्न भये निज आत्म में, परपद में नहिं वास।
लक्ष-अलक्ष विराजते, पूरो मन की आश॥
ॐ ह्रीं अर्हं समाधिगुप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥663॥

निज गुण आतम ज्ञान है, पर सहाय नहिं चाह।
स्वयं भाव परकाशियो, नमत मिटै भव दाह॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंभुवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥664॥

मनमोहन सोहन महा, मुनिमन रमण अनन्द।
महातेज परताप है, पूरण जोत अमन्द॥
ॐ ह्रीं अर्हं कन्दर्पाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥665॥

विजय लक्ष्मी नाथ हैं, जीते कर्म प्रधान।
तिनको पूजै सर्व जग, मैं पूजूँ धरि ध्यान॥
ॐ ह्रीं अर्हं जयनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥666॥

गणधरादि योगीश जे, विमलाचारी सार।
तिनके स्वामी हो प्रभु, राग-द्वेष मल जार॥
ॐ ह्रीं अर्हं विमलेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥667॥

दिव्य अनक्षर ध्वनि खिरे, सर्व अर्थ गुणधार।
भविजन मन संशय हरन, शुद्ध बोध आधार॥
ॐ ह्रीं अर्हं दिव्यवादाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥668॥

नहीं पार जा वीर्य को, स्वाभाविक निरधार।
सो सहजै गुण धरत हो, नमूँ लहूँ भवपार॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तवीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥669॥

पुरुषोत्तम परधान हो, परम निजानन्द धाम।
चक्रपती हरि बल नमें, मैं पूजूँ निष्काम॥
ॐ ह्रीं अर्हं पुरुदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥670॥

शुभ विधि सब आचरण हैं, सर्व जीव हितकार।
श्रेष्ठ बुद्ध अति शुद्ध हैं, नमूँ करो भव-पार॥
ॐ ह्रीं अर्हं सुविधये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥671॥

हैं प्रमाण करि सिद्ध जे, ते हैं बुद्धि प्रमाण।
सो विशुद्धमय रूप हैं, संशय तम को भान॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रज्ञापारमिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥672 ॥

समय प्रमाण निमित तनी, कभी अन्त नहिं होय।
अविनाशी थिर पद धरैं, मैं प्रणमूँ हूँ सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अव्ययाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥673 ॥

प्रतिपालक जगदीश हैं, सर्व मान परमान।
अधिक शिरोमणि लोकगुरु, पूजत निज कल्याण॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुराणपुरुषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥674 ॥

धर्म सहायक हो प्रभु, धर्म मार्ग की लीक।
शुभ मर्यादा बन्ध प्रति, करन चलावन ठीक॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मसारथये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥675 ॥

शिवमारग दिखलाय कर, भविजन कियो उद्धार।
धर्म सुयश विस्तार करि, बतलायो शुभ सार॥

ॐ ह्रीं अर्हं शिवकीर्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥676 ॥

मोह अन्ध हन सूर्य हो, जगदीश्वर शिवनाथ।
मोक्षमार्ग परकाश कर, नमूँ जोर जुग हाथ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वकर्मणे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥677 ॥

मन-इन्द्री व्यापार बिन, भाव रूप विध्वंश।
ज्ञान अतीन्द्रिय धरत हो, नमत नशे अघवंश॥

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥678 ॥

पर उपदेश परोक्ष बिन, साक्षात् परतक्ष।
जानत लोकालोक सब, धारै ज्ञान अलक्ष॥

ॐ ह्रीं अर्हं अच्छद्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥679 ॥

व्यापक हो तिहुँ लोक में, ज्ञानज्योति सब ठौर।
तुमको पूजत भाव सों, पाऊँ भवदधि ओर॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वभुवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥680 ॥

इन्द्रादिक कर पूज्य हो, मुनिजन ध्यान धराय।
तीन लोक नायक प्रभू, हम पर होउ सहाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वनायकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥681॥

तुम देवन के देव हो, महादेव है नाम।
बिन ममत्व शुद्धात्मा, तुम पद करूँ प्रणाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं दिगम्बराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥682॥

सर्व-व्यापि कुमती कहैं, करो भिन्न विश्राम।
जग सों तजी समीपता, राजत हो शिवठाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरन्तरजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥683॥

हितकारी अति मिष्ट हैं, अर्थ सहित गम्भीर।
प्रिय वाणी कर पोषते, द्वादश सभा सु तीर॥

ॐ ह्रीं अर्हं मिष्टदिव्यध्वनिजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥684॥

भवसागर के पार हो, सुखसागर गलतान।
भव्यजीव पूजत चरन, पावै पद निरवाण॥

ॐ ह्रीं अर्हं भवान्तकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥685॥

नहीं चलाचल भाव हैं, पाप कलाप न लेश।
दृढ़ परणति स्वै आत्मरत, पूजूँ श्री मुक्तेश॥

ॐ ह्रीं अर्हं दृढ़व्रताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥686॥

असंख्यात नय भेद हैं, यथायोग्य वच द्वार।
तिन सबको जानो सुविध, महा निपुणमति धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं नयोत्तुङ्गाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥687॥

क्रोधादिक सु उपाधि हैं, आत्म विभाव कराय।
तिनको त्याग विशुद्ध पद, पायो पूजूँ पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं निष्कलङ्काय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥688॥

ज्यों शशि किरण उद्योत है, पूरण प्रभा प्रकाश।
कलाधार सोहैं सु इम, पूजत अघ तम नाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं कलाधराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥689॥

जन्म-मरण को आदि ले, जग में क्लेश महान।
तिसके हन्ता हो प्रभु, भोगत सुख निर्वाण॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वक्लेशापहाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥690॥

ध्रुव स्वरूप थिर हैं सदा, कभी अन्त नहिं होय।
अव्याबाध विराजते, पर सहाय को खोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षय्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥691॥

व्यय उत्पाद सुभाव हैं, ताको गौण कराय।
अचल अन्त क्षयभाव में, तीन लोक सुखदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं क्षान्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥692॥

स्वज्ञानादि चतुष्ट पद, हृदे माँहिं विकसाय।
सोहित हैं शुभ चिह्न करि, भवि आनन्द कराय॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवत्सलाञ्छनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥693॥

धर्म रीति परगट कियो, युग की आदि मँझार।
भविजन पोषे सुख सहित, आदि धर्म अवतार॥

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मणे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥694॥

चतुरानन परसिद्ध हैं, दर्श होय चहुँ ओर।
चउ अनुयोग बखानते, सब दुख नाशो मोर॥

ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्मुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥695॥

जगत जीव कल्याण कर, वृष मर्याद बखान।
ब्रह्म विष्णु भगवान हो, महामुनी सब मान॥

ॐ ह्रीं अर्हं धात्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥696॥

प्रजापती प्रतिपाल कर, ब्रह्मा विधि करतार।
मन्मथ इन्द्री वश करन, वन्दूँ सुख आधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं विधात्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥697॥

तीन लोक की लक्ष्मी, तुम चरणाम्बुज वास।
श्रीपति श्रीधर नाम शुभ, दिव्यासन सुखराश॥

ॐ ह्रीं अर्हं कमलासनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥698॥

बहुरि न जग में भ्रमण है, पञ्चमगति में वास।
नित्य अमरता पाइयो, जरा मृत्यु को नाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं अजन्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥699॥

पाँच काय पुद्‍गलमई, तामें एक न होय।
केवल आत्मप्रदेश ही, तिष्ठत हैं दुख खोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं आत्मभुवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥700॥

लोक शिखर सुख सों रहैं, ये ही प्रभुता जान।
धारत हैं तिहुं लोक तें, अधिक प्रभा परधान॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकाग्रवासिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥701॥

अधिक प्रताप प्रकाश है, मोह तिमिर को नाश।
शिवमग दिखलावत सही, सूरज सम प्रतिभास॥

ॐ ह्रीं अर्हं सूर्यज्येष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥702॥

प्रजापाल हित धार उर, शुभ मारग वरताय।
सत्यारथ ब्रह्मा कहो, तुमरे वन्दूँ पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रजापतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥703॥

गर्भ समय षट् मास ही, प्रथम इन्द्र हर्षाय।
रत्नवृष्टि नित करत हैं, उत्तम गर्भ कहाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं हिरण्यगर्भाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥704॥

तुम हि चार अनुयोग के, अङ्ग कहे मुनिराज।
तुम सों पूरण श्रुत सही, नातर भङ्ग अकाज॥

ॐ ह्रीं अर्हं वेदाङ्गाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥705॥

तुम उपदेश थकी कहैं, द्वादशाङ्ग गणराज।
पूर्णज्ञान तुम्हीं धरो, प्रणमूं मैं शिवकाज॥

ॐ ह्रीं अर्हं वेदज्ञाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥706॥

पार भये भव सिन्धु के, तथा सुवर्ण समान।
उत्तम निर्मल थुति धरैं, नमत कर्ममल हान॥

ॐ ह्रीं अर्हं भवसिन्धुपारगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥707॥

सुखाभास पर निमित तें, पर उपाधि तें होत।
स्वतः स्वभाव धरो सही, सत्यानन्द उद्योत॥

ॐ ह्रीं अर्हं सत्यानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥708॥

मोहादिक प्रबल महा, सोई सको न जीत।
औरन की गिनती कहाँ, तिष्ठो सदा अभीत॥

ॐ ह्रीं अर्हं अजय्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥709॥

दिव्यरत्न सम जोति है, अमित अकम्प अडोल।
मनवाञ्छित फलदाय हो, राजत अखय अमोल॥

ॐ ह्रीं अर्हं मनोवाञ्छितफलदाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥710॥

देह धार जीवन मुकत, परमातम भगवान।
सूर्य समान सुदीप्ति धर, महा ऋषीश्वर जान॥

ॐ ह्रीं अर्हं जीवनमुक्तजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥711॥

स्वै-भय आदिक से परे, परभय आदि निवार।
पर उपाधि बिन नित सुखी, वन्दूँ भाव संभार॥

ॐ ह्रीं अर्हं शतानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥712॥

ईश्वर हो तिहुँ लोक के, परम पुरुष परधान।
ज्ञानानन्द स्वलक्ष्मी, भोगत नित अमलान॥

ॐ ह्रीं अर्हं विष्णवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥713॥

रत्नत्रय पुरुषार्थ कर, हो प्रसिद्ध जयवन्त।
कर्मशत्रु को क्षय कियो, शीश नमें नित सन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिविक्रमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥714॥

सूरज हो शिवराह के, कर्म दलन बल सूर।
संशय केतु न ग्रहण ग्रस, महा सहज सुख पूर॥

ॐ ह्रीं अर्हं आदित्यरूपजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥715॥

सुभग अनन्त चतुष्ट पद, सोई लक्ष्मी भोग।
स्वामी हो शिवनारि के, नमूँ जोरि तिहुं योग॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥716॥

इन्द्रादिक पूजत जिन्हैं, पञ्चकल्याणक थाप।
अद्भुत पराक्रम को धरैं, नमत नशैं सब पाप॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुरुषोत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥717॥

निज प्रदेश में वसत हैं, परमातम को वास।
आप मोक्ष के नाथ हो, आप हि मोक्ष निवास॥

ॐ ह्रीं अर्हं वैकुण्ठाधिपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥718॥

सर्व लोक कल्याण कर, विष्णु नाम भगवान।
श्री कहिये स्व लक्ष्मी, ताके भरता जान॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्डरीकाक्षाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥719॥

मुनिमन कुमुदनि-मोदकर, भव संताप विनाश।
पूरण चन्द्र त्रिलोक में, पूरण-प्रभा-प्रकाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं हृषीकेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥720॥

दिनकर सम परकाश कर, हो देवन के देव।
ब्रह्माविष्णु कहात हो, शशि सम द्युति स्वयमेव॥

ॐ ह्रीं अर्हं हरये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥721॥

स्वयं विभव के हो धनी, स्वयं ज्योति परकाश।
स्वयं ज्ञान दृग वीर्य सुख, स्वयं सुभाव विलास॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंभुवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥722॥

धर्म भार धर धारिणी हो जिनेन्द्र भगवान।
तुमको पूजों भाव सों, पाऊँ पद निर्वाण॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वम्भराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥723॥

असुर काम अरु हास्य इन, आदि कियो विध्वंश।
महा-श्रेष्ठ तुमको नमूँ, रहै न अघ को अंश॥

ॐ ह्रीं अर्हं असुरध्वंसिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥724॥

सुधा-धार द्यो अमर-पद, धर्म फूल की बेल।
शुभ मति गोपिन संग रमैं, हमें राख निज गेल॥

ॐ ह्रीं अर्हं माधवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥725॥

विषय कषाय स्ववश करी, बलि वश कियो जु काम।
महा-बली परसिद्ध हो, तुम पद करुं प्रणाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं बलिबन्धनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥726॥

तीन लोक भगवान हो, स्वै पर के हितकार।
सुर-नर-पशु पूजत सदा, भाव भक्ति उर धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अधोक्षजाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥727॥

हित-मित-मिष्ट प्रिय वचन, अमृतसम सुखदाय।
धर्म मोक्ष परगट करन, वन्दूँ तिनके पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं मधवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥728॥

निज लीला में मग्न है, साँचा कृष्ण सु नाम।
तीन खण्ड तिहुँ लोक के, नाथ करूँ प्रणाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं केशवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥729॥

सूके तृण सम जगत की, विभव जानकर वास।
धरै सरलता जोग में, करै पाप को नाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं विष्टरश्रवसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥730॥

श्री कहिये आतम विभव, ताकरि हो शुभ नीक।
सोहत सुन्दर वदन करि, सज्जन चित रमणीक॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवत्सलांछनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥731॥

सर्वोत्तम अति श्रेष्ठ हैं, जिन सन्मति थुति योग।
धर्म मोक्ष मारग कहैं, पूजत सज्जन लोग॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥732॥

अविनाशी अविकार हैं, नहीं चिगे निज भाव।
स्वयं निराश्रय रहत हैं, मैं पूजूँ धर चाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं अच्युताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥733॥

नाशी लौकिक कामना, निर इच्छुक योगीश।
नार शृङ्गार न मन वसैं, वन्दत हूँ लोकीश॥

ॐ ह्रीं अर्हं नरकान्तकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥734॥

व्यापक लोकालोक में, विष्णु रूप भगवान।
धर्मरूप तरु लहलहैं पूजत हूँ धर ध्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वसेनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥735 ॥

धर्मचक्र सन्मुख चलै, मिथ्यामत रिपु घात।
तीन लोक नायक प्रभू, पूजत हूँ दिनरात॥

ॐ ह्रीं अर्हं चक्रपाणये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥736 ॥

सुभग सुरूपा श्रेष्ठ अति, जन्म धर्म अवतार।
तीन लोक की लक्षमी, है एकत्र उदार॥

ॐ ह्रीं अर्हं पद्मनाभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥737 ॥

मुनिजन आदर योग हो, लोक सराहन योग।
सुर–नर–पशु आनन्द कर, सुभग निजातम भोग॥

ॐ ह्रीं अर्हं जनार्दनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥738 ॥

सब देवन के देव हो, महादेव विख्यात।
ज्ञानामृत मुख सों खिरै, पीवत भवि सुख पात॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीकण्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥739 ॥

पाप पुञ्ज को नाश करि, धर्म रीति प्रगटाय।
तीन लोक के अधिपती, हम पर दया कराय॥

ॐ ह्रीं अर्हं शङ्कराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥740 ॥

स्वयं व्यापि निज ज्ञान करि, स्वयं प्रकाश अनूप।
स्वयं भाव परमातमा, वन्दूँ स्वयं सरूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंप्रभवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥741 ॥

सब देवन के देव हो, महादेव है नाम।
स्वपर सुगन्धित रूप हो, तुम पद करूँ प्रणाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकपालाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥742 ॥

धर्मध्वजा जग फरहरै, सब जग माने आन।
सब जग शीश नमें चरण, सब जग को सुखदान॥

ॐ ह्रीं अर्हं वृषकेतवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥743 ॥

जन्म–जरा–मृत जीत कैं, निश्चल अव्यय रूप।
सुख सों राजत नित्य हो, वन्दूँ हूँ शिव–भूप॥
ॐ ह्रीं अर्हं मृत्युञ्जयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥744॥
सब इन्द्री मन जीत के, कर दीनों तुम व्यर्थ।
स्वयं ज्ञान इन्द्री जग्यौ नमूँ सदा शिव अर्थ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विरूपाक्षाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥745॥
सुन्दर रूप मनोज्ञ है, मुनिजन मन वशकार।
असाधार्ण शुभ अणु लगैं, केवलज्ञान मँझार॥
ॐ ह्रीं अर्हं कामदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥746॥
सम्यग्दर्शन ज्ञान अरु, चारित एक सरूप।
धर्म मार्ग दरशात हैं, लोकित रूप अरूप॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोचनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥747॥
निजानन्द स्व–लक्ष्मी, ताके हो भरतार।
शिवकामिनि नित भोगते, परम रूप सुखकार॥
ॐ ह्रीं अर्हं उमापतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥748॥
जे अज्ञानी जीव हैं, तिन प्रतिबोध करान।
रक्षक हो षट् काय के, तुम सम कौन महान॥
ॐ ह्रीं अर्हं पशुपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥749॥
रमण भाव निज शक्ति सों, धरै तथा द्युति काम।
कामदेव यह नाम है, महा–शक्ति बल धाम॥
ॐ ह्रीं अर्हं शम्बरारये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥750॥
कामदाह को दम कियो, ज्यों अगनी जलधार।
स्वै आतम आचरण नित, महाशील श्रिय सार॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिपुरान्तकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥751॥
स्वै सन्मति शुभ नारि सों, मिले रले अर्द्धाङ्ग।
ईश्वर हो परमातमा, तुम्हैं नमूँ सर्वाङ्ग॥
ॐ ह्रीं अर्हं अर्द्धनारीश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥752॥

नहीं चिगे उपयोग से, महा कठिन परिणाम।
महा-धीर्य धारक नमूँ, तुमको आठों याम॥

ॐ ह्रीं अर्हं रुद्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥753॥

गुण पर्याय अनन्त युत, वस्तु स्वयं परदेश।
स्वयं काल स्व क्षेत्र हो, स्वयं सुभाव विशेष॥

ॐ ह्रीं अर्हं भवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥754॥

सूक्षम गुप्त स्वगुण धरें, महा शुद्धता धार।
चार ज्ञान धर नहिं लखैं, मैं पूजूँ सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं भर्गाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥755॥

शिव तिय सङ्ग सदा रमें, काल अनन्त न और।
अविनाशी अविकार हो, महादेव शिरमौर॥

ॐ ह्रीं अर्हं सदाशिवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥756॥

जगत कार्य तुमसों सरैं, सब तुमरे आधीन।
सबके तुम सरदार हो, आप धनी जग दीन॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्कर्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥757॥

महा घोर अँधियार है, मिथ्या मोह कहाय।
जग में शिव मग लुप्त था, ताको तुम दरशाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अन्धकारातये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥758॥

सन्तति पक्ष जु लीजिये, नहीं आदि नहिं अन्त।
सदा काल बिन काल तुम, राजत हो जयवन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनादिनिधनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥759॥

तीन लोक आराध्य हो, महायज्ञ को ठाम।
तुमको पूजत पाइये, महा-मोक्ष शुभधाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं हराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥760॥

महा सुभट गुणरास हो, सेवत है तिहुँ लोक।
शरणागत प्रतिपालकर, चरणाम्बुज दूँ धोक॥

ॐ ह्रीं अर्हं महासेनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥761॥

गणधरादि सेवें चरण, महा गणपती नाम।
पार करो भवसिन्धु तें, मङ्गलकर सुखधाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं तारकजिते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥762 ॥

चार संघ के नाथ हो, तुम आज्ञा शिर धार।
धर्म-मार्ग प्रवर्त्त कर, वन्दूँ पाप निवार॥

ॐ ह्रीं अर्हं गणनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥763 ॥

मोह सर्प के दमन को, गरुड़ समान कहाय।
सबके आदरकार हो, तुम गणपति सुखदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं विनायकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥764 ॥

जे मोही अल्पज्ञ हैं, तिनसों हो प्रतिकूल।
धर्माधर्म विरोध कर, धरूँ शीश पग धूल॥

ॐ ह्रीं अर्हं विरोचनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥765 ॥

जितने दुख संसार में, तिनको वार न पार।
इक तुम ही जानो सही, ताहि तजो दुख भार॥

ॐ ह्रीं अर्हं वियद्रत्नाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥766 ॥

सब विद्या के बीज हो, तुम वाणी परकाश।
सकल अविद्या मूलतें, इक छिन में हो नाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं द्वादशआत्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥767 ॥

पर निमित्त से जीव को, रागादिक परिणाम।
तिनको त्याग सुभाव में, राजत हैं सुखधाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं विभावरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥768 ॥

अन्तर बाहिर प्रबल रिपु, जीत सके नहिं कोय।
निर्भय अचल सुथिर रहैं, कोटि शिवालय सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं दुर्जयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥769 ॥

घन सम गर्जत वचन हैं, भागे कुनय कुवादि।
प्रबल प्रचण्ड सुवीर्य है, धरैं सुगुण इत्यादि॥

ॐ ह्रीं अर्हं बृहद्भावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥770 ॥

पाप सघन वन दाह दव, महादेव शिव नाम।
अतुल प्रभाव धरै महा, तुम पद करूँ प्रणाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं चित्रभानवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥771॥

तुम अजन्म विन-मृत्यु हो, सदा रहो अविकार।
ज्यों के त्यों मणि दीप सम, पूजत हूँ मन धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अजरामरजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥772॥

संस्कारादि स्वगुण सहित, तिनके हो आराध्य।
तुमको वन्दों भाव सों, मिटे सकल दुख व्याध्य॥

ॐ ह्रीं अर्हं द्विजाराध्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥773॥

निज अमृत स्वै ज्ञान हो, तामें रुचि परतीत।
पर पद सोहै अरुचिता, पाई अक्षय जीत॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुधाशोचिषे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥774॥

जन्म-मरण को आदि लै, सकल रोग को नाश।
दिव्य औषधी तुम धरो, अमर करन सुखरास॥

ॐ ह्रीं अर्हं औषधीशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥775॥

पूरण गुण परकाश कर, ज्यों शशि किरण उद्योत।
मिथ्या तप निरवारते, दर्शित आनन्द होत॥

ॐ ह्रीं अर्हं कलानिधये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥776॥

सूर्य प्रकाश धरै सही, धर्म मार्ग दिखलाय।
चार संघ नायक प्रभू, वन्दूँ तिनके पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं नक्षत्रनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥777॥

भव-तप हर हो चन्द्रमा, शीतलकार कपूर।
तुमको जो नर सेवते, पाप कर्म हो दूर॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुभ्रांशवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥778॥

स्वर्गादिक की लक्ष्मी, तासों भी जु ग्लान।
स्वैपद में आनन्द है, तीन लोक भगवान॥

ॐ ह्रीं अर्हं सौम्यभावरताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥779॥

पर पदार्थ को इष्ट लखि, होत नहीं अभिमान।
हो अबन्ध इस कर्म तें, स्वै-आनन्द निधान॥

ॐ ह्रीं अर्हं कुमुदबान्धवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥780॥

सब विभाव को त्याग करि, हैं स्वधर्म सु लीन।
तातें प्रभुता पाइयो, हैं नहिं बन्धाधीन॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मरतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥781॥

आकुलता नहिं लेश है, नहीं रहै चित भङ्ग।
सदा सुखी तिहुँ लोक में, चरन नमूँ सब अङ्ग॥

ॐ ह्रीं अर्हं आकुलतारहितजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥782॥

शुभ परिणति प्रगटाय के, दियो स्वर्ग को दान।
धर्मध्यान तुमसे चले, सुमिरत हो शुभ ध्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यजनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥783॥

भविजन करत पवित्र अति, पाप मैल प्रक्षाल।
ईश्वर हो परमातमा, नमूँ चरण निज भाल॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यजिनेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥784॥

श्रावक या मुनिराज हो, धर्म आपसे होय।
धर्मराज शुभ नीति करि, उन्मारग को खोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मराजाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥785॥

स्वयं स्व-आतम रस लहो, ताही का है भोग।
अन्य कुपरिणति त्यागियो, नमूँ पदाम्बुज योग॥

ॐ ह्रीं अर्हं भोगिराजाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥786॥

दर्शन ज्ञान सुभाव धरि, ताही के हो स्वामि।
ता मलीनता त्यागियो, भये शुद्ध परिणाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रचेतसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥787॥

सत्य उचित शुभ न्याय में, है आनन्द विशेख।
सब कुनीति को नाशकर, सर्व जीव सुख देख॥

ॐ ह्रीं अर्हं भूतानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥788॥

पर पदार्थ के सङ्ग से, दुखित होत जब जीव।
ताके भय सों भय रहित, भोगें मोक्ष सदीव॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिंहिकातनयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥789॥

जाको कभी न नाश हो, सो पायो आनन्द।
अचलरूप निज आत्ममय, भाव अभावी द्वन्द॥

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षयानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥790॥

शिव मारग परगट कियो, दोष रहित वरताय।
दिव्यध्वनि करि गर्ज सम, सर्व अर्थ दिखलाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं बृहतांपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥791॥

चौपाई

हितकारक अपूर्व उपदेश, तुम सम और नहीं देवेश।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अपूर्वदेवोपदेष्ट्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥792॥

कर्म विषैं संस्कार विधान, तीन लोक में विस्तर जान।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धसमूहेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥793॥

धर्मोपदेश देत सुखकार, महाबुद्ध तुम हो अवतार।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्ध बुद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥794॥

तीन लोक में हो शशि सूर, निजकिरणावलि करि तम चूर।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं तमोभेदिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥795॥

धर्ममार्ग उद्योत करान, सब कुवाद की करि हो हान।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं दशबलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥796॥

सर्व शास्त्र मिथ्या वा सांच, तुम निजदृष्टि लियो है जाँच।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वशास्त्रनिर्णायकजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥797॥

पञ्चमगति बिन श्रेष्ठ न और, सो तुम पाय त्रिजग शिरमौर।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं पञ्चमगतिजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥798॥

श्रेष्ठ सुमति तुम ही हो एक, शिवमारग की जानो टेक।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं समन्तभद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥799॥

वृष मर्याद भली विधि थाप, भविजन मेटो सब सन्ताप।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुगताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥800॥

श्रेष्ठ करै कल्याण स्व ज्ञान, सम्पूरण सङ्कल्प निशान।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीकल्याणकारक जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥801॥

निज ऐश्वर्य धरो सम्पूर्ण, पर विभूति बिन हो अघ चूर्ण।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमऐश्वर्यसम्पन्नाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥802॥

श्रेष्ठ शुद्ध परब्रह्म रमाय, मङ्गलमय पर मङ्गलदाय।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धार्थाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥803॥

श्री जिनराज कर्मरिपु जीत, पूजनीक हैं सबके मीत।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं कर्मारिजिते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥804॥

षट् पदार्थ नव तत्त्व कहाय, धर्म अधर्म भली विधि गाय।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वशास्त्रज्ञजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥805॥

है शुभ लक्षणमय परिणाम, पर उपाधि को नहिं कछु काम।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुभलक्षणजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥806॥

सत्य ज्ञानमय है तुम बोध, हेय अहेय बतायो सोध।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं बोधिसत्त्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥807॥

इष्टानिष्ट न राग न द्वेष, ज्ञाता दृष्टा हो अविशेष।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्विकल्पदर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥808॥

दूजो तुम सम नहिं भगवान, धर्माधर्म रीति बतलान।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अद्वितीयवादिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥809॥

महादुखी संसारी जान, तिनके पालक हो भगवान।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाकृपालवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥810॥

जग विभूति निर इच्छुक होय, मान रहित आतम रत सोय।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं आत्मरसरतजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥811॥

ज्यों शशि ताप हरै अनिवार, अतिशय सहित शान्ति करतार।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं शान्तिदात्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥812॥

हो निरभेद अछेद अशेष, सब इक सार स्वयं परदेश।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं सामान्यलक्षणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥813॥

मायाकृत सम पाँचों काय, निज सों भिन्न लखो भल भाय।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं पञ्चस्कन्ध-मयात्मदृशे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥814॥

बीती बात देख संसार, भव-तन-भोग विरक्त उदार।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं भूतार्थभावनासिद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥815॥

धर्माधर्म जान सब ठीक, मोक्षपुरी दिखलायो लीक।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं चतुरार्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥816॥

वीतराग सर्वज्ञ सु देव, सत्यवाक वक्ता स्वयमेव।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं सत्यवक्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥817॥

मन-वच-काय योग परिहार, कर्मवर्गणा नाहिं लगार।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरास्रवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥818॥

चार अनुयोग कियो उपदेश, भव्य जीव सुख लहत हमेश।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्भूमिकशासनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥819॥

काहू पद सों मेल न होय, अन्वय रूप कहावै सोय।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अन्वयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥820॥

हो समाधि में नित लवलीन, बिन आश्रय नित ही स्वाधीन।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं समाधिनिमग्न नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥821॥

लोक भाल हो तिलक अनूप, हो लोकोत्तम शेष स्वरूप।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकभालजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥822॥

अक्षाधीन हीन हैं शक्त, तिसको नाश करी निज व्यक्त।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं तुच्छभावभिदे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥823॥

जीवादिक षट् द्रव्य सुजान, तिनको भली भाँति है ज्ञान।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं षड्द्रव्यदृशे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥824॥

विकलरूप नय सकल प्रमाण, वस्तु भेद जानो स्वज्ञान।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं नैयायिकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥825॥

सब पदार्थ दर्शत तुम बैन, संशयहरण करण सुख चैन।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं षोडशपदार्थवादिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥826॥

वर्णन करि पञ्चास्तिकाय, भव्य जीव संशय विनशाय।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं पञ्चार्थवर्णकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥827॥

प्रतिबिम्बित हो आरसि माँहिं, ज्ञानाध्यक्ष जान हो ताहिं।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानान्तरअध्यक्षबोधाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥828॥

जामें ज्ञान जीव हो एक, सो परकाशो शुद्ध विवेक।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं समवायवसार्थभिदे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥829॥

भक्तनि के हो साध्य सु कर्म, अन्तिम पौरुष साधन धर्म।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं भुक्तैकसाध्यकर्मान्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥830॥

बाकी रहो न गुण शुभ एक, ताको स्वाद न हो प्रत्येक।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरवशेषगुणामृताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥831॥

नय सुपक्ष करि सांख्य कुवाद, तुम निरवाद पक्षकर वाद।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं सांख्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥832॥

सम्यग्दर्शन है तुम बैन, वस्तु परीक्षा भाखों ऐन।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं समीक्ष्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥833॥

धर्मशास्त्र के हो कर्तार, आदि पुरुष धारो अवतार।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं कपिलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥834॥

नय साधत नैयायिक नाम, सो तुम पक्ष धरो अभिराम।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं पञ्चविंशतितत्त्वविदे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥835॥

स्व-पर चतुष्क वस्तु को भेद, व्यक्ताव्यक्त कहो निरखेद।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं व्यक्तअव्यक्तविज्ञानिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥836॥

दर्शन-ज्ञान भेद उपयोग, चेतनता में है शुभ योग।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानचैतन्यभेददृशे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥837॥

स्वै संवेदन शुद्ध धराय, अन्य जीव हैं मलिन कुभाय।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वसंवेदनज्ञानवादिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥838॥

द्वादश सभा करै सतकार, आदर योग बैन सुखकार।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं सत्कारवादिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥839॥

आगम अक्ष अनक्ष प्रमान, तीन भेदकर तुम पहचान।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिप्रमाणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥840॥

विशद शुद्धमति हो साकार, तुमको जानत हैं सु विचार।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षप्रमाणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥841॥

नय सापेक्ष कहे शुभ बैन, हैं अशंस सत्यारथ ऐन।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्याद्वादवादिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥842॥

लोकालोक क्षेत्र के माँहिं, आप ज्ञान में सब दरशाहिं।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं क्षेत्रज्ञाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥843॥

अन्तर-बाह्य लेश नहीं ओर, केवल आतम जोति अघोर।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं आत्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥844॥

अन्तिम पौरुष साध्यो सार, पुरुष नाम पायो सुखकार।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुरुषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥845॥

चहुँगति में नरदेह मँझार, मोक्ष होत तुम नर आकार।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं नराधिपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥846॥

दर्श ज्ञान चेतन की लार, निरावर्ण तुम हो अविकार।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणचेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥847॥

भाव न वेद वेद नरदेह, मोक्ष रूप नाहिं सन्देह।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं मोक्षरूपजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥848॥

सत्य यथारथ हो सब ठीक, स्वयं सिद्ध राजो शुभ नीक।
सिद्ध समूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुख सम्पतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अकर्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥849॥

जाकरि तुमको जानिये, सो है अगम अलक्ष।
निर्गुण यातैं कहत हैं, भव-भय तैं हम रक्ष॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥850॥

पुद्गल में हैं अष्टगुण, सो तुम में इक नाय।
शुद्ध अमूरत देव हो, स्व-प्रदेश चिदराय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अमूर्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥851॥

उमापती त्रिभुवन धनी, राजत भू भरतार।
निजानन्द को आदि ले, महा तुष्ट निरधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं भोक्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥852॥

व्यापक लोकालोक में, ज्ञान-ज्योति के द्वार।
लोकशिखर तिष्ठत अचल, करो भक्त उद्धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वगताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥853॥

योग प्रबन्ध निवारियो, राग-द्वेष निरवार।
देहरहित निष्कम्प हो, भये अक्रिया सार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अक्रियाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥854॥

सर्वोत्तम अति उच्च गति, जहाँ रहो स्वयमेव।
देव वास है मोक्ष थल, हो देवन के देव॥

ॐ ह्रीं अर्हं देवेष्टजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥855॥

भव-सागर के तीर हो, अचलरूप अस्थान।
फिर नहिं जग में जन्म है, राजत हो सुखथान॥

ॐ ह्रीं अर्हं तटस्थाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥856॥

ज्यों के त्यों नित थिर रहो, अचलरूप अविनाश।
निजपदमय राजत सदा, स्वयं ज्योति परकाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं कूटस्थाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥857॥

तत्त्व-अतत्त्व प्रकाशियो, ज्ञाता हो सब भास।
ज्ञानमूर्ति हो ज्ञानघन, ज्ञान ज्योति परकाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञात्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥858॥

पर-निमित्त के योग तैं, व्यापै नहीं विकार।
स्व स्वरूप में थिर सदा, हो अबाध निरधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं निराबाधाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥859॥

चार्वाक वा सांख्य-मत, झूठी पक्ष धरात।
अल्प मोक्ष नहीं होत है, राजत हो विख्यात॥

ॐ ह्रीं अर्हं अभवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥860॥

तारण-तरण जहाज हो, अतुल शक्ति के नाथ।
भव-वारिधि से पार कर, राखो अपने साथ॥
ॐ ह्रीं अर्हं बहिर्विकाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।861।।

बन्ध-मोक्ष का कथन है, सो भी है व्यवहार।
तुम व्यवहारातीत हो, शुद्ध वस्तु निरधार॥
ॐ ह्रीं अर्हं निर्मोक्षाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।862।।

चारों पुरुषारथ विषैं, मोक्ष पदारथ सार।
तुम साधो परधान हो, सब में सुख आधार॥
ॐ ह्रीं अर्हं प्रधानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।863।।

कर्म-मैल प्रक्षाल कैं, निज आतम लवलाय।
हो प्रसन्न शिवथल विषैं, अन्तर मल विनसाय॥
ॐ ह्रीं अर्हं कर्मव्याधिविनाशक नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।864।।

निज सुभाव निज वस्तुता, निज सुभाव में लीन।
वन्दूँ शुद्ध स्वभावमय, अन्य कुभाव मलीन॥
ॐ ह्रीं अर्हं प्रकृतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।865।।

निज स्वरूप परकाश है, निरावर्ण ज्यों सूर।
तुमको पूजत भावसों, मोह कर्म को चूर॥
ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणसूर्यजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।866।।

निज भावन तें मोक्ष हो, ते ही भाव रहात।
स्वै गुण स्वै पर्याय में, थिरता भाव धरात॥
ॐ ह्रीं अर्हं आरूढप्रकृतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।867।।

सब कुभाव को जीतियो, शुद्ध भये निरमूल।
शुद्धातम कहलात हो, नमत नशे अघ मूल॥
ॐ ह्रीं अर्हं प्रकृतिप्रियाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।868।।

निज सन्मति के सन्मती, निज बुध के बुधवान।
ज्ञाता हो शुभ ज्ञान के, पूजत मिथ्या हान॥
ॐ ह्रीं अर्हं प्रधानभोज्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।869।।

कर्म प्रकृति को अंश बिन, उत्तर हो या मूल।
शुद्धरूप अति तेज घन, ज्यों रवि बिम्ब अधूल॥

ॐ ह्रीं अर्हं अप्रकृतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥870॥

आदि पुरुष आदीश जिन, आदि धर्म अवतार।
आदि मोक्ष दातार हो, आदि कर्म हरतार॥

ॐ ह्रीं अर्हं आद्यवेधसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥871॥

नहिं विकार आवै कभी, रहो सदा सुखरूप।
रोग-शोक व्यापै नहीं, निवसैं सदा अनूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्विकृतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥872॥

निज पौरुष करि सूर्य सम, हरो तिमिर मिथ्यात।
तुम पुरुषारथ सफल है, तीन लोक विख्यात॥

ॐ ह्रीं अर्हं कृतिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥873॥

वस्तु परीक्षा तुम बिना, और झूठ कर खेद।
अन्धकूप में आप सर, डारत हैं निरभेद॥

ॐ ह्रीं अर्हं मीमांसकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥874॥

होनहार या हो लई, या पइये इस काल।
अस्तिरूप सब वस्तु हैं, तुम जानो यह हाल॥

ॐ ह्रीं अर्हं अस्तिसर्वज्ञाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥875॥

जिनवाणी जिन सरस्वती, तुम गुण सों परिपूर।
पूज्य योग तुम को कहैं, करैं मोह मद चूर॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रुतपूज्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥876॥

सत स्वरूप आनन्द हो, निजपद रमन सुभाव।
सदा विकाशित हो रहे, वन्दूँ सहज सुचाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं सदोत्सवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥877॥

मन इन्द्री जानत नहीं, जाको शुद्ध स्वरूप।
वचनातीत स्वगुणसहित, अमल अकाय अरूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं परोक्षज्ञानअगम्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥878॥

जो श्रुतज्ञान कला धरैं, तिनको हो तुम इष्ट।
तुमको नित प्रति ध्यावते, नाशे सकल अनिष्ट॥

ॐ ह्रीं अर्हं इष्टपाठकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥879॥

निज समरथ कर साधियो, निज पुरुषारथ सार।
सिद्ध भये सब काम तुम, सिद्ध नाम सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धकर्मकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥880॥

पृथ्वी जल अगनी पवन, जानत इनके भेद।
गुण अनन्त पर्याय सब, सो अविभाग प्रच्छेद॥

ॐ ह्रीं अर्हं चार्वाकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥881॥

स्वै संवेदन ज्ञान में, देखत हो प्रत्यक्ष।
रक्षक हो तिहुँ लोक के, हम शरणागत पक्ष॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रत्यक्षैकप्रमाणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥882॥

विद्यमान शिवलोक में, स्वगुण पर्य समेत।
कहैं अभाव कुमतमती, निज पर धोका देत॥

ॐ ह्रीं अर्हं अस्तिमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥883॥

तुम आगम के मूल हो, अपर गुरू है नाम।
तुम वाणी अनुसार ही, भये शास्त्र अभिराम॥

ॐ ह्रीं अर्हं गुरुश्रुतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥884॥

तीन लोक के नाथ हो, ज्यों सुरगण में इन्द्र।
स्वै पद रमन स्वभाव धर, नमें तुम्हें देवेन्द्र॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥885॥

सब स्वभाव अविरुद्ध हैं, निज पर घातक नाहिं।
सहचारी परिणाम हैं, निवसत हैं तुम माँहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं आविद्धकर्णाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥886॥

ब्रह्म ज्ञान को वेद कर, भये शुद्ध अविकार।
पूरण ज्ञानी हो नमूँ, लहो वेद को सार॥

ॐ ह्रीं अर्हं वेदान्तिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ 887॥

शब्द ब्रह्म के ज्ञान तें, आतम तत्त्व विचार।
शुक्लध्यान में लय भये, हो अतर्क अविचार॥

ॐ ह्रीं अर्हं शब्दाद्वैतिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥888॥

सूक्ष्म तत्त्व परकाशकर, सूक्ष्म कर्म उच्छेद।
मोक्षमार्ग परगट कियो, कहो सु अन्तर भेद॥

ॐ ह्रीं अर्हं सूक्ष्मतत्त्वप्रकाशकजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥889॥

तीन शतक त्रेसठ जु हैं, सब मानै पाखण्ड।
धर्म यथारथ तुम कहो, तिन सबको करि खण्ड॥

ॐ ह्रीं अर्हं पाखण्डखण्डकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥890॥

कर्ण-रूप करतार हो, कोइक नय के द्वार।
सुर-मुनि कर पूजत भये, माननीक सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं नयौघयुजे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥891॥

केवलज्ञान उपाइकें, तदनन्तर हो मोक्ष।
साक्षात् बड़भाग से पूजूँ यहाँ परोक्ष॥

ॐ ह्रीं अर्हं अन्तकृते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥892॥

शरणागत को पार कर, देत मोक्ष अभिराम।
तारण-तरण सु नाम है, तुम पद करूँ प्रणाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं पारकृते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥893॥

भव-समुद्र गम्भीर है, कठिन जास को पार।
निज पुरुषारथ कर तिरे, गहो किनारो सार॥

ॐ ह्रीं अर्हं तीरप्राप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥894॥

एक बार जो शरण गह, ताके हो हितकार।
यातें सब जग जीव के, हो आनन्द दातार॥

ॐ ह्रीं अर्हं पारेतमःस्थिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥895॥

रत्नत्रय निज नेत्र सों, मोक्षपुरी पहुँचात।
महादेव हो जगत पितु, तीन लोक विख्यात॥

ॐ ह्रीं अर्हं रत्नत्रयनेत्रजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥896॥

तीन लोक के नाथ हो, महा ज्ञान भण्डार।
सरल भाव बिन कपट हो, शुद्ध बुद्ध अविकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धबुद्धजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥897॥

निश्चय वा व्यवहार के, हो तुम जाननहार।
वस्तुरूप निज साधियो, पूजत हूँ हितधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानकर्मसमुच्चयिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥898॥

सुर-नर-पशु न अघावते, सभी ध्यावते आन।
तुमको नित ही ध्यावते, पावैं सुख निर्वाण॥

ॐ ह्रीं अर्हं नित्यतृप्तजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥899॥

कर्म मैल प्रक्षाल करि, तीनों योग सम्हार।
पाप शैल चकचूर कर, भये अयोग सुखार॥

ॐ ह्रीं अर्हं उच्छिन्नयोगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥900॥

सूरज हो निज ज्ञानघन, ग्रहण उपद्रव नाहिं।
बेखटके शिवपन्थ सब, दीखत है जिस माँहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणज्ञानघनजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥901॥

जोग योग सङ्कल्प सब, हरो देह के साथ।
रहो अकम्पित थिर सदा, मैं नाऊँ निज माथ॥

ॐ ह्रीं अर्हं योगस्नेहापहाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥902॥

जोग सुथिरता को हरै, करे आगमन कर्म।
तुम तासों निर्लेप हो, नशो मोह मद शर्म॥

ॐ ह्रीं अर्हं योगकिट्टिनिर्लेपनोद्यताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥903॥

निज आतम में स्वस्थ हैं, स्वपद योग रमाय।
निर्भय तुम निरइच्छु हो, नमूँ जोर कर पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वस्थयोगरतजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥904॥

महादेव गिरिराज पर, जन्म समै जिम सूर।
योग किरण विकसात हो, शोक तिमिर कर दूर॥

ॐ ह्रीं अर्हं गिरिसंयोगजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥905॥

सूक्षम तत्त्व प्रकाश हैं, शुभ प्रिय वचनन द्वार।
भविजन को आनन्द कर, तीन जगत गुरु सार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सूक्ष्मवाक्चित्तयोगस्थाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।906॥

सूक्षम निज परदेश तन, सूक्ष्म क्रिया परिणाम।
चितवन मन नहिं वस चलै, राजत हो शिवधाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं सूक्ष्मीकृतवपुःक्रियाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।907॥

कर्म रहित शुद्धात्मा, निश्चल क्रिया रहात।
स्वप्रदेशमय थिर सदा, कृतकृत्य सुख पात॥

ॐ ह्रीं अर्हं नैष्कर्मसिद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।908॥

विद्यमान प्रत्यक्ष है, चेतन-राय प्रकाश।
कर्म कालिमा सों रहित, पूजत हो अघ नाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं भूताभिव्यक्तचेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।909॥

गृहस्थाचरण सुभेद करि, धर्मरूप रस रास।
एक तुम्हीं हो धर्म करि, पायो शिवपुर वास॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मरासजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।910॥

सूर्य प्रकाशन मोहतम, हरता हो शुभ पन्थ।
पाप क्रिया बिन राजते, महायती निर्ग्रन्थ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमहंसाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।911॥

बन्ध रहित सर्वस्व करि, निर्मल हो निर्लेप।
शुद्ध सुवर्ण दिपै सदा, नहीं मोहमल लेप॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमसंवराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।912॥

मेघ पटल बिन सूर्य जिम, दीप्त अनन्त प्रताप।
निरावरण तुम शुद्ध हो, पूजत मिटि हैं पाप॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।913॥

कर्म अंश सब झर गिरे, रहो न एक लगार।
परम शुद्धता धारकै, तिष्ठो हो अविकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमनिर्जराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।914॥

तेज प्रचण्ड प्रभाव है, उदयरूप परताप।
अन्य कुदेव कु-आज्ञा, झूठा धरत कलाप॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रज्वलत्प्रभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥915॥

भये निरर्थक कर्म सब, शक्ति भई है हीन।
तिनको जीते छिनक में, भये सुखी स्वाधीन॥

ॐ ह्रीं अर्हं समस्तकर्मक्षयजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥916॥

कर्म प्रकृति को रोग सम, जानो हो क्षयकार।
निज स्वरूप आनन्द में, कहो विगार निहार॥

ॐ ह्रीं अर्हं कर्मविस्फोटकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥917॥

हीन शक्ति परमाद को, आप कियो है अन्त।
निज पुरुषार्थ सुवीर्य सों, सुखी भये सु अनन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तवीर्यजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥918॥

एकरूप रस स्वाद में, निर आकुलित रहाय।
विविध रूप रस पर निमित, ताको त्याग कराय॥

ॐ ह्रीं अर्हं एकाकाररसास्वादिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥919॥

इन्द्री मन के सब विषय, त्याग दिये इक लार।
निजानन्द में मगन हैं, छाँड़ो जग व्यापार॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वाकाररसाकुलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥920॥

पर सम्बन्धी प्राण बिन, निज प्राणन आधार।
सदा रहै जीतव्यता, जरा मृत्यु को टार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सदाजीविते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥921॥

निजरस के सागर धनी, महा प्रिय स्वादिष्ट।
अमर रूप राजैं सदा, सुर-मुनि के हो इष्ट॥

ॐ ह्रीं अर्हं अमृताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥922॥

पूरण निज आनन्द में, सदा जागते आप।
नहिं प्रमाद में लिप्त हैं, पूजत विनशे पाप॥

ॐ ह्रीं अर्हं जाग्रते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥923॥

क्षीण ज्ञान ज्ञानावरण, करै जीव को नित्य।
सो आवर्ण विनाशियो, रहो अस्वप्न सुवित्य॥

ॐ ह्रीं अर्हं असुप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥924॥

स्व प्रमाण में थिर सदा, स्वयं चतुष्टय सत्य।
निराबाध निर्भय सुखी, त्यागत भाव असत्य॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वप्रमाणस्थिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥925॥

श्रमकर नहिं आकुलित हो, सदा रहो निरखेद।
स्वस्थ रूप राजो सदा, वेदो ज्ञान अभेद॥

ॐ ह्रीं अर्हं निराकुलितजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥926॥

मन-वच-तन व्यापार था, तावत रहो शरीर।
ताको नाश अकम्प हो, वन्दूँ मन धर धीर॥

ॐ ह्रीं अर्हं अयोगिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥927॥

जितने शुभ लक्षण कहे, तुममें हैं एकत्र।
तुमको वन्दूँ भाव सों, हरो पाप सर्वत्र॥

ॐ ह्रीं अर्हं चतुरशीतिलक्षगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥928॥

तुम लक्षण सूक्षम महा, इन्द्रिय विषय अतीत।
वचन अगोचर गुण धरो, निर्गुण कहत सुनीत॥

ॐ ह्रीं अर्हं अगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥929॥

अगुरुलघू पर्याय के, भेद अनन्तानन्त।
गुण अनन्त परिणामकर, नित्य नमें पद सन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तानन्तपर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥930॥

राग-द्वेष के नाश तें, नहीं पूर्व संस्कार।
निज स्वभाव में थिर रहैं, अन्य वासना टार॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूर्वसंस्कारनाशकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥931॥

गुण चतुष्ट में वृद्धता, भई अनन्तानन्त।
तुम सम और न जगत में, सदा रहो जयवन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तचतुष्टयवृद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥932॥

आर्ष कथित उत्तम वचन, धर्म मार्ग अरहन्त।
सो सब नाम कहो तुम्हीं, शिवमारग के सन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रवचनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥933॥

महाबुद्धि के धाम हो, सूक्षम शुद्ध अवाच्य।
चार ज्ञान नहिं गम्य हो, वस्तुरूप सो साच्य॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्वचनीयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥934॥

सूक्षम तें सूक्षम विषैं, तुमरो है परवेश।
आपै सूक्षम रूप हो, राजत निज परदेश॥

ॐ ह्रीं अर्हं अणीयसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥935॥

कर्म प्रबन्ध सुघन पटल, ताकी छाँय निवार।
रविघन ज्योति प्रकट भई, पूरणता विधि धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनणुप्रियाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥936॥

निज प्रदेश में थिर सदा, योग निमित्त निवार।
अचल शिवालय के विषैं, तिष्ठैं सिद्ध अपार॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्थेयसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥937॥

सन्त नमन प्रिय हो अति, सज्जन वल्लभ जान।
मुनिजन मन प्यारे सही, नमत होत कल्याण॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रेष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥938॥

काल अनन्तानन्त लौं, करैं शिवालय वास।
अव्यय अविनाशी सुथिर स्वयं जोत परकाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्थिराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥939॥

स्व-आतम में वास है, रुलत नहीं संसार।
ज्यों के त्यों निश्चल सदा, वन्दत भवदधि पार॥

ॐ ह्रीं अर्हं निष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥940॥

सुभग सराहन योग्य हैं, उत्तम भाव धराय।
तीन लोक में सार है, मुनिजन वन्दित पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रेष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥941॥

सब के अग्रेसर भये, सब के हो सिरताज।
तुम से बड़ा न और है, सब के कर हो काज॥

ॐ ह्रीं अर्हं ज्येष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥942॥

स्व-प्रदेश निष्कम्प हैं, द्रव्य-भाव विधि नाश।
इष्टानिष्ट न मति धरैं, निज आनन्द विलास॥

ॐ ह्रीं अर्हं निष्कम्पप्रदेशजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥943॥

उचित क्षमादिक अर्थ सब, सत्य सु न्याय सुलब्ध।
तिन सब के स्वामी नमूँ, पूरण सुखी सुअब्ध॥

ॐ ह्रीं अर्हं उत्तमक्षमादिगुणाब्धिजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥944॥

महा कठिन दुःशक्य है, यह संसार निकास।
तुम पायो पुरुषार्थ कर, लहो स्वलब्धि अवास॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूज्यपादजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥945॥

परमारथ स्व गुण कहें, मोक्ष प्राप्ति में होय।
स्वारथ इन्द्रिय जन्य है, सो तुम इनको खोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमनिर्गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥946॥

पर निमित्त या भेद करि, या उपचरित कहाय।
सो तुम में सब लय भये, मानो स्वप्न कराय॥

ॐ ह्रीं अर्हं व्यवहारसुषुप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥947॥

स्वै-पद में नित रमत हैं, अप्रमाद अधिकाय।
निज गुण सदा प्रकाश है, अतुलबली नमूँ पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अतिजागरूकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥948॥

सकल उपद्रव मिटि गये, जे थे पर के साथ।
निर्भय सदा सुखी भये, वन्दूँ नमि निज माथ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अतिसुस्थिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥949॥

कहै हुवे हो नेम से, परमाराध्य अनादि।
तुम महात्मा जगत में, और कुदेव कुवादि॥

ॐ ह्रीं अर्हं उदितोदितमाहात्म्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥950॥

तत्त्वज्ञान अनुकूल सब, शब्द प्रयोग विचार।
तिसके तुम अध्याय हो, अर्थ प्रकाशन हार॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरुपाधये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥951॥

ना काहू सों जन्म हो, ना काहू सों नाश।
स्वयंसिद्ध बिन परनिमित, स्वयं सरूप प्रकाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं अकृत्रिमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥952॥

अप्रमाण अत्यन्त है, तुम सन्मति परकाश।
तेजरूप उत्सवमई, पाप तिमिर को नाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं अमेयमहिम्ने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥953॥

रागादिक मल को हरैं, तनक नहीं आवास।
महा विशुद्ध अत्यन्त हैं, हरो पाप-अहि-डांस॥

ॐ ह्रीं अर्हं अत्यन्तशुद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥954॥

स्वयंसिद्ध भरतार हो, शिवकामिनि के संग।
रमण भाव स्वै भोग में, मारो अधम अनंग॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धिस्वयंवराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥955॥

विविध प्रकार न धरत हैं, हैं अजन्म अव्यक्त।
सूक्षम सिद्ध समान हैं, स्वयं स्वभाव सुव्यक्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धानुजाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥956॥

मोक्षरूप शुभ वास के, आप मार्ग निरखेद।
भविजन सुलभ गमन करैं, जगतवास को छेद॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धपुरीपान्थाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥957॥

गुण समूह अत्यन्त हैं, कोई न पावै पार।
थकित रहे श्रुतकेवली, निज बल कथन अगार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनंतगुणसमूह जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥958॥

एक अवगाह प्रदेश में, हो अवगाह अनन्त।
पर उपाधि निग्रह कियो, मुख्य प्रधान भनन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धसङ्गोन्मुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥959॥

स्वयंसिद्ध निज वस्तु हो, आगम इन्द्रिय ज्ञान।
कर्तादिक लक्षण नहीं, स्वयं स्वभाव प्रमान॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंसिद्धजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥960॥

हो प्रच्छन्न इन्द्रिय अगम, प्रकट न जाने कोय।
सकल अगुण को लय कियो, निज आतम में खोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धोपगूहकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥961॥

निज गुण करि निज पोषियो, सकल क्षुद्रता त्याग।
पूरण निज पद पाय कर, तिष्ठत हो बड़ भाग॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुष्टाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥962॥

ब्रह्मचर्य पूरण धरैं, स्वैपद रमता धार।
सहस अठारह भेद कर, शील सुभाव सु सार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अष्टादशसहस्त्रशीलेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥963॥

महापुण्य शिवपद कमल, ताके दल विकसान।
मुनिमन भ्रमर रमण सुथल, गन्धानन्द महान॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यसंबलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥964॥

मति-श्रुत-अवधि त्रिज्ञान युत, स्वयंबुद्ध भगवान।
कृतयुग में मुनिव्रत धरो, शिव साधक परधान॥

ॐ ह्रीं अर्हं व्रताग्रयुग्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥965॥

परम शुक्ल शुभ ध्यान में, तुम सेवन हितकार।
सन्त उपासक आपके, कर्म-बन्ध छुटकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमशुक्लध्यानिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥966॥

खारवार इस जलधि को, शीघ्र कियो तुम अन्त।
गोखुरकार उलंघियो, धरो स्व भुज बलवन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं संसारसमुद्रतारकजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥967॥

एक समय में गमन कर, कियो शिवालय वास।
काल अनन्त अचल रहै, मेटो जग भ्रम त्रास॥

ॐ ह्रीं अर्हं क्षेपिष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥968॥

पञ्चाक्षर लघु जाप में, जितना लागे काल।
अन्तिम पाया शुक्ल का, ध्याय वसै जग भाल॥

ॐ ह्रीं अर्हं पञ्चलघ्वक्षरस्थितये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥969 ॥

प्रकृति त्रयोदश शेष हैं, जब तक मोक्ष न होय।
सर्व प्रकृति थिति मेटकैं, पहुँचे शिवपुर सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रयोदशप्रकृतिस्थितिविनाशकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥970 ॥

तेरह विधि चारित्र के, तुम हो पूरण शूर।
निज पुरुषारथ करि लियो, शिवपुर आनन्द पूर॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रयोदशचारित्रपूर्णाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥971 ॥

निज सुख में अन्तर नहीं, पर सों हानि न होय।
स्वस्थ रूप परदेश जिन, तिन पूजत हूँ सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अछेदजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥972 ॥

निज पूजन तें देत हो, शिव सम्पति अधिकाय।
यातें पूजन योग्य हो, पूजूँ मन-वच-काय॥

ॐ ह्रीं अर्हं शिवदातृजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥973 ॥

मोह महा परचण्ड बलि, सका न तुमको जीत।
नमूँ तुम्हें जयवन्त हो, धार स्व उर में प्रीत॥

ॐ ह्रीं अर्हं अजयजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥974 ॥

जग विधान से जजत ही, आप मिले निधि रूप।
तुम समान नहीं और धन, हर दरिद्र दुखकूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं याज्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥975 ॥

लोकोत्तर सम्पद विभव, है सर्वस्व अघाय।
तुमसे अधिक न और है, सुख विभूति शिवराय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनर्घ्यपरिग्रहाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥976 ॥

तुमरो आह्वानन यजन, प्रासुक विधि से योग।
त्रिजग अमौलिक निधि सही, देत परम सुखभोग॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनर्घ्यहेतवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥977 ॥

एक देश मुनिराज हैं, सर्व देश जिनराज।
भव-तन-भोग विरक्तता, निर्ममत्व सुख साज॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमनिष्पृहाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।978।।

पर दुख में दुख हो जहाँ, मोह प्रकृति के द्वार।
दया कहैं तिसको सुमति, सो तुम मोह निवार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अत्यन्तनिर्दयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।979।।

स्वयंबुद्ध भगवान हो, सुर-मुनि पूजन योग।
बिन शिक्षा शिवमार्ग को, साधो हो धर योग॥

ॐ ह्रीं अर्हं अशिष्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।980।।

तुम एकत्व अन्यत्व हो, पर सों नहीं सम्बन्ध।
स्वयंसिद्ध अविरुद्ध हो, नाशो जगत प्रबन्ध॥

ॐ ह्रीं अर्हं परसम्बन्धविनाशकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।981।।

काहू को नहिं यजन करि, गुरु का नहिं उपदेश।
स्वयंबुद्ध स्व-शक्ति हो, राजो शुद्ध हमेश॥

ॐ ह्रीं अर्हं अदीक्ष्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।982।।

तुम त्रिभुवन के पूज्य हो, यजो न काहू और।
स्वहित में रत हो सदा, पर निमित्त को छोर॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभुवनपूज्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।983।।

अरहन्तादि उपासना, मोह उदय सों होय।
स्वयं ज्ञान में लय भये, मोह कर्म को खोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अदीक्षकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।984।।

गौणरूप परिणाम है, मुख ध्रुवता गुणधार।
अक्षय अविनश्वर स्वपद, स्वस्थ सुथिर अविकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।985।।

सूक्षम शुद्ध स्वभाव है, लहै न गणधर पार।
इन्द्र तथा धरणेन्द्र सब, अभिलाषित उरधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अगम्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।986।।

अचल शिवालय के विषैं, टङ्कोत्कीर्ण समान।
सदा विराजो सुखसहित, जगत भ्रमण को हान॥

ॐ ह्रीं अर्हं अगमकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥987॥

रमण योग छद्मस्थ के, नाहिं अलिङ्ग अरूप।
पर प्रवेश बिन शुद्धता, धारत सहज अनूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं अरम्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥988॥

पर-पदार्थ इच्छुक नहीं, इष्टानिष्ट निवार।
सुथिर रहो निज आत्म में, वन्दत हूँ हितधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अरमकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥989॥

जाको पार न पाइये, अवधि रहित अत्यन्त।
सो तुम ज्ञान महान है, आशा राखे सन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञाननिर्भराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥990॥

मुनिजन जिन सेवन करैं, पावैं निजपद सार।
महा शुद्ध उपयोगमय, वरतत हैं सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं महायोगीश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥991॥

भाव शुद्ध परमात्मा, द्रव्य शुद्ध बिन देह।
कर्मवर्गणा नहिं लिपैं, पूजत हूँ धरि नेह॥

ॐ ह्रीं अर्हं द्रव्यशुद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥992॥

पञ्च प्रकार शरीर को, मूल कियो विध्वंश।
स्व प्रदेश में राजते, पर मिलाप नहीं अंश॥

ॐ ह्रीं अर्हं अदेहाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥993॥

जाको फेर न जन्म है, फिर नाहीं संसार।
सो पञ्चमगति शिवमई, पायो तुम निरधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अपुनर्भवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥994॥

सकल इन्द्रियाँ व्यर्थ कर, केवलज्ञान सहाय।
सब द्रव्यनि को ज्ञान है, गुण अनन्त पर्याय॥

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानैकविदे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥995॥

जीव मात्र निजघन सहित, गुणसमूह मणि खान।
अन्य विभाव विभव नहीं, महा शुद्धता जान॥

ॐ ह्रीं अर्हं जीवघनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥996॥

सिद्ध भये प्रसिद्ध तुम, निज पुरुषारथ साध।
महा शुद्ध निज आत्ममय, सदा रहो निरबाध॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥997॥

लोकशिखर पर थिर भये, ज्यों मन्दिर मणिकुम्भ।
निज शरीर अवगाह में, अचल सुथान अलुम्भ॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकाग्रस्थिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥998॥

सहज निरामय भेद बिन, निराबाध निस्संग।
एक रूप सामान्य हो, निज विशेष मई अङ्ग॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्द्वन्द्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥999॥

जे अविभाग प्रछेद हैं, इक गुण के सु अनन्त।
तुम में पूरण गुण सही, धरो अनन्तानन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥1000॥

पर मिलाप नहीं लेश है, स्वप्रदेशमय रूप।
क्षयोपशम ज्ञानी तुम्हें, जानत नहीं स्वरूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं आत्मरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥1001॥

क्षमा आत्म को भाव है, क्रोध कर्म सों घात।
सो तुम कर्म खिपाइयो, क्षमा स्वभाव धरात॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाक्षमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥1002॥

शील सुभाव सु आत्म को, क्षोभ रहित सुखदाय।
निर आकुलता धार है, वन्दूँ तिनके पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाशीलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥1003॥

शशि स्वभाव ज्यों शान्तधर, औरन शान्त कराय।
आप शान्ति पर शान्तिकर, भव दुख दाह मिटाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाशान्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥1004॥

तुम सम को बलवान है, जीत्यो मोह प्रचण्ड।
धरो अनन्त स्ववीर्य को, स्वै पद सुथिर अखण्ड॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तवीर्यात्मकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥1005॥

लोकालोक विलोकियो, संशय बिन इक बार।
खेद रहित निश्चल सुखी, स्वच्छ आरसी सार॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकालोकज्ञाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥1006॥

निरावर्ण स्वै गुण सहित, निजानन्द रस भोग।
अव्यय अविनाशी सदा, अजर अमर शुभ योग॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥1007॥

परम मुनीश्वर ध्यान धर, पावैं निजपद सार।
ज्यों रवि बिम्ब प्रकाशकर, घट-पट सहज निहार॥

ॐ ह्रीं अर्हं ध्येयगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥1008॥

कवलाहारी कहत है, महामूढ़ मतिमन्द।
अशन असाता पीर बिन, आप भये सुखकन्द॥

ॐ ह्रीं अर्हं अशनदग्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥1009॥

लोक शीश छवि देत हो, धरो प्रकाश अनूप।
बुधजन आदर जोग हो, सहज अकम्प सरूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकमणये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥1010॥

महा गुणन की रास हो, लोकालोक पर्यन्त।
सुर-मुनि पार न पावते, तुम्हैं नमैं नित सन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तगुणप्राप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥1011॥

परम सुगुण परिपूर्ण हो, मलिन भाव नहीं लेश।
जगजीवन आराध्य हो, हम तुम यही विशेष॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥1012॥

केवल ऋद्धि महान है, अतिशय युत तप सार।
सो तुम पायो सहज ही, मुनिगण वन्दनहार॥

ॐ ह्रीं अर्हं महर्षये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥1013॥

भूत भविष्यत काल को, कभी न होवे अन्त।
नितप्रति शिवपद पायकर, होत अनन्तानन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥1014॥

निर्भय निर-आकुलित हो, स्वयं स्वस्थ निरखेद।
काहू विध घबरात नहीं, स्वै आनन्द अभेद॥

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षोभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥1015॥

जे गुण-गुणी सुभेद करि, सोई जड़मति जान।
निज गुण-गुणी सु एकता, स्वयंबुद्ध भगवान॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंबुद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥1016॥

निरावरण निज ज्ञान में, सर्व स्पष्ट दिखाय।
संशय बिन नहिं भरम है, सुथिर रहो सुख पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥1017॥

राग-द्वेष के अंश में, मत्सर भाव कहात।
सो तुम नासो मूल ही, रहै कहाँ सों पात॥

ॐ ह्रीं अर्हं वीतमत्सराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥1018॥

अणुवत लोकालोक है, जाके ज्ञान मँझार।
सो तुम ज्ञान अथाह है, वन्दूँ मैं चित धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तानन्तज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥1019॥

हस्तरेख सम देख हो, लोकालोक सरूप।
सो अनन्त दर्शन धरो, नमत मिटै भ्रम कूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तानन्तदर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥1020॥

तीन लोक का पूज्यपन, प्रकट कहै दिखलाय।
तीन लोक शिरवास है, लोकोत्तम सुखदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकशिखरवासिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥1021॥

निजपद में लवलीन हैं, निज रस स्वाद अघाय।
पर सों यह रस गुप्त है, कोटि यत्न नहीं पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुगुप्तात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥1022॥

कर्म प्रकृति को मूल नहीं, द्रव्यरूप या भाव।
महा स्वच्छ निर्मल दिपै, ज्यों रवि मेघ अभाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूतात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥1023॥

हीन अभाव न शक्ति है, कर्म बन्ध को नाश।
उदय भये तुम गुण सकल, महा विभव की राश॥

ॐ ह्रीं अर्हं महोदयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥1024॥

पापरूप दुख नाशियो, मोक्षरूप सुख रास।
दासन प्रति मङ्गलकरण, स्वयं सन्त है दास॥

ॐ ह्रीं अर्हं महामङ्गलात्मकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥1025॥

कहैं कहाँ लों तुम सुगुण, अंशमात्र नहीं अन्त।
मङ्गलीक तुम नाम ही, जानि भजै नित सन्त॥

ॐ ह्रीं परंब्रह्मणे अनन्तानन्तज्ञानशक्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

जाप - ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा नमः। (108 बार)

जयमाला

होनहार तुम गुण कथन, जीभ द्वार नहिं होय।
काष्ठ पांवसैं अनल थल, नाप सकै नहिं कोय ॥1॥

सूक्षम शुद्ध-स्वरूप का, कहना है व्यवहार।
सो व्यवहारातीत हैं, यातें हम लाचार ॥2॥

पै जो हम कुछ कहत हैं, शान्ति हेत भगवन्त।
बार-बार थुति करन में, नहिं पुनरुक्त भनन्त ॥3॥

पद्धरि छन्द

जय स्वयं शक्ति आधार योग, जय स्वयं स्वस्थ आनन्द भोग।
जय स्वयं विकाश अभास भास, जय स्वयं सिद्ध निजपद निवास॥4॥

जय स्वयं बुद्ध सङ्कल्प टार , जय स्वयं शुद्ध रागादि जार।
जय स्वयं स्वगुण आधार धार, जय स्वयं सुखी अक्षय अपार॥5॥

जय स्वयं चतुष्टय राजमान, जय स्वयं अनन्त सुगुण निधान।

जय स्वयं स्वस्थ सुस्थिर अयोग, जय स्वयं स्वरूप मनोग योग ॥6 ॥

जय स्वयं स्वच्छ निज ज्ञान पूर, जय स्वयं वीर्य रिपु वज्र चूर।
जय महामुनिन आराध्य जान, जय निपुणमती तत्त्वज्ञ मान॥ 7 ॥

जय सन्तन मन आनन्दकार, जय सज्जन चित वल्लभ अपार।
जय सुरगण गावत हर्ष पाय, जय कवि यशकथन न कर अघाय ॥8 ॥

तुम महातीर्थ भव तरण हेत, तुम महाधर्म उद्धार देत।
तुम महामन्त्र विष विघ्न जार, अघ रोग रसायन कहो सार ॥9 ॥

तुम महाशास्त्र को मूल ज्ञेय, तुम महातत्त्व हो उपादेय।
तिहुं लोक महामङ्गल सु रूप, लोकत्रय सर्वोत्तम अनूप ॥10 ॥

तिहुं लोक शरण अघहर महान, भवि देत परमपद सुख निधान।
संसार महासागर अथाह, नित जन्म-मरण धारा प्रवाह ॥11 ॥
सो काल अनन्त दियो बिताय, तामें झकोर दुख रूप खाय।
मो दुखी देख उर दया आन, इम पार करो कर ग्रहण पान ॥12 ॥

तुम ही हो इस पुरुषार्थ जोग, अरु है अशक्त करि विषय रोग।
सुर-नर-पशु दास कहें अनन्त, इनमें से भी इक जान सन्त ॥13 ॥

जय विघन जलधि जल, हनन पवनबल, सकल पाप मल जारन हो।
जय मोह उपल हन, वज्र असल दुख, अनल ताप जल कारन हो ॥
ज्यूँ पङ्गु चढ़ै गिर, गूङ्ग भरे सुर, अभुज सिन्धु तर कष्ट भरे।
त्यों तुम थुति काम, महा लज ठाम, सु अन्त सन्त परणाम करे ॥

ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्विंशत्यधिकसहस्त्रगुणसंयुक्तसिद्धेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन लोक चूड़ामणि, सदा रहो जयवन्त।
विघ्नहरण मङ्गलकरन, तुम्हैं नमें नित सन्त॥

इत्याशीर्वादः